मुद्रक— व्यवस्थापक
माहेश्वरी प्रिंटिंग प्रेस
जोशी बिल्डिंग
बीकानेर

प्रकाशक— डॉ॰ पुरुषोत्तमलाल मेनारिया
निदेशक, राजस्थान साहित्य अकादमी
(संगम), उदयपुर

मूल्य— साढ़े छः रुपये

प्रकाशन— अप्रेल, १९६६

राजस्थानी वात-साहित्य

निदेशकीय वक्तव्य

नवीन पुरातात्विक उत्खनन के परिणामरूप सिद्ध हुआ है कि वैदिक युग की सरस्वती नदी राजस्थान में प्रवाहित होती थी और इसी के किनारे वैदिक ऋषियों के अनेक आश्रम अवस्थित थे। तदनुसार ऋग्वेद के स्तुति-परक सूक्तों में उपलब्ध संसार की प्राचीनतम कथाओं को राजस्थान की देन कहा जा सकता है। किसी समय भारतवर्ष कथा-साहित्य के प्रणयन में अग्रणी रहा जिसके प्रमाण प्राचीन वैदिक काल से मध्यकाल तक उपलब्ध हो जाते हैं। वैदिक आख्यानों के साथ ही केनोपनिषद में देवताओं की शक्तिपरीक्षा कठोपनिषद में नचिकेता का उत्साह छांदोग्य उपनिषद में सत्यकाम और जानश्रुवा आदि की कथाएं, वृहदारण्यक में गार्गी और याग्यवल्क्य की कथा, तैतीरीय में आश्विनो की कथा तथा मण्डुकोपनिषद में महाशल्य, शौनर और अंगिरस की कथाओं का समावेश हुआ है। रामायण और महाभारत में अनेक कथाओं का संयोजन हुआ है। जातक में भगवान बुद्ध से सम्बद्ध ५७७ कथाएं हैं। प्राकृत और अपभ्रंश में रचित अनेक कथाएं यथा लीलाबाई कहा, पउमसिरिचरिउ श्री चन्द का कथा-कोश, भविसयतकहा और समाराइच्यकहा आदि राजस्थान की देन हैं।

गुणढ्य द्वारा प्रथम शती ई० में लिखित वृहत्-कथा-संग्रह अप्राप्य है किन्तु वृहत-कथा-मञ्जरी और कथा-सरित्-सागर में इसके प्रमाण उपलब्ध हो जाते हैं। हितोपदेश, शुक-सप्तति, सिंहासन-द्वात्रिंशिका, वैताल पंचविंशतिका पंचतंत्र और कथा-सरित्-सागर आदि का विश्व-कथा साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। संस्कृत कथा साहित्य का प्रभाव एशिया और योरोप के अनेक देशों के कथा-साहित्य पर स्पष्टरूपेण लक्षित होता है।

प्राचीनकाल में सम्पूर्ण भारतवर्ष विश्व-कथा साहित्य में अग्रणी रहा तो मध्यकाल में इसका प्रदेश राजस्थान भारतीय कथा साहित्य में अग्रणी रहा है। राजस्थानी भाषा में अनेक विषयों और शैलियों से युक्त छोटी बड़ी हजारों ही कथाएं उपलब्ध होती हैं। मौलिक कथाओं के साथ ही संस्कृत और फारसी आदि कथाओं के अनेक अनुवाद भी मिल जाते हैं। भारतीय कथा-साहित्य के अनेक प्रतिनिधि रूप आज भी राजस्थानी लोक कथाओं

के रूप में जनता में बड़े चाव से कहे और सुने जाते हैं।

हमारे साहित्य में मौलिकता पर बल दिया जाता है और मौलिकता में भी शैलीगत मौलिकता का महत्व सर्वोपरि होता है। आज अनेक भारतीय कथाओं में पश्चिमी शैली का अनुकरण किया जा रहा है। यह अनुकरण भी इतने विलम्ब से किया जाता है कि योरोप और अमेरिका में नई शैलियों के प्रचलित हो जाने के कारण इसका कोई महत्व नहीं रहता। वैज्ञानिक-आविष्कारों ने विश्व के अति दूरस्थ प्रदेशों को भी बहुत समीप ला दिया है और ऐसी अवस्था में हम अपने देश को मौलिक शैलियों के माध्यम से ही समादृत कर सकते हैं।

सुविस्तृत राजस्थानी कथा-साहित्य के सर्वांगीण सर्वेक्षण, संकलन, सम्पादन, अध्ययन और प्रकाशन-सम्बन्धी कार्यों की अपेक्षा अनेक वर्षों से अनुभव हो रही है। इस दिशा में अनेक स्फुट प्रयत्न हुए हैं जिनसे इस कार्य की महत्ता का बोध होता है। प्रसन्नता और सन्तोष का विषय है कि राजस्थान साहित्य अकादमी की ओर से डॉ० पूनम दईया का "राजस्थानी वात साहित्य" विषयक एक विशिष्ट अध्ययन प्रकाशित किया जा रहा है। अपने अध्ययन में डॉ० दईया ने राजस्थानी वात साहित्य का परिचय समुचित रूप में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। इस विषय में दो अन्य उल्लेखनीय प्रयत्न क्रमशः डॉ० मनोहर शर्मा (राजस्थान विश्वविद्यालय) और डॉ० ओमकुमारी गहलोत (जोधपुर विश्वविद्यालय) द्वारा अब तक हो चुके हैं। डॉ० दईया ने राजस्थानी वात साहित्य के प्रारम्भिक परिचय के साथ ही राजस्थानी वातों के प्रकार, कलातत्व, राजस्थानी वातों में चरित्र-चित्रण, राजस्थानी वातों में वातावरण और राजस्थानी वातों की भाषा-शैली आदि के सम्बन्ध में अध्ययनपूर्ण सामग्री दी है। तदर्थ लेखक का प्रयत्न प्रशंसनीय है।

आशा है कि डॉ० दईया एतद्विषयक अध्ययन को चालू रखेंगे और निकट भविष्य में ही साहित्य जगत को इस विषय में और अधिक लाभान्वित करेंगे।

डॉ० पुरुषोत्तमलाल मेनारिया

राजस्थान साहित्य अकादमी, एम० ए० (पी-एच० डी०) साहित्यरत्न

निदेशक

राजस्थानी वात साहित्य

डॉ० पूनम दईया

अनुक्रम

अध्याय/१

विषय-प्रवेश

राजस्थानी-साहित्य— पद्य और गद्य

राजस्थान का नाम लेते ही उसकी वीर भूमि अपने शूरवीरों का चित्र हमारे सामने उपस्थित कर देती है। जिन शूरवीरों ने इस धरती की मर्यादा रखने के लिए अपने प्राणों की कभी परवाह न की जिनकी रमणियों ने हँसते-हँसते जौहर की ज्वाला में अपना स्वर्ण सा तन अर्पित कर दिया— ऐसे इस प्रान्त का नाम लेते ही हृदय में एक उमंग, एक जोश की लहर उमड़ पड़ती है। विद्वान इतिहासकार कर्नल टॉड के शब्दों में "There is not a petty state in Rajasthan that has not had its Thermopyle and scarcely a city that has not produced its Leonides."[1]

राजस्थान का इतिहास वीरता का इतिहास है— इसमें लेश मात्र भी संदेह नहीं— परन्तु साथ-साथ इस प्रान्त का साहित्य भी इसके गौरव से कम नहीं। डॉ॰ मोतीलाल मेनारिया के शब्दों में "जितना महान् यह प्रान्त है और जितनी अधिक इसकी ख्याति है, उसी के अनुरूप और अत्युत्कृष्ट और उच्चकोटि का इसका साहित्य भी है।"[2]

यह साहित्य जिस भाषा में लिखा गया है, उसे डिंगल कहते हैं। डिंगल राजस्थान की साहित्यिक भाषा का नाम है। "साहित्य किसी देश या जाति के काल विशेष के विचारों और भावों का प्रतिबिंब होता है"[3] यह उक्ति डिंगल साहित्य पर भी ठीक-ठीक घटती है। राजस्थान का सामा-

(१) राजस्थान : कर्नल टॉड

(२) राजस्थानी भाषा और साहित्य : डॉ॰ मोतीलाल मेनारिया : पृ॰ २

साहित्य की महत्ता को खुले कंठ से स्वीकार किया है। 'राजस्थानी वीरों की भाषा है। राजस्थानी का साहित्य वीर-साहित्य है। संसार के साहित्यों में उसका स्थान निराला है। वर्तमानकाल में भारतीय नवयुवकों के लिए तो उसका अध्ययन अनिवार्य होना चाहिए।"[1] भारतवर्ष में जितनी भी प्राचीन कान्तियां हुई उनका एवं स्वतन्त्रता संग्राम का विस्तार सहित वर्णन सिवाय डिंगल साहित्य के अन्यत्र दृष्टिगोचर नहीं होता। श्री मेनारिया के शब्दों में "मध्य युगीन भारत का सच्चा इतिहास लिखने के लिए डिंगल-साहित्य की छान-बीन आवश्यक है।"[2]

वीरों के देश राजस्थान की साहित्यिक भाषा डिंगल की इतिहास विषयक सामग्री पद्य और गद्य दोनों रूपों में प्राप्य है।

राजस्थान में पद्य लिखने की परम्परा बहुत प्राचीन काल से है। इसकी यह पद्यात्मक सामग्री क्रमबद्ध काव्य रूप में और फुटकर कविताओं के रूप में पाई जाती है। डिंगल साहित्य अधिकांशतः काव्य रूप में ही लिखा गया है। पद्य साहित्य का आरम्भ १२वीं शताब्दी से हुआ। [3] चूं कि गद्य साहित्य का विकास देर से हुआ अतः इस समय सारा साहित्य पद्य में ही लिखा गया। 'राजस्थानी में चौदहवीं शताब्दी से गद्य साहित्य बराबर मिलता है और प्रभूत परिमाण में मिलता है"।[4] इस क्रमबद्ध साहित्य के ग्रन्थों के नाम अधिकांश तौर पर या तो चरित्रों के नाम के साथ रासो प्रकास, विलास, रूपक और वचनिका या व्यवहृत छन्दों के आधार पर रखे गये हैं। जैसे— खुमाणरासो, रायमल रासो, रतन रासो; राजप्रकास, सूरजप्रकास, भीम प्रकास आदि, राज-रूपक, गोगा दे रूपक, राव रिणमल री रूपक, रतन रूपक आदि, अचलदास खीची री वचनिका, राठौड़ रतनसी री महेसदासोत री वचनिका आदि।

इसके अलावा छंद के आधार पर रखे गये ग्रन्थों के नाम - मामेजी चहुवाण री नीसाणी राव सगारजी री नीसाणी, नीसाणी वीरमाणीरी आदि, सोढो रा गुणझूलणा, राव सुरमाण देवडे रा झूलणा, अमरसिंह जी रा झूलणा,

---

(१) राजस्थानी-साहित्य एक परिचय — प्रो० नरोत्तमदास स्वामी — पृ० १६ की टिप्पणी से उद्धृत।
(२) राजस्थानी भाषा और साहित्य— डॉ० मोतीलाल मेनारिया
(३) राजस्थानी-साहित्य एक परिचय प्रो० नरोत्तमदास स्वामी पृ० २२
(४) „ „ „ „ पृ० २३

आदि; राजकुमार अनोपसिंह जी री वेल, राठौड़ देईदास जेतावत री वेल आदि; बीदावत करनसेण हिमतसिंघोत री झमाल, झमाल जोरसिंघ चपावत री आदि; गीत— सीघला रा गीत, पँवारां रा गीत आदि; महाराजा अभैसिंह जी रा कवित आदि; पाबूजी रा दूहा, राव अमरसिंहजी रा दूहा, हमीर राठौड रा दूहा, ढोला-मारू रा दूहा आदि।

डिंगल में गीत छन्द का भी प्रयोग हुआ है। प० चन्द्रधर शर्मा गुलेरी लिखित "चारण" नामक लेख मे "अनर्घराव" से एक उदाहरण मिलता है। उससे पता चलता है कि गीत और ख्यात नवी शताब्दी मे भी प्राप्त थे :—

"चर्चाभिश्चारणानां क्षितिरमणपरां प्राप्य सम्मोदलीला—
माकीर्तेः सौविदल्ला नव गणय कवि प्रात (?) वाणीविलासात्
गीतं ख्यातं च नाम्ना किमपि रघुपतेरद्य यावत्प्रसादा—
द्वाल्मीकेरेव धात्री धवलयति यशोदामुद्रया रामभद्रः।"[1]
—नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग १ पृ० २२६

"डिंगल काव्य मे सबसे अधिक प्रयोग दोहा-छप्पय का हुआ है"। 'उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि सादृश्य मूलक अलकार का प्रयोग, अधिकतौर पर वयण-सगाई का प्रयोग'। "डिंगल काव्य मे वीर-रस का प्राधान्य है। शृगार, शान्त आदि अन्य रसों का भी निरूपण मिलता है, पर अपेक्षा कृत कम"।[2]
"राजस्थानी-गद्य के प्रामाणिक प्राचीन उदाहरण विक्रम की चौदहवीं शताब्दी से मिलने लगते है"।[3] डॉ० सरनामसिंह 'अरुण' ने भी स्वामीजी का समर्थन किया है।[4] गद्यात्मक सामग्री अधिकतर ख्यात, वात, विगत और पीढ़ी-वंशावलियों के रूप मे प्रचलित है।

ख्यात इतिहास और वंश सम्बन्धी ग्रन्थो को कहते हैं। 'ख्यात' संस्कृत शब्द 'ख्याति' का रूपान्तर है। राजस्थान में यह 'इतिहास' के रूप में प्रयुक्त होता

(१) राजस्थान के सांस्कृतिक उपाख्यान— डॉ० कन्हैयालाल सहल — पृ० ५ और ६
(२) डिंगल में वीररस— सम्पादक मोतीलाल मेनारिया— पृ० २१, २३, और २४
(३) राजस्थान गद्य का ऐतिहासिक विकास— डॉ० शिवस्वरूप शर्मा अचल पृ० ३२
(४) राजस्थान-साहित्य परम्परा और प्रगति—डॉ०सरनामसिंह 'अरुण' पृ०४०

है"।[1] इन ख्यातों मे मुंहणोत नैणसी री ख्यात, जोधपुर राठौड़ों री ख्यात, बीकानेर रा राठोड़ाँ री ख्यात, सीसोदियाँ री ख्यात आदि बहुत प्रसिद्ध है।

"राजस्थानी भाषा मे 'बात' कहानी को कहते हैं। यह संस्कृत शब्द 'वार्ता' से बना है"।[2] "बात-साहित्य तो बहुत विस्तृत है। यह बातें ऐतिहासिक, धार्मिक, पौराणिक, नैतिक आदि विविध विषयों पर लिखी गई हैं और कोई-कोई साहित्यिक उत्कर्ष के दृष्टिकोण से भी बहुत मार्मिक तथा सुन्दर बन पडी हैं"।[3] इन बातों में राणें उदेसिंघ री बात, हाडै सूरजमल री बात, राणा कुंभाचितमरमिया री बात, राव बीकेजी री बात, पाबूजी री बात, राव लूणकरण जी री बात, जैसलमेरी बात, दहियारी बात, आदि आदि। सबसे अधिक बातें मारवाड के कविराज बांकीदास ने लिखी है। "इनकी लिखी बातों की संख्या लगभग २८०० है"।[4] जो अभी तक अमुद्रित है।

इसके अलावा ताम्रपत्र, पट्टे, परवाने आदि के द्वारा भी प्राचीन राजस्थानी-गद्य के स्वरूप पर अच्छा प्रभाव पडा है। उत्तरोत्तर विकास को प्राप्त करता हुआ राजस्थानी-गद्य विक्रम संवत् १६०० तक अपने को निभाता रहा। "पर इसके अनन्तर जब से भारत मे राष्ट्रीयता की लहर उठी और हिन्दी को राष्ट्रभाषा का पद दिया जाने लगा तब से प्रान्तीय भाषा के मोह को छोड़कर राजस्थान के लेखकों ने हिन्दी गद्य मे लिखना शुरू कर दिया"।[5] परिणाम यह हुआ कि इसके बाद शुद्ध राजस्थानी गद्य-साहित्य का विकसित होना रुक गया और फिर गद्य साहित्य का निर्माण उस समय की प्रचलित हिन्दी भाषा मे होने लगा।

लोक-कथाओं की प्राचीन परम्परा

बातें हमारे जन-जीवन से सम्बन्धित है। आरंभिक बातों को लोक-कथाओं की संज्ञा दी गई है। इन लोक-कथाओं की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। सर्व प्रथम वैदिक संहिताओं मे हमे कथाओं का उद्गम दिखाई पड़ता है। ऋग्वेद में बहुत से ऐसे सूक्त उपलब्ध होते है, जिन मे दो या तीन पात्रों मे कथोपकथन पाया जाता है। इन सूक्तों को संवाद सूक्त कहते हैं। ऋग्वेद मे ऋषि शुनःशेप का

(१) राजस्थानी भाषा और साहित्य — डॉ० मोतीलाल मेनारिया — पृ० ६४
(२) राजस्थानी भाषा और साहित्य — डॉ० मोतीलाल मेनारिया — पृ० ६४
(३) राजस्थानी साहित्य की रूपरेखा — डॉ० मोतीलाल मेनारिया — पृ० १८०
(४) राजस्थानी साहित्य की रूप रेखा — डॉ० मोतीलाल मेनारिया — पृ० १८०
(५) " "

प्रसिद्ध आख्यान उपलब्ध होता है।[1] अपाला आत्रेयी के आदर्श नारी चरित्र का चित्रण हमें सर्व प्रथम इसी वेद में देखने को मिलता है।[2] च्यवन भार्गव और सुकन्या मानवी की कथा भी बड़ी सुन्दर रीति से इसमें वर्णित है।[3]

ब्राह्मण ग्रन्थों में भी अनेक कथाएं उपलब्ध होती हैं। शतपथ ब्राह्मण में पुरूरवा और उर्वशी की कथा नितान्त प्रसिद्ध है।[4] इसी कथा को लेकर महाकवि कालिदास ने "विक्रमोर्वशी" नाटक की रचना की है। ताण्ड्य ब्राह्मण में भी च्यवन भार्गव और सुकन्या मानवी की कथा उपलब्ध होती है।[5] ऐतरेय ब्राह्मण में शुनःशेप का आख्यान वर्णित है।[6] शाट्यायन ब्राह्मण में महर्षि वृश नामक पुरोहित के वैदिक कालीन महत्त्व का प्रतिपादन किया गया है।[7] इसी प्रकार शतपथ ब्राह्मण में दध्यङ् आथर्वण की कथा का वर्णन है जिसका लोकप्रिय पौराणिक नाम ऋषि दधीचि है। इन्हीं की हड्डी को लेकर वज्र का निर्माण किया गया था जिससे इन्द्र ने वृत्र का वध किया था।

ब्राह्मण ग्रन्थों के पश्चात् उपनिषदों में भी अनेक कथाओं का उल्लेख पाया जाता है। नचिकेता की सुप्रसिद्ध कथा कठोपनिषद् का प्रधान वर्ण्य विषय है जिसने अपनी विलक्षण प्रतिभा के द्वारा यम से अमर बनने का साधन पूछा था। अग्नि और यक्ष की कथा का केनोपनिषद् में वर्णन पाया जाता है। वैदिक संहिता एवं उपनिषदों में जिन कथाओं की केवल सूचना मात्र मिलती है उनका विस्तृत वर्णन "बृहद्देवता" में और षड्गुरुशिष्य रचित "कात्यायन सर्वानुक्रमणी" की 'वेदार्थ दीपिका' टीका में किया गया है।

संस्कृत में कथाओं का सबसे प्राचीन ग्रन्थ 'बृहत्कथा' है जिसके लेखक गुणाढ्य थे। यह ग्रन्थ पैशाची भाषा में लिखा गया था जो आज उपलब्ध नहीं है। बृहत्कथा संस्कृत कथाकारों के लिए उपजीव्य ग्रन्थ रहा है। डॉ० बूलर के अनुसार इसकी रचना ईसा की दूसरी शताब्दी में हुई थी। इस ग्रन्थ के तीन अनुवाद

---

(१) ऋग्वेद—१ : ५४ : १०
(२) ऋग्वेद—८ : ९१ : १
(३) ऋग्वेद—१० : ६१ : ८
(४) शतपथ ब्राह्मण ११ : ५ : १
(५) ताण्ड्य ब्राह्मण १४ : ६ : १०
(६) ऐतरेय ब्राह्मण ७ : ३
(७) शाट्यायन ब्राह्मण ३ : ६

अधिक कथाओं का एकत्र संकलन बड़े ही महत्व की वस्तु है।
जनमन के अनुरंजन में लोक-कथाओं—वातों—का प्रधान स्थान रहा है। यही कारण है कि ये कथायें हमारे जीवन का अंग चिरकाल से बन गई है। इनकी प्राचीनता पर ऊपर प्रकाश डाला गया है कि वैदिक काल से लेकर आजतक इनकी धारा अक्षुण्ण रीति से प्रवाहित होती आरही है।

वात का स्वरूप

वात जिसे हिन्दी मे कहानी कहकर सम्बोधित किया जाता है—का सम्बन्ध मनुष्य की रागात्मक प्रवृत्ति से है। मनुष्य जब से पैदा हुआ है तभी से ही वात कहने और सुनने की यह परम्परा चली आ रही है। वात का आरम्भ कब हुआ और यह किस रूप मे शुरू की गयी अथवा सर्व प्रथम इसका रूप क्याथा इस विषय मे अभी तक कोई भी विद्वान् पूर्णतया अपना मत नहीं दे सका है। श्री सौभाग्यसिंहजी शेखावत के शब्दों में, "राजा से रंक, निर्धन से धनी और पंडित से अपंडित तक समान रूप से जिन रचनाओं ने कौतूहल उत्पन्न कर सम्मान प्राप्त किया, उन रचनाओं–वातों– के लेखकों का आज प्रयत्न करने पर भी नाम–धाम का पता लगाना संभव नहीं है ऐसी दशा मे यह कहना कठिन है कि इन कहानियों का जन्म कब हुआ? समय पर आलेख-बद्ध न होने के कारण इन के रचना काल, रचना स्थान रचनाकार और रचना काल की भाषा पर भी विचार नही किया जा सकता। यह तो केवल जन निधि है जो जन कंठो पर अनुप्राणित है"।[1]

वात–कहानी– साहित्य का एक अंग है। साहित्य सर्जना के लिए रागात्मक प्रवृत्ति ही मूल रूप मे विद्यमान रहती है "कहानी में मानव की औत्सुक्यवृत्ति को मनोरंजनात्मक शान्ति मिलती है। × × × × संक्षेप मे कहानी का बीज-बिन्दु मानव के भावना क्षेत्र की जिज्ञासा एवं कुतूहल का निकटतम सम्बन्धी है"।[2]

मनुष्य जब अपनी आदिम अवस्था में था तो उसे अपने विषय मे कुछभी ज्ञान नहीं था, किन्तु धीरे धीरे ज्यों ज्यों मनुष्य विकास की ओर उन्मुख होता गया उसका ज्ञान भी वृद्धि को प्राप्त करता गया। उसने अपने मस्तिष्क के

---

(१) राजस्थानी कहानी भाग १ स० सौभाग्यसिंहजी शेखावत, पृ० १ और २
(२) राजस्थानी गद्य साहित्य का ऐतिहासिक विकास शिवस्वरूप 'अचल' पृ० १४६

द्वारा प्रकृति को समझा। डा० अचल ने अपने शोध प्रबन्ध मे इस अवस्था को चार भागों मे विभाजित किया है—१. प्रकृति और आदि मानव का सम्पर्क। २. उसके द्वारा प्रकृति में देवत्व और आत्मतत्व का आरोप। ३. प्रकृति मे परा प्रकृति की अवधारणा। ४. मानव प्रकृति और परा-प्रकृति मे पारस्परिक सम्पर्क तथा कार्य-कारण साम्य, अंश अंशी की कल्पना।[1] इस प्रकार मनुष्य पहले प्रकृति से डरा होगा और फिर उसने प्रकृति के अंगो को डर कर देवता के रूप मे स्वीकार किया, परन्तु जब धीरे-धीरे उसके ज्ञान का विकास हुआ तो वह प्रकृति के रहस्य को समझने लगा और अपनी स्वय की शक्ति को समझा। जब उसे अपनी असीम शक्ति का आभास हो गया तो उसे कार्य-कारण का ज्ञान हुआ।

उस मनुष्य का ज्ञान उसकी क्षमता, योग्यता के अनुसार विभाजित हो गया। जिनका मस्तिष्क उवराशक्ति से युक्त था उसने प्रकृति को पहले समझा, ज्ञान प्राप्त किया और अपने से कम ज्ञान प्राप्त मनुष्यो को ज्ञान दिया और ऋषि-महर्षि कहलाया। इन ऋषियों आदि ने समाज की व्यवस्था को कायम किया। ये विशिष्ठ ज्ञानी श्रद्धा और भय के द्वारा समाज की व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने लगे। अपने साधारण ज्ञान के द्वारा नैतिक एव मनोरंजन के क्षेत्र को कायम किया गया।

ये सब अवस्थायें हमे कहानी के द्वारा ही प्राप्त होती हैं। 'वैदिककाल, उपनिषद्काल, पौराणिक काल, रामायण तथा महाभारत काल सभी में कहानियों का प्रमुत्व रहा है।'[2] इन कालों की सभी घटनाओं को हम कहानीबद्ध रूप मे देखते हैं।

भारत के हरएक प्रान्त मे इस बात—कहानी का रूप उसकी लोक-भाषा मे प्राप्त करते हैं चाहे वह उपदेश, धर्म, नैतिकता की कहानी के रूप मे हो, चाहे सभ्यता एव संस्कृति के रूप मे हो।

राजस्थान के अन्दर भी इसी प्रकार यह क्रम चल रहा है। यहां के राजनीतिक व्यवस्था, आदर्श, धार्मिक अवस्था, सामाजिक अवस्था, यहां का [illegible]-व्यवहार, संस्कृति, सभ्यता सभी का इन बातों [illegible] [illegible]हीं के

(१)

(२)

राजस्थानी कहानियों का चिरकाल से सञ्चित वृहत् भण्डार है।" [1]

यद्यपि वात कहने और सुनने की प्रथा बहुत प्राचीन है फिर भी वात के प्राचीनतम उदाहरण हमें प्राप्त होते हैं। "कहानी के प्राचीनतम उदाहरण विक्रमाब्द की १४वीं शताब्दी से ही मिलने लगते हैं किन्तु प्रचुर परिमाण में उपलब्ध होने वाली अधिकांश कहानियां सोलहवीं शताब्दी के प्रारंभ में लिखी जाने लगी थी।"[2] डा० शिवस्वरूप अग्रवाल के शब्दों में वातों के सग्रहों के लेखक एवं लेखन समय का उल्लेख नहीं मिलता इसीलिए इनका लिपिकाल निश्चित नहीं किया जा सकता फिर भी यह कहा जा सकता है कि अठारहवीं शताब्दी से पूर्व के ऐसे प्रयास अब उपलब्ध नहीं है।"[3] एक और वात का उदाहरण हमारे पास में श्री मोतीलाल मेनारिया के "राजस्थानी भाषा और साहित्य" से प्राप्त है यह सं० १८०० का उदाहरण है "पछै बामण सीदो लैन तलाव ऊपर रोटी करवा बैठो। जठै तलाव री तीर एक मेढक आयो। आवे न बामण धी कही। देवता तोहे तो मैं अठे कही नहीं देख्यो तू कठ जाऊ है। जदी बामण कही हूं उजीण रहो छू ने गयाजी जाऊ छूं।" प्राचीन वार्ता (स० १८००)[4]

श्री अगरचन्द नाहटा ने अपने निबन्ध 'राजस्थानी वाता का सग्रह एवं प्रकाशन' में कहा है, "इनवातो का लेखन भी १७ वी शताब्दी से होने लगा था।"[5] इस प्रकार हर एक लेखक ने अपनी अपनी सूझ के अनुसार वातो के प्रारंभिक काल का समय निश्चित किया है। काल निर्धारण के समय राजस्थानी विद्वान एक मत नहीं हैं।

कहानी-वात की शुरूवात चाहे कभी से हुई हो किन्तु मानव का आकर्षण कहानी के प्रति जन्मजात है और मृत्यु पर्यन्त रहता है। राजस्थानी के कहानी साहित्य के विषय में श्री नरोत्तमदासजी स्वामी का कथन, "राजस्थान का कहानी साहित्य बहुत समृद्ध है उसमें सभी प्रकार की कहानियां हैं, धर्म को

---

(१) 'राजस्थान-भारती' 'राजस्थानी का वात-साहित्य'—श्री रावत सारस्वत एम० ए० एल-एल० बी० ० स० १५

(२) राजस्थान भारती' 'राजस्थानी का वात-साहित्य' — एम० ए० एल-एल० बी० पृ० स०

(३) 'राजस्थानी गद्य का ... ४

(४) 'राजस्थानी भा

(५) 'वरदा' ...

ग्रौर नीति की, वीरता की ग्रौर प्रेम की, हास्य की ग्रौर करुणा की, राजा की ग्रौर प्रजा की, देवताग्रों की ग्रौर भूतों की चोरों की ग्रौर बारोठियों की ग्रादर्शवादी ग्रौर यथार्थवादी सभी प्रकार की हजारों कहानियां उसमें विद्यमान हैं। संस्कृत के कहानी ग्रन्थों जैसे सिंहासन बत्तीसी, वैताल पच्चीसी ग्रादि के ग्रनेकों ग्रनुवाद भी किए गये हैं।"[1]

बात ग्रारम्भ करने का ढंग

राजस्थान में बात को ग्रारम्भ करने का ढंग ग्रपनी विशेषता रखता है। राजस्थानी बातों में जितना ग्रानन्द सुनने में ग्राता है उतना लिपिबद्ध बातों के पढ़ने में नहीं। इसका प्रमुख कारण यह है कि जिस बात को कहने वाला जिस ढंग से कहेगा हम उसको उसी ढंग से ग्रौर उन्हीं शब्दों में लिपिबद्ध नहीं कर सकते—कुछ न कुछ फर्क तो ग्रवश्य ही ग्रायेगा। और फर्क ग्राते ही उसका ग्रानन्द चला जाता है। एक ग्रौर विशेषता इन बातों की है कि इसमें कहानी सुनने वाले हुंकारा देते रहते हैं—इसके दो प्रयोजन हैं एक तो यह कि सुनने वाला उस बात के प्रति सजग है ग्रौर दूसरा यह कि सुनाने वाला भी इससे भिज्ञ रहता है कि उसका कहना निरर्थक नहीं जा रहा है। ग्रतएव बात कहने में ग्रौर हुंकारा देना इसकी विशेषता है। प्रो० नरोत्तमदास जी के शब्दों में 'कहानी का श्रवण जीवन का एक बड़ा मनोहर विनोद है। बचपन में यह ग्राकर्षण विशेष तीव्र होता है—दादी, नानी, या दूसरी बूढ़ी वेडरियां पीढ़ी दर पीढ़ी बच्चों को कहानियां सुनाकर सुलाती रहती हैं गाँवों के बालक युवा वृद्ध रात्रि के समय गोष्ठियों में एकत्र होते हैं या धूणी के चारों ग्रोर तपने बैठ जाते हैं तो कहानी कहने वाले की खोज होती है राज-दरबारों में ग्रौर सरदारों तथा धनिकों के यहां पेशेवर कहानी कहने वाले होते हैं जो ग्रपने विशेष ढंग से कहानी सुनाया करते हैं। कहानी सुनने वालों के लिये यह ग्रावश्यक होता है कि वे बीच-बीच में हुंकारा देते जांय, कहानी कथन में हुंकारे का बड़ा महत्व है।'[2]

बात ग्रपने प्राचीन रूप से लेकर ग्राज तक केवल दो ही रूप में मिलती हैं।

---

(१) 'राजस्थानी-साहित्य की इतिहास सम्बन्धी सामग्री'—श्री नरोत्तमदासजी स्वामी।

(२) 'राजस्थानी साहित्य की इतिहास सबंधी सामग्री'—प्रो. नरोत्तमदास स्वामी

जैसा कि पिछले पृष्ठों में लिखा जा चुका है कि एक तो घर-घर प्रचलित लोक-गाथायें तथा दूसरी लिपिबद्ध। किन्तु रसका परिपाक दोनों ही प्रकार की कहानियों में तभी होता है जब वे कहकर सुनाई जायें। कहने वाला एक प्रकार से सफल अभिनेता होता है जो कहने के साथ-साथ अभिनय द्वारा बहादुर, कायर, प्रेमी, प्रेमिका, पशु-पक्षी आदि सभी का अभिनय इतनी खूबी से करता है और सारा वातावरण इतना रंगीन बना देता है कि ऐसा मालूम होने लगता है जैसे सारी घटनायें आंखों के सामने से ही गुजर रही हों। कहानी कहने वाला प्रथम पात्र और हुंकारा देने वाला द्वितीय पात्र होता है। इस वातावरण से सुनने वालों के हृदय आनन्द विभोर हो जाते हैं—उनके हृदय में एक गुद-गुदी पैदा हो जाती है इस तरह से बात कहने और सुनने में कई व्यक्तियों का व्यक्तित्व सम्मिलित होकर बात को सजीव और सरस बना देता है। बात कहना एक कला है तो हुंकारा देना भी एक कला है।'[1]

कहानी कहने की कला राजस्थान में कुछ जातियों की निजिवृत्ति भी रही है। कहानी कहने वाला गांव को चौपाल के उस सुनसान रमणीय, शांत और स्वर्गिक वातावरण में और मंदिरों में 'कऊ' पर आसन जमा कर जब कहानी कहना आरम्भ करता है तो श्रोता उसके कथन के रस में सराबोर हो जाते हैं। उनकी आंखों के समक्ष उनके अतीत के गौरवयुक्त घटनाक्रम नृत्य करने लग जाते हैं आगे प्राचीन स्मृतियां ताजी बनकर चित्रपट की तरह एक के बाद एक आती रहती हैं।

कहानी कहने के प्रारम्भ में बड़वाजी 'बड़दाव' देना प्रारम्भ करते हैं तो चारों ओर सन्नाटा छा जाता है। इस 'बड़दाव' देना का तात्पर्य यह होता है कि श्रोताओं का ध्यान केन्द्रित हो जाय तथा विलम्ब से आने वाले आने में जल्दी करें। क्योंकि वह अपनी पूरी आवाज से उस पद्यमयी रचना को गाता है जो उस नीरव, शांत, एकाकी गांव के दूर घर तक सुनायी देता है। 'बात का प्रारम्भ भी विशेष ढंग से किया जाता है। कथा कहने वाला एक कथा प्रारम्भ न करके पहले-पहल उसकी भूमिका कुछ पद्यों के माध्यम से बांधता है। वे या तो नायक-नायिका के सम्बन्ध में होते हैं या फिर बात की प्रशंसा में ही कुछ पद्य कहे जाते हैं।'[2]

-(१) 'केरे बरवा बात' सरमो कुमारी जू-
(२) 'परम्परा' . . .

कहानी प्रारम्भ करने से पहले 'बड़दाव' देता हुआ वह कहता है—

> 'बात भला दिन पाधरा, पिड़ज पाका बोर
> घर मींडल घोड़ा जर्गे, लाडू मारे चोर
> बात कंता वार लागै, हुंकारे बात मीठी लागे
> बात में हुंकारो, फौज में नगारो
> मार बाबा सार, पलमा नहीं लगाव
> माता मा घोड़ा, पातलिया असवार
> बातां हुदा मामला, नदियां हुदा फेर
> बहता ज बहे उतावला, घर मर चाले घेर
> आधाक नर सोवै, आधाक नर जागे
> जागतां री पागड़ी, ढोल्या रै पागे
> सूतां री पागड़ी, उचक्का ले ले भागे
> बात रा बातपा, मजोगा रा पींवणा
> जीवो बात रा केवणिया, जीवो हुंकारा रा देवणियां' [1]

इस प्रकार के आकर्षक नाटकीय ढंग से वे श्रोताओं को अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं और श्रोता लोग बात सुनने के लिये उत्सुकता से प्रतीक्षा करने लगते हैं। हुंकारा देने वालों के साथ ही कहानी कहने वाला अपनी कहानी की प्रस्तावना यूं शुरू कर देता है –

एक जनाड़ हो। उठै एक बड़'रो बिरछ हो। बिरछ रै माथै डाळे माथै ह्वारा पंछी सूता हा अर दोय पंछी जागै हा। उण में एक तो चकवो हो अर दूजो चकवी ही। अर चुप-चुप बैठ्या रात न कटती देखी चकवी बोली—कहो चकवा क न कटै क्यूं रात।

अर चकवो बोल्यो—चकवी! पर बीती कहूं के घर बीती?

जद चकवी बोली—चकवा! आप बीती तो घर बीती ही कहू, पर बीती तो सदा ही कहे है।

और जब इस तरह प्रस्तावना समाप्त करके बात की बात में बात चल पड़ती है। कभी [illegible] की तरह फैलती, कहीं घूमती हुई, कहीं [illegible] हुई कहीं अन्य मोड़ों से निकलती हुई, प्रवाह के साथ

---

(१) [illegible] बात [illegible] पृ० १०

चलती है।

बात की बात का एक उदाहरण देखिये – कितना सुन्दर है—

'ज्यूं केल' के पात मे, पात पात मे पात।
त्यूं चातर की बात मे, बात बात में बात॥
बात बात सब एक है, बात बात मे फेर।
वै ही लो' की कुसघडी, वै को ही समसेर॥
बात बात सब एक है, बात बात मे वैण।
वो ही काजल ठीकरी, वो ही काजल नैण॥
बातडियां घर उजडै, फूटै दालद होय।
जै कोई जाणै बातडली, तो बातडल्यां घर होय॥
राव गया रहातर गयो, गया जमीं से हल्ल।
सूरवीर तो चल्या गया, पण पडी रह गई गल्ल॥
राहव कहै सुण माहवा, हालूं देखण हल्ल।
मरज्याणा ससार में, पडी रवेगी गल्ल॥
साजन सिना न व्याइये, जै सोने की बा'ल।
बात रवै दिन बीतज्या, समै पलटज्या बा'ल॥
सोरठिया दूहो भलो, भल मरवण की बात।
जोबण छाई धण भली, तारां छाई रात॥
गाहा गूढा गीत गुण, उकति कथा कल्लोल।
चतुर तणाचित रजवण, कहीयै कवि कल्लोल॥ (संकलित)[1]

इस प्रकार बात में पद्य के साथ पद्य, छटादार वर्णन, दोहे, उप-कथाए बात के विस्तार करने के साथ-साथ रोचकता भी प्रदान करते रहते हैं। कुछ बातें तो इतनी लम्बी होती है कि दस-दस दिन तक चलती रहती है। शाम को शुरू की हुई बात को सवेरा होना तो मामूली बात है। श्रोताओं की नींद न जाने कहीं जाकर छिप जाती है या वो भी इन बातों के रस में रम-मग्न होकर दूर खड़ी इनका (बातों का) आनन्द लेती रहती है।
इस प्रकार 'नदी में जैसे छोटी नदियाँ आकर नदी को बढ़ाती है, उसी भाँति बात में भी उपकथायें दिन पर बात को बढ़ाती रहती है। इस प्रकार 'बात

(१) 'वरदा' (लोक साहित्य विशेषांक), [illegible]

ऐतिहासिक तथा काल्पनिक दोनों प्रकार की रचनाएं मिलती है।

'राजस्थानी भाषा मे 'बात' कहानी को कहते हैं। यह संस्कृत शब्द 'वार्ता' से बना है।'[1] 'बात' के विषय मे हम पिछले पृष्ठों में बता चुके है। ये बातें पुस्तक रूप मे भी पायी जाती हैं। मौखिक यानि मुंहजबानी एवं लिपिबद्ध रूपों मे इन बातों को विभक्त किया जा सकता है। ये बातें - अर्द्धऐतिहासिक, काल्पनिक वीरगाथात्मक, स्त्री चातुर्य की साहसिक एवं प्रणयमय सम्बन्धी, भौर और विक्रमादित्य सम्बन्धी, अद्भुत बातें—आदि विषयों पर रची गयी हैं।

'इन बातों का लेखन १७वीं शताब्दी मे होने लगा था। सम्राट अकबर के समय से राजस्थानी ख्यातों और बातों का लेखन प्रारम्भ हुआ, × × × ख्यातों के साथ बातों का अटूट सम्बन्ध है। इसीलिये 'मुहणोत नैणसी री ख्यात' में बहुत सी बातें संग्रहीत हैं। ख्यात मे वंशावली और संवत् आदि का उल्लेख होने से उसका महत्व ऐतिहासिक दृष्टि से है और बात का महत्व और उद्देश्य प्रधानतया मनोरंजन है। बातें कई ऐतिहासिक व्यक्तियों से सम्बन्धित हैं, पर उनमें ऐतिहासिक दृष्टि प्रधान नहीं रही, कल्पना भी उनमें व्याप्त हो गई।'[2]

हमने देखा कि 'ख्यात' जहाँ एक ओर केवल प्राचीन व वर्तमान का इतिहास ही दर्शाती है, वहाँ बात मे हम इतिहास, कल्पना और मनोरंजन के दर्शन करते हैं। 'ख्यात' की रचना ऐतिहासिक है तो 'बात' की रचना मनोरंजक व [illegible] है।

बात और दवावैत -

'दवावैत' शब्द [illegible] का है। जिस प्रकार राजस्थानी [illegible] के [illegible] आदि हैं उसी प्रकार [illegible] के [illegible] हैं 'बात' और 'दवावैत।' [illegible] 'बात' और राजस्थानी की 'बात' एक ही है। इसी प्रकार 'बात' और 'दवावैत' एक ही हैं। जिस प्रकार 'ख्यात' में केवल ऐतिहासिक [illegible] का वर्णन मिलता है उसी प्रकार यह 'दवावैत' [illegible]

[1] "राजस्थानी भाषा और साहित्य"—डॉ. [illegible] [illegible], [illegible] १०, पृ० ६६
[2] [illegible]
[illegible]

रहती है।

संस्कृत गद्य-साहित्य के इन दो रूपों— 'कथा' एवं 'आख्यायिका' के महाकवि एवं आलोचक दण्डी ने ५ भेद माने हैं —(१) कथा कवि कल्पित होती है आख्यायिका ऐतिहासिक इतिवृत्त पर अवलम्बित। (२) कथा में वक्ता स्वयं नायक अथवा अन्य कोई रहता है, आख्यायिका में नायक स्वयं वक्ता होता है। आख्यायिका को हम एक प्रकार से आत्म-कथा कह सकते हैं। (३) आख्यायिका का विभाग अध्यायों में किया जाता है जिन्हें उच्छ्वास कहते हैं, तथा उनमें वक्त्र तथा अपरवक्त्र छन्द के पद्यों का समावेश रहता है, पर कथा में नहीं। (४) कथा में कन्याहरण, संग्राम, विप्रलम्भ, सूर्योदय, चन्द्रोदय आदि विषयों का वर्णन रहता है, पर आख्यायिका में नहीं। (५) कथा में लेखक किसी अभिप्राय से कुछ ऐसे विशेष शब्दों (Catch words) का प्रयोग करता है जो कथा और आख्यायिका में भेद स्थापित करते हैं।[1]

जिस प्रकार राजस्थानी में 'ख्यात' और 'वात' में एक विशेष अन्तर मानते हैं उसी तरह संस्कृत में 'कथा' और 'आख्यायिका' में कोई विशेष अन्तर नहीं मानते। 'दण्डी ने यह मत प्रकट किया है कि कथा और आख्यायिका में वास्तविक कोई अन्तर नहीं किया जा सकता है। ये दोनों ही गद्य-साहित्य के एक विशेष प्रकार के विभिन्न नाम हैं। इन दोनों में जो अन्तर किया गया है, उसका पालन नहीं किया जा सकता है।'[2]

अन्त में इतना ही कहा जा सकता है कि 'आख्यायिका' वास्तविक घटना पर निर्भर होती है और इसका काम केवल इतिहास ही बतलाना है तो दूसरी ओर 'वात' का विषय काल्पनिक एवं इतिहासमिश्रित होता है तथा यह हमारा मनोरंजन करती है।

वात और वार्ता में अन्तर

'राजस्थानी भाषा में 'वात' कहानी को कहते हैं। यह संस्कृत शब्द 'वार्ता' से बना है।'[3] श्री हरिहर नाथ टंडन ने अपनी थीसिस 'वार्ता साहित्य का जीवन

---

(१) 'संस्कृत-साहित्य की रूपरेखा'—स्व० पं० चन्द्रशेखर पाण्डेय, एम० ए०। पृ० २६५ तथा २६६

(२) 'संस्कृत-साहित्य का इतिहास'—वरदाचार्य—पृ० १५१

(३) 'राजस्थानी भाषा और साहित्य'-मेनारिया—पृ० ६४

वार्ता में ही वचन को बात और ख्यात कहा गया है।'[1]

'चारण साहित्य में हमें बात की शैली का दर्शन हो जाता है। लेकिन उ काल में बात मुख्यतः पद्य ही के लिये प्रयुक्त होता था। यहां वार्ता-साहित्य मुख्यत ब्रजभाषा गद्य की वस्तु है और इस वार्ता पर प्राचीन संस्कृत की कथ वार्ता शैली की पूर्ण छाप है। यह साहित्य विशेषत: पुष्ट-मार्गीय श्री वल्लभ सम्प्रदायी वैष्णव से सम्बन्धित है। इसमें यथा सम्भव वैष्णव भक्तों की जीवन सम्बन्धी घटनाओं का वर्णन कथाओं के माध्यम से हुआ है। इन कथाओं के ध्येय वल्लभ सम्प्रदाय के प्रति हममें आस्था उत्पन्न करना है। वार्ता से यहा तात्पर्य, वैष्णव के जीवन सम्बन्धी घटनाओं से अभिगत करना है। वार्ता साहित्य के मुख्यतः दो प्रतिनिधि ग्रन्थ हैं—१. 'चौरासी वैष्णव की वार्ता' और २. 'दो सौ बावन वैष्णव की वार्ता।'[2]

वार्ता शब्द सामान्यतया कहानी के लिये प्रयुक्त होता है × × × × × × इस वार्ता साहित्य में लोकनीति लोक रुचि लोक व्यवहार, लोक विश्वास और रुढ़ि प्रभृति जन-मानस के विविध भावों और आशा-आस्थाओं का समावेश मिलता है।[3]

विशुद्ध शैली की दृष्टि से वार्ताएं वर्णनात्मक ढंग से कही गयी हैं। इनमें कौतूहल और जिज्ञासावृत्ति पर कोई विशेष बल नहीं पड़ता। फलतः इन वार्ताओं में कथा तत्व केवल इसी अर्थ में है कि यहां जीवन की किंचित घटनाओं-विवरणों की अभिव्यक्ति कथा के माध्यम से हुई है।

बात और कहानी में अन्तर

'कहानी कला वह कला है जो मानव के वाह्य जीवन और उसके अन्तःस्तल में

---

(१) 'हिन्दी कहानियों की शिल्प-विधि का विकास'—डा० लक्ष्मीनारायण लाल- पृ २७

(२) हिन्दी कहानियों की शिल्प-विधि का विकास—डा० लक्ष्मीनारायण लाल- पृ० ३१

(३) 'राजस्थानी वार्ता' भाग ५—सम्पादकीय सम्पादक सौभाग्यसिंह शेखावत पृ० २

झांकी हमारे सामने ला छोड़ती है और पाठक का मन और मस्तिष्क उसके भावों से घनीभूत हो जाता है।'[1]

कथा-कहानी के प्रति मानव का आकर्षण सदा से रहा है और रहेगा क्योंकि जीवन के साथ उसका अटूट सम्बन्ध है। कहानी हमारे जीवन का एक चित्र है। उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द जी ने कहानी के सम्बन्ध में कहा है 'कहानी एक रचना है जिसमें जीवन के किसी एक अंग या मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है।'

कहानी से तात्पर्य हमारा आधुनिक कहानी से है जिसे अंग्रेजी में Short Story कहते है। आधुनिक कहानी की विषय-सीमा के अन्तर्गत आज का कहानीकार जो कुछ भी चाहता है, उसे अपनी कहानी का विषय बना लेता है। H. E. Bates के शब्दों में 'The Short story can be any thing from the prose-poem painted rather than written to the price of straight reports in which style, colour and elaboration have no place, from the piece which catches like a cab-wel the light subtle iridescence of emotions that can never be really captured or measured the sited tale in which all emotions all actions all reaction is measured, fixed, glazed and finished like a well build have with three coats of shining and induring faint '[2]

H. G. Wells defined short story as any piece of short fiction that could be read in half an hour,

किन्तु 'राजस्थानी 'बात' कहानी का ठीक पर्याय नहीं। इस शब्द से कहानी के अन्तर्गत वर्णित की जाने वाली सम्पूर्ण रोचक, कहने वाले की विदग्धता और सुनने वाले की जिज्ञासा के एक सम्मिलित भाव का सूचन होता है।[3]

---

(१) 'हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास' डा० लक्ष्मी नारायण लाल पृ० १२१

(२) 'The Modern Short Stories'—H. E. Bates Page 16

(३) राजस्थान भारती—'राजस्थानी बात साहित्य'—श्री रावत सारस्वत पृ० १२

पात्रों की स्वाभाविकता और मनोवैज्ञानिक चरित्र-चित्रण मिलता है वह बात
न होने के कारण वात कहानी से अलग जा बैठती है। इसका तात्पर्य यह
है कि 'वात' मे स्वाभाविकता नहीं अथवा उसमें मानव स्वभाव का चि
नहीं परन्तु वातों के लेखकों ने इनको अपनी कहानी का आवश्यक अङ्ग
माना। राजस्थानी की बहुत सी वातों में स्वाभाविकता की उपेक्षा की
है—जैसे राजा भोज की पन्द्रहवीं विद्या' इसमें एक कथा में कई कथायें
तन्त्र की कहानियों की तरह चलती रहती है। कथा सरित्सागर' की कथा
को पढ़ने से यह स्पष्ट है कि ये अपने कलात्मक रूप से पुराणों की कथाओं
भांति है—अर्थात् एक श्रोता है और एक वक्ता-कथाकार, जो एक मूल
कथा प्रारम्भ करता है तथा उसी मूल मूल कथा से धीरे-धीरे अन्यान्य क
स्वतः निकलती रहती है और प्रत्येक कथा अपने वास्तविक मूल्य में स्व
और पूर्ण-सा प्रतीत होती है।'[1]

आज से २५-२६ वर्ष पूर्व स्वर्गीय श्री सूर्यकरणजी पारीक ने 'राजस्थानी-व
नाम का एक सुसम्पादित संस्करण प्रकाशित किया था। इस पुस्तक
भूमिका में राजस्थानी कहानी (वात) साहित्य के विषय में पारीक जी
लिखा है, हिन्दी में कहानी की शुरुआत बंगला की गल्पों के अनुकरण से
परन्तु राजस्थानी का कहानी साहित्य उसकी निजी सम्पत्ति है। राजस्थान
बहुत प्राचीन काल से कहानी कहना और लिखना चारणों और भाट
का काम रहा है। × × × × राजस्थानी कहानी की शैली राजस्थानी
की है।'[2]

आजकल की आधुनिक कहानी कला का जो रूप समालोचक देखते हैं वह
हमारी प्राचीन 'वातों' में नहीं मिलता। जब से हिन्दी साहित्य का विकास
हुआ तो लेखकों ने राजस्थानी में लिखना छोड़ दिया और हिन्दी में लि
लगे—फल यह हुआ कि वह 'वात-साहित्य' जहां था वहीं का वहीं रहा
और उसने आधुनिक जीवन के दर्शन न कर सका। यह निश्चित है कि

---

(१) हिन्दी कहानियों की शिल्प विधि का विकास'—डा० लक्ष्मीनारा
लाल पृ० १८

(२) 'राजस्थानी वातां'—स्व० श्री सूर्यकरणजी पारीक भूमिका

जो आज की आधुनिक से आधुनिक कहानी में पाये जाते है। श्री प्रो० कन्है-यालाल सहेल के शब्दों मे, यदि राजस्थानी कहानियो मे ग्राधुनिक कहानियो की भान्ति जीवन के ग्रन्तंस्तल को स्पर्श करने की क्षमता नहीं है तो उनमे बाह्य दृश्यों के चित्रण की कुशलता ग्रौर कल्पना की स्वच्छन्द उडान ग्रवश्य मिलती है। यदि उनमे ग्राधुनिक पाठक चरित्र-चित्रण, संवेदना कथोपकथन ग्रौर कला का रसास्वादन नही कर सकता तो कम से कम प्राचीनता-प्रेमी पाठक के लिये उनमे मनोरजन ग्रौर रस की प्रर्याप्त सामग्री ग्रवश्य है।'[1]

पशु-पक्षी की कहानी राजस्थानी मे मिलती है ग्रौर वे सब मनुष्य के ही गुण या स्वभाव का प्रतिनिधित्व करती हैं और वे कहानियां उस समय के 'मानव समाज के लक्ष्यों, ग्रादर्शों ग्रौर सद्-व्यवहारो को चरितार्थ करने का यत्न करते दिखाई देते हैं। × × × × कहानी का ग्राधार मनुष्य का प्रसग ही होना है।'[2]

मनोविज्ञान का साहित्य मे चित्रण ग्राधुनिक काल मे हुग्रा है। ग्रतएव उसमे मनोविज्ञान की प्रधानता है। जैनेन्द्र ग्रादि कहानी लेखकों की नवीनतम कहानियों का ध्येय मनोविज्ञान का दर्शन कराना तथा उसी के ग्राधार पर चरित्रों का चित्रण करना है। किन्तु 'वातो' में केवल मानव-स्वभाव का वर्णन ही देखने को मिलता है। नीति सम्बन्धी वातें मानव स्वभाव के किसी न किसी पक्ष पर प्रभाव डालती है पर बहुत कम ऐसी वातें हैं जिनमें ग्रन्तंद्वन्द्व दिखलाया गया है।

राजस्थान की कई वातों मे तो पात्रों का नाम तथा पूर्ण परिचय ही नहीं होता। पात्रों का नाम लुप्त रहता है उनके नाम का पता ही नही लगता ग्रौर केवल घटनाग्रों के बल पर सारी कहानी चलती रहती है। उदाहरण के रूप में 'पचमार री वात' का प्रारम्भ देखिये—

'एक राजपूत कणिक देस मे रहै। जो ग्रणी रे ग्रठन ग्राई जदी रजपूतानी रजपूत हैं कयो। राज थारे तो खरची चावै। ग्ररं थें कठै चाकर रो तो था

(१) 'चौबोली'—सं० डा० कन्हैयालाल सहल—ग्रामुख पृ० १०

(२) 'ग्रो भैया' लेखक यशपाल—पुस्तक की भूमिका से उद्धृत पंक्तियां

भूस्वामी आदि तरीकों से पात्र रचे गये हैं किन्तु इनका नाम क्या है इसका पता अन्त तक नहीं मिलता। किन्तु आज का कहानी-लेखक अपनी कहानियों में पात्रों का नाम तथा स्थान दोनों का उल्लेख करता है।

'कहानी' और 'वात' दोनों के प्रारम्भ करने का ढंग अलग-अलग रूप में है। जिस ढंग से कहानी शुरू की जाती है उस प्रकार से वात की शुरूआत नहीं होती। वात को शुरू करने का ढंग इन लेखकों का अपना है। अंग्रेजी समालोचक सेजेविच कहानी में आदि और अन्त को ही महत्वपूर्ण मानते हैं—Mr. Ellery Sedgewich held that 'A Story is like a horserace. It is the start and finish that count most.'[1] हर एक लेखक का कहानी शुरू करने का अपना अलग-अलग तरीका होता है। कुछ लेखक वर्णन द्वारा, कुछ चरित्र-चित्रण द्वारा, और कुछ संवाद द्वारा कहानी का आरम्भ करते हैं। किन्तु 'वातों' के लेखक अपनी कहानी की शुरूआत प्रायः घटनाओं द्वारा ही करते हैं। कहानी के प्रारम्भ से ही पात्र घटना चक्र में घूमने लग जाता है और ये घटनायें ही चरित्र संवाद कथानक आदि पर प्रकाश डालती जाती हैं।

डा० श्री कन्हैयालाल सहल ने इन दोनों का वर्गीकरण बहुत ही उत्तम किया है वे लिखते हैं 'एक अन्तर्मुखी है, दूसरी बहिर्मुखी। एक चित्रमय है, दूसरी दृश्यमय। एक व्यक्तिगत अनुभूति की तीव्रता लिये हुए है, दूसरी में व्यक्ति नदारद।[2]

चाहे 'वात' आज की 'कहानी' से कितनी ही अविकसित हो किन्तु वात का महत्व आज सैकड़ों वर्षों से समाज में रहता आ रहा है। राजस्थान के गांवों में क्या कहीं भी वहां की लोक-कथाओं को जितना महत्व प्राप्त है उतना इन कहानियों को नहीं। यद्यपि 'आधुनिक कहानी के विकसित रूप में जो लेखक के व्यक्तित्व की निहित, सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, जीवन यथार्थ का उद्घाटन करने वाला शिल्प नैपुण्य और कथा तत्व की गतिशीलता आदि गुण दिखाई देते हैं—वे चाहें इन वातों में नहीं पर वर्णनों की सजीवता, औत्सुक्य

---

(१) Sedgewich & Dominovitch—Editor Novel & Story

(२) 'चौबोली' सं० कन्हैयालाल सहल—आमुख पृ० १०

का निर्वाह, लयात्मक भाषा में काव्य का-सा आनन्द और सामाजिक सत्य की सहज अभिव्यक्ति आदि कुछ ऐसे गुण हैं जिनके कारण सैकड़ों वर्षों से इन कथाओं का समाज में महत्व रहा है।[1]

(१) परम्परा—राजस्थानी वात-संग्रह विशेषांक—भूमिका, नारायणसिंह भाटी, पृ० १६

प्रतिज्ञा का पालन करना, सत्य के लिये राजपूत का पिस जाना, अपने अस्तित्व को मिटा देना, शरणागत की प्राणपण से रक्षा करना, प्रजाहितैषित आदि साहित्य के लिये शाश्वत प्रेरणा के मनोहर उत्स हैं। राजपूत वीरों के साथ-साथ राजपूतानियों के जौहर व्रत, उनकी सतीत्व-निष्ठा एवम् वीरता आदि आज भी अलौकिक वस्तुएँ जान पड़ती हैं। इसके प्रकार की विलक्षणता इन वीरों और रमणियों में पाई जाती है, जो संसार की बहुत कम शूरवीर जातियों में मिलती है। जीवन के स्पन्दन का अनुभव हम इन वातों-कथाओं-में सुनते हैं।

ख्यात-साहित्य का सम्बन्ध केवल इतिहास से होता है। उसमें इतिहास से सम्बन्धित घटनाओं का वर्णन मिलता है। किन्तु वातों में इतिहास और कल्पना दोनों का मेल होता है। 'वात' कोरी ऐतिहासिक नहीं होती। ये वातें अर्द्ध-ऐतिहासिक होती हैं। अर्द्धऐतिहासिक वात से मेरा तात्पर्य है पात्र एवम् घटनाओं में से एक ऐतिहासिक हो। ये कहानियाँ इतिहास से भिन्न होती हैं। इन वातों में (१) पात्रों की कल्पना या तो वात को सजीव बनाने के लिये की गयी है, (२) इतिहास की बिखरी हुई कथा को परस्पर सम्बद्ध करने के लिये घटना में थोड़ा सा मोड़ दिया गया है। इनके द्वारा इतिहास की रक्षा हुई है। इन वातों के द्वारा ही वीर, दानी और महापुरुषों को जीवित रखा गया है। दुर्ग, स्थान विशेष आदि ने भी उन ऐतिहासिक घटनाओं को सुरक्षित रखा, जिनके आधार पर ऐतिहासिक वातों की रचना की गयी है।

इन वातों में जो इतिहास का अंश अधिक है वही इस जाति की वीरता, प्रेम आत्मसम्मान आदि की ओर संकेत करता है। 'कोई भी जाति मर नहीं सकती जब तक कि उसका इतिहास निर्माण होता रहता है।'[1] इसी तरह सिसरो (Cicero) के शब्दों में 'History is the light of truth and the teacher of life.'[2]

वीरता राजस्थान का आदर्श रहा है, अतः कहानियों में किसी न किसी प्रकार से यह तत्व पाया जाता है। 'राजस्थानी [illegible] ने जो कहानियाँ उपलब्ध हैं, उन सब में [illegible] है × × × ×

पहला भाग से उद्धृत

अधिकांश राजस्थानी कहानियां राजपूत राजाओं की वीरता को लेकर लिखी गई हैं।'[1] स्वर्गीय श्री सूर्यकरणजी पारीक इन राजपूतों के चरित्र से अत्यधिक प्रभावित हुए थे और उन्होंने इनकी चारित्रिक विशेषताओं का दिग्दर्शन कराने के लिये ही 'राजस्थानी वातां' नाम से सात ऐतिहासिक वातों का एक संग्रह सर्व प्रथम प्रकाशित करवाया था। इन ऐतिहासिक कहानियों में कहानीकार व्यक्ति या व्यक्तियों के जीवन-चरित्र, वीरता को ही केन्द्र मानकर चले हैं। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि स्वदेश प्रेम, जाति प्रेम, गोरक्षा, आत्म-सम्मान आदि के लिये अपने प्राण विसर्जन तक कर देना यहां का प्रमुख आदर्श रहा है। इसी प्रकार की कथाओं का वृहद्-भण्डार इस वात-साहित्य में है परंतु स्थानाभाव के कारण हम सब वातों के तो विषय में अधिक बतला नहीं सकते, किन्तु इस प्रकार की कुछ वातें निम्नलिखित हैं—

'राव अमरसिंघ जी री वात'—इस कथा में राव अमरसिंघ जी से सम्बन्ध रखने वाली घटनाओं पर प्रकाश डाला गया है। जैसे—जोधपुर-नरेश महाराज गजसिंह द्वारा अमरसिंह को जोधपुर से निष्कासित किया जाना, अमरसिंह का बादशाह शाहजहां के समीप पहुँचना, बादशाह द्वारा उनको नागौर जागीर मिलना, बीकानेर से युद्ध, सलावत खां से उनकी खटपट तथा भरे दरबार में उसको कटार से मार डालना, असावधान अवस्था में उन पर सलीम खाँ का आक्रमण, उनकी असफलता, अर्जुनसिंह गौड़ द्वारा धोखे से अमरसिंह का मारा जाना। बादशाह द्वारा उनका शव उनके साथियों को देना, उनके साथियों द्वारा युद्ध, अर्जुनसिंह द्वारा बादशाह को भड़काना, बादशाह का क्रोधित होकर राजपूतों को लुटवाना, कुछ राजपूतों का मारा जाना, अमरसिंह की रानियों का सती होना आदि स्थलों पर अमरसिंह का व्यक्तित्व स्पष्ट हुआ है।[2]

'[illegible]'—में मामा अपने बहनोई को मारकर उसका [illegible] कर अपने साथ घोड़ा हथिया लेता है। उसी बहनोई के पुत्र और अपने भानजे [illegible] को मामा अपने पास रखता है। पुत्र से भी बढ़कर वह अपने भानजे को प्यार करता है। बड़ा होने पर [illegible], मामा से अपने बाप का बदला लेने को उद्यत हो जाता है। मामा स्वयं अपने भानजे के इस उपक्रम को

---

(१) [illegible]—डा० कन्हैयालाल सहल तथा [illegible] गौड़ – के आमुख से — पृ० ६

(२) राजस्थान में गद्य साहित्य का विकास—'[illegible]' पृ० १२५,१२६

बड़ाई करता है। युद्ध में राखायच तथा लाखा दोनों काम आ जाते हैं। इस युद्ध का कारण होता है—एक घोडा। इसी तरह घोड़े को लेकर राजस्थान में बड़े-बड़े कांड होते रहते हैं। उस काल में वीरों की सम्पदा एवम् प्रिय वस्तु एक ही होती थी – वह उसका घोडा। 'फर्मघोरधार री वात' मे फर्म नामक एक वीर राजपूत सुवावाडी का राजा था। जींदरे खीची ने पाबूजी की गायें चुराई। पाबू ने युद्ध करके गायें छीनली। इस युद्ध मे बूडो जी अपने १२ साथियों सहित मारे गये। जींदरा अपने को असमर्थ पाकर फर्म की शरण मे आया। पाबूजी और फर्म मे युद्ध हुआ जिसमे पाबूजी मारे गये। और फर्म घोरधार कहलाया। 'बात सातल-सोमरी' इसमे हम युद्ध—एक जीवित झांकी पाते हैं। इसमे कुमार गढ़ के राजा सातल-सोम का बादशाह अलाउद्दीन से युद्ध—बादशाह का कहना कि मेरी तलवार कोई नहीं बांध सकता—सातल-सोम का बादशाह से सामना करना और फिर युद्ध में काम आ जाना। यह एक राजपूत के अदम्य उत्साह और वीरता की कहानी है। 'महाराज करण-सिंहजी रा कुंवरा री वात' में बीकानेर नरेश (प्रथम जिनको जय जंगलधर बादशाह की उपाधि मिली थी) महाराजा करणसिंहजी के चारो पुत्रों—अनूप-सिंहजी, केशरीसिंहजी, पद्मसिंहजी और मोहनसिंहजी —की वीरता पर प्रकाश डालने वाली घटनायें हैं। 'खीचिया री वात' मे औरंगजेब के समय मे हाडा-भगवतसिंह चनरसालोत की विजय का चित्रण है। 'वात पताई रावल री' मे राजपूती शौर्य, वीरता और विश्वासघात की कहानी है। चापानेर का स्वामी प्रतापसिंह चौहान जो इतिहास मे पताई रावल के नाम से प्रसिद्ध है, अप्रतिम वीर हुआ, उसके शौर्य की प्रशंसा शत्रुओं तक ने की। इसमें बेगडा महमूद जो गुजरात का बादशाह था से पताई रावळ के युद्ध का वर्णन है—पताई रावळ इस युद्ध में काम आ जाता है। 'वात नान्हे वाघेलै-री' मे राजपूत शौर्य और Chivalry की एक सुन्दर कहानी है। इसमे राव वाढेनाथ के शौर्य का वर्णन बहुत ही सुन्दर तरीके से किया गया है।

वात-'खेत सी कावलोतरी', 'गोगादे वीर मोत री', 'वैरसल भीमोत री', 'बीकाजी री', 'जैसलमेर री', 'तुंवरा री वात', 'फर्म घोरधार री वात', 'डूंगर जसाकोत री वात', 'कवलसिंह सांखलै नैं भरमल री वात' 'दाहड पवार री वात'—आदि इसी प्रकार की व्यक्ति-प्रधान ऐतिहासिक वातें हैं।

इन वातों में ऐतिहासिक घटनाओं के अतिरिक्त कल्पना का भी अंश पर्याप्त रूप

में विद्यमान रहता है। कहानी में मनोरञ्जकता के समावेश के लिये कल्पना का अंश अत्यावश्यक होता है। वैसे इन सारी वार्ताओं में ऐतिहासिक कार्य को लेकर उसमें कल्पना की पुट देकर मनोरञ्जक सामग्री उपस्थित की गयी है। स्व० श्री सूर्यकरणजी पारीक के शब्दों में 'कहानी एक कला है और उसका प्रधान उद्देश्य है मनोरंजक रूप में किसी प्रमुख व्यक्ति या घटना के सम्बन्ध में अख्यान लिखकर सहृदय जनता का हृदय आकर्षित करना। संसार के सभी साहित्य में जहां भी देखा जाय—सभी में कल्पनात्मक प्रसंगों द्वारा वास्तविक तथ्यों को एक नवीन रागात्मक रूप दे दिया जाता है।'[1]

एक उदाहरण से मैं यह बात स्पष्ट कर देता हूँ—'जगदेव पंवार की वात' में यद्यपि जगदेव और सिद्धराव सोलंकी ऐतिहासिक व्यक्ति हैं और इतिहास से उनका एकत्रित होना सिद्ध भी होता है और एक जगह लिखा भी है—'जगदेव पवार सिद्धराव सोलंकी रो चाकर। कंकाली देवी ने आपरो सीस दीयौ।'—परन्तु तो भी जगदेव का भैरव के गण को द्वन्द्व युद्ध में परास्त करना तथा दो बार शीश दान करने को उद्यत होना अतिशयोक्तिपूर्ण कल्पना मात्र है। सम्भव है, जगदेव ने काम पड़ने पर एक ही बार स्वामी की सेवा में शीश दान किया हो। इसी प्रकार वीरमदेव' की कहानी में शहजादी से उसका प्रेम, युद्ध के कारणरूप में बताया जाना और उस प्रेम की पुष्टि के लिये काशी करौत वाली पूर्व जन्म की अन्तर्कथा का निर्माण— ये बातें कवि कल्पना की करामातें हैं। हां, ऐतिहासिक दृष्टि से इतना सत्य है कि जालौर के स्वामी सोनगरा राजपूत, राव कन्हड़दे और उसके पुत्र वीरमदेव ने बड़ी वीरता पूर्वक बादशाह की सेना के विरुद्ध गढ़ की रक्षा की थी। इस प्रकार बहुत सी ऐतिहासिक अन्य कहानियों में यद्यपि आधारभूत इतिवृत्त (Fact) ऐतिहासिक ही है, परन्तु कल्पनाओं का प्रचुर परिमाण में नीर-क्षीर की तरह सम्मिश्रण होने से यह नहीं कहा जा सकता है कि इसमें कहां तक तो इतिहास है और कहां तक इसमें कल्पना का अंश है।

इन वातों में ऐतिहासिक अंशों की विशेषता रहती है। वैसे हरएक ऐतिहासिक वात किसी न किसी ऐतिहासिक चरित्र या किसी ऐतिहासिक घटना पर रची गई है। जहां तक ऐतिहासिकता का प्रश्न है—उसके प्रमाण हमें इतिहास में मिलते हैं।

---

(१) 'राजस्थानी वार्ता'—स्व० श्री सूर्यकरण पारीक, भूमिका।

वैसे ये घटनायें या चरित्र जो इन वातों में वर्णित किये जाते हैं इतिहास प्रसिद्ध ही होते हैं। उदाहरण स्वरूप 'जगदेव पवार की वात'—'पाटण के राजा सिद्धराज सोलंकी जयसिंह और जगदेव पवार की वात प्रसिद्ध है। × × × सिद्धराज जयसिंह देव विक्रमी संवत् ११५० में पाट बैठा और ४६ वर्ष तक राज्य किया × × × जगदेव पवार के विषय में नैणसी की ख्यात में परमारों की एक वंशावली में लिखा है कि उदवन्य (चन्द) अथवा उदयादित्य नामक पंवार के दो पुत्र रणधवल और जयदेव (जगदेव) हुए जिनमें रणधवल तो राजधानी में राज्य करता रहा और जगदेव ने सिद्धराज सोलंकी की चाकरी ग्रहण की और कंकाली को अपना मस्तक दिया।'[1] 'वीरमदे'—विक्रमी संवत् १३३६ से १३५४ के बीच जालोर में रावल सामन्तसिंह राज्य करता था। उसके कान्हड़दे और मालवदेव नामक दो पुत्र हुए। पिता के बाद ज्येष्ठ कुमार कान्हड़दे जालोर की राज्यगद्दी पर बैठा। इसी कान्हड़दे का परमप्रतापी वीर पुत्र वीरमदे हुआ।'[2]

पाबूजी राजस्थान के वीर एवं अलौकिक शक्ति दोनों रूप में प्रसिद्ध हैं। इनकी वीरता की कई कहानियां हैं। इन्होंने गायों और अनाथितों की रक्षा में अपने प्राण होम दिये थे और कठोर प्रतिज्ञाओं का पालन अपने जीवन में किया था। इनकी वीरता के कार्य राजस्थान में—'पाबूजी रा परवाड़ा' नाम से प्रसिद्ध हैं। इनके नाम से अनेक सार्वजनिक मेले लगते हैं। जगह-जगह पर इनके मन्दिर बने हुए हैं जहां इनकी पूजा होती है। ग्रामीण जनता की अनन्य भक्ति इनके प्रति देखी जाती है।

इन ऐतिहासिक वातों की कई विशेषताएं हैं। सर्व प्रथम इन ऐतिहासिक वातों द्वारा प्राचीन इतिहास की रक्षा हुई है। इन ऐतिहासिक कथाओं के विश्लेषण का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष है—उस समय के समाज का यथा तथ्य वर्णन। प्रायः यथातथ्य कथाओं में राजस्थान के रजवाड़ों और दिल्ली की सत्ता के आन्तरिक सम्बन्धों का पता चलता है। इसके अलावा इतिहास प्रसिद्ध जितने भी वीर, दानी और महापुरुष हुए हैं उनका वर्णन अपनी वातों में वात लेखकों ने किया है इस प्रकार ये वातें उन प्रसिद्ध आत्माओं को आज तक जिन्दा रखने में सहायक

---

(१) राजस्थानी वातां—स्व० श्री सूर्यकरण पारीक, (टिप्पणी), पृ० २००
(२) —वही— „ पृ० २०४

हुई है। इन वातों में इसके साथ साथ दुर्ग, स्थान विशेष का वर्णन भ्र घटनाओं का जो वर्णन मिलता है उसके द्वारा भी इतिहास की रक्षा हुई है राजपूत जाति एवम् उसके प्रधान देशों का वर्णन हमें इन वातों में मिलता है अगर ये वातें न लिखी गयी होतीं तो इन सबके विषय में हम अनभिज्ञ रहते—हमारा अतीत केवल गुप्त ही रहता—किन्तु इन वातों ने अतीत की पोथी हमारे सामने खोलकर रख दी है—हम उसे पढ़ते जाय पृष्ठ के पृष्ठ खोल जाय और प्राचीन इतिहास से अवगत होते जाय। राजपूत जाति के वि मे ही अधिकाश वातों की रचना की गयी है।' आजीवन युद्ध करने के लि अदम्य उत्साह रखना, सिर कट जाने पर घन्टों युद्ध करते रहना, आत्म गौर की भावना से प्रेरित होकर अपना मस्तक स्वय काट कर रख देना—ये मनग कपोल कल्पनाए ही नही वरन् ऐतिहासिक तथ्य हैं, जिनका कर दिखाना यदि किसी जाति के लिये सभव है तो वह राजपूत जाति है।'[1]

२. धार्मिक वातां—

देवताओ सम्बन्धी वाता—जो वातें धर्म से सम्बद्धित होती हैं वे धार्मिक वातें कहलाती है। इन धार्मिक वातों में देवी-देवताओं, अवतारों एवम् लोक-देवताओं की वातें आती हैं। धर्म कथाओं ही से लोक वार्ता साहित्य का आरम्भ हुआ है। ये धर्म कथायें सूर्य और अन्धकार के संघर्ष तथा अन्य प्राकृतिक घटनाओं के रूपकात्मक स्वरूप पर बनी हैं। धर्मकथा की उत्पत्ति का मूल उन शब्दों मे निहित है, जो रूपकालङ्कार की भांति प्रयोग मे आये हैं। आगे चलकर रूपक लुप्त हो गये। वे अवस्थाएं भी विस्मृत हो गयीं, जिनमे इन शब्दों का रूपकवत् प्रयोग हुआ था और वे शब्द ही 'धर्म कथा' के आधार बन गये। इसके अलावा धार्मिक वातों के मूल में एक और तथ्य है। वह तथ्य यह है कि इनका आविर्भाव हमारी बर्बरता से आतङ्कित युग मे हुआ। इनका सम्बन्ध उस काल के मनुष्यों के कृषि-कर्म तथा प्रजनन-कर्म से है। कृषि-कर्म और प्रजनन-कर्म में जिन भयों और आशंकाओं का पद-पद पर उदय होता है, उन्हीं के आधार पर धर्म कथाएं चल पड़ीं। मनुष्य प्रकृति की शक्तियों से डरा होगा और उसने प्रकृति के सभी अंगों को जैसे सूर्य, चन्द्र वरुण, मित्र, इन्द्र आदि शक्तियों को देवता मान लिया और उसकी पूजा करने लगा।

---

(१) 'राजस्थानी वातां'—स्व० श्री सूर्यकरणजी पारीक, भूमिका

धर्म और नीति की शिक्षा देने के लिये लोक कथाओं [illegible] है। राजस्थान के ग्रामीण जन किन-किन देवताओं की पूजा करते हैं, उनकी प्रस-न्नता के लिये कौन-कौन से उपाय करते हैं तथा पूजा में जो-जो विधि-विधान सम्पादित किये जाते हैं उन सबका वर्णन इन वातों में सहज ही में मिल जाता है। धर्म ही जीवन का प्राण बन गया है। यदि यह कहा जाय कि इनकी संस्कृति धर्म के ताने-बाने से बुनी-गई है तो इसमें कुछ अत्युक्ति न होगी। प्राचीन भारतीय साहित्य के अनुशीलन करने से पता चलता है कि उसके निर्माण में धर्म की ही प्रेरणा रही है। जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि धर्म ही जन-जीवन का प्राण है अत: वात साहित्य में इसका प्रतिबिंब दिखाई पड़ना स्वाभाविक ही है।

राजस्थानी वातों में अनेक प्रकार के धार्मिक विचार, विश्वास, रूढ़ियों और परम्पराओं की उपलब्धि होती है। भाग्यवाद के प्रति निष्ठा भी इन वातों में दिखाई पड़ती है।

इन कथाओं की मूल भावना विश्व की मंगलकामना करना ही है। ये अधिकांश तौर पर सुखान्त ही होती है, दुखान्त नहीं। सारी वात में चाहे कितनी ही दुखान्त घटनाएँ वर्णित हो किन्तु उन सबका अन्त सुखमय ही होता है। इनका अन्त प्राय (धार्मिक वातों का) इस प्रकार होता है—[illegible] जिस प्रकार अमुक व्यक्ति का कल्याण हुआ वैसा ही सबका कल्याण हो। इसके अतिरिक्त इनमें सत्य की विजय प्रदर्शित की जाती है। [illegible] कथाओं के पढ़ने से हृदय पर धर्म का प्रभुत्व स्थापित होता है। [illegible] मुहावरों में भी धर्म के अनेक तत्व विद्यमान रहते हैं।

नीचे हम उनसे सम्बन्धित एक कथा को उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत करते हैं.—
एक बूढ़ी माई ही, जिकी प्रापका तरणापा मे हणमान जी की सेवा-पूजा करणँ को नेम ले लियो हो। वा पाणी की गड्डी ग्रर चूरमा की पींडियो ले ज्याती, बालाजी के भोग लगाती ग्रर हाथ जोड़ कर कहती—'हे हणमानजी महाराज, मैं तेरी तरणापा मे सेवा करू तूं मेरी बुढापा में सहाय करिये बाबा !' समय पाकर वो ने बुढापो ग्रायो जद हणमानजी विचारीक—ईं बूढ़ी माई ग्रापका तरणापा मे म्हणी सेवा बन्दगी करी है, जे मैं ईं की सहायता न करस्यूं तो ग्रागानें मन्नें कुण पूजसी—कुण मानँगो ? जिको, हणमान जी महाराज रो-जीना की ग्रावे ग्रर 'हाथ मे घोटो, लाल लगोटो ले बुढी माई रोटो' यूं कह कर सवा सेर को रोटो लूण की डली ग्रर घीको भर खांड दे ज्यावें। बुढी माई हो, जिको रात दिन हे हणमानजी महाराज, हे हणमानजी महाराज रट बो करें। या देखकर बीका पोता-पोती हा, जिका ग्रापस में बतलाया—ग्राप-णली दादी है जिको सारे दिन, हणमानजी, हणमानजी कर बो करें है सो ईंने कोठला कै भीतरला खरा मे गेरदा तो राद कट ज्यावें। जरणा पाछे बुढी माई नें कोठला मे गेर कर ग्रागे किवाड़ ढक दिया। उठें बी हणमानजी ग्रावें ग्रर 'हाथ मे घोटो, लाल लगोटो, ले बुढी माई रोटो'—कह कर बोई सवा सेर को रोटो, लूण री डली ग्रर घीको भर खांड बो दे ज्यावें। कई दिन बीतगा जद बुढी माई का पोता-पोती फेरू बतलाया—रे इतणा दिन होग्या ग्रापणली दादी तो मरगी होसी देखो तो सरी—सो कोठला नें खोल कर देखें तो बुढी माई ग्रोंसी जागती बैठी है ग्रर मोटी होरी है। जरणा देख कर हैरत मे ग्राग्या ग्रर बुढी माई नें पूछी दादी माफी बताय के बात है ? म्हे तो जाण्यां क तूं कदेस की मरगी होसी पण तूं तो म्हा मगाम न बैठी है। जणा बुढी माई बोली —भाई, ईं मे ग्रचरज की के बात है। मन्नें तो मेरा हणमानजी महाराज की [illegible] है बो हाजरा हजूर [illegible] ग्राधार है बोई निर्धनियां न धन दे, निपुत्रियां न पुतर दे, कोढ्यां ने कंचन सी काया दे, ग्रांधलियां न ग्रांख दे। [illegible] हूटै है। ग्रर बुढी माई का पोता-पोती हा, जिका स्कूल मार बैठगा। हणमानजी महाराज हा जिका [illegible] ग्राया ना बुढी माई का पोता-[illegible] महाराज, [illegible] ईं दादी पर [illegible] [illegible] ? जद हणमानजी बोल्या—'ईं बुढी माई [illegible] मेरी सेवा करी ही, मैं ईं की बुढापा में [illegible] [illegible] [illegible]

करियो—कहता पर सुणता पर, हुकारा मरता पर । भन्तो आवे, रीतो जावे बावलिया ।'[1]

इसी प्रकार से अन्य देवताओं की अलग अलग प्रकार से कहानियां कही गई हैं। पर सभी बातों में एक ही भावना निहित रहती है और वह है लोक मंगल की भावना। देवताओं की तरह देवी की भी पूजा यहां अधिकतर होती है। दुर्गा, भवानी, शक्ति, शीतला आदि माताओं की पूजा की जाती है। छोटे बच्चों को जब चेचक निकलता है और वे कष्ट से पीड़ित होते हैं तब उनकी पीड़ा को दूर करने के लिये शीतला माता की पूजा की जाती है। शीतला देवी इस रोग की अधिष्ठातृ देवी मानी जाती है। ऐसा धार्मिक विश्वास है कि शीतला माता की पूजा करने पर चेचक रोग ठीक हो जाता है, उग्र रूप धारण नहीं करता।

देवियों की धार्मिक कथाओं के अतिरिक्त भगवान के भक्तों की भी धार्मिक कथायें प्रचुर मात्रा में मिलती हैं। ऐसी ही एक कथा यहां नीचे प्रस्तुत है:—

'ध्रुव की कथा'—'ध्रुव उत्तानपाद का लड़का होता है। वह राजा की दुहाग प्रदान रानी का लड़का है। राजा एक दिन ध्रुव को अपनी गोद में लिये हुए राज-सभा में बैठता है इस पर राजा की सुहाग दी हुई रानी (ध्रुव की मासी) राजा को ध्रुव को गोद से उतारने के लिये कहती है, ध्रुव को कान पकड़ कर बाहर निकाल देती है। ध्रुव अपनी मां के मना करने पर भी भगवान को तपस्या करने के लिये जंगल में जाता है। वहां वह घोर तपस्या करता है। भगवान नारद को ध्रुव की तपस्या भंग करने के लिये भेजते हैं। नारद ध्रुव को समझाते हैं कि उसे ५ वर्ष हो गये हैं परन्तु भगवान अभी तक उसे नहीं मिले—भगवान नाम की कोई चीज नहीं है। तू वापस चला जा। परन्तु ध्रुव मानता नहीं है और अपनी तपस्या को जारी रखता है। भगवान आते हैं—उस पर प्रसन्न होकर, उसे अपने साथ स्वर्ग में ले जाते हैं। ध्रुव वहां पर तीन दिन रहता है—फिर भगवान उसको मृत्यु लोक में वापिस जाने को कहते हैं। भगवान से ध्रुव यह वरदान ले लेता है कि जब तक यह संसार रहेगा तब तक उसका नाम भी अमर रहे। मृत्युलोक में वापिस आकर ध्रुव राज्य सुख भोगता है और मृत्युलोक छोड़ने पर तारा मण्डल में राज्य करता है—

---

(१) द्रष्टव्य—'राजस्थानी महिला व्रत-कथा'—म० श्री प० झाबर मल्ल शर्मा (मरु भारती अक्टूबर '६०) पृ० ४०।

अभी तक भी ध्रू तारा मण्डल में घटन है।'[1]

कुछ धार्मिक कथायें नेम (नियम) सम्बन्धी भी हैं। नित्य किसी बात नियम पूर्वक करना चाहिये—चाहे वह कैसी ही हो—एक न एक दिन अवश्य ही फल प्राप्ति होती है। इसी बात को लेकर निम्न लिखित कहानी (बात) रचना की गई है:—

'बात नेम की'—'एक ब्राह्मण बहुत ही गरीब होता है, अनपढ़, गवार और आलसी प्रकृति का। उसका विवाह भी हो जाता है; उसकी स्त्री उसको कमाने के लिये कहती है पर वह कहता है कि 'तौंमड़ी' ही मेरा देवता है—मैं नित्य नेम, स्नान, ध्यान कुछ नहीं करता। ब्राह्मणी उसको एक नेम (नियम) धारण करने को कहती है। ब्राह्मण अपने पड़ौसी के गधों को नित्य सवेरे उठते ही देखने का नियम ब्राह्मणी के कहने के अनुसार धारण कर लेता है। एक दिन पड़ौसी के गधे जगल मे चले जाते हैं, ब्राह्मण अपने नियम के अनुसार उन्हें न पाकर जगल में ढूंढने जाता है; वहां वह देखता है कि कुम्हार धन के चरु खोदकर बाहर निकाल रहा है। वह वहां पहुंच जाता है—कुम्हार उसे आधा धन दे देता है। इस प्रकार से नेम रखने के कारण ब्राह्मण और ब्राह्मणी सुखी-प्रसन्न होकर रहने लगते हैं।'[2]

इन धार्मिक कथाओं के पश्चात् लोक देवताओं की बातें आती हैं। राजस्थानी जन-जीवन मे पूजे जाने वाले देवता, ये लोक-देवता ही हैं। इनके विशेष पर्व होते हैं—उस दिन इनका पूजन होता है। इनके मन्दिर भी स्थान-स्थान पर बनाये जाते हैं। ये लोक-देवता विशेषतौर से नीच जाति के लोगों मे अधिक मान्य होते हैं। जैसे रामदेवजी की पूजा अधिकतर ढेड, भगी, चमार, आदि अछूत जातियां ही करती हैं। इनके अतिरिक्त ऊँचे वर्ग के लोगों में भी रामदेवजी की पूजा होती है पर इन अछूतों से कम। ये लोक-देवता अपने साहसिक एवं उपकारक कार्यों के कारण ही घर-घर में पूजे जाते हैं।

निष्कर्ष रूप मे केवल इतना ही कह सकते हैं कि यद्यपि ये धार्मिक बातें बहुत ही कम देखने में आयी हैं, किन्तु जो भी देखने को मिली हैं वे देवी, देवताओं

(१) द्रष्टव्य : 'श्री भारतीय विद्या मन्दिर शोध प्रतिष्ठान, बीकानेर में संग्रहित एक लोक-कथा के आधार पर।'

(२) — वही —

अवतारों एवं भगवान के भक्तों से सम्बन्धित मिलती हैं। भगवान शंकर, पार्वती राम, कृष्ण, हनुमानजी, गणेशजी, लक्ष्मीजी, भैरूजी, देवी शक्ति के रूप में — आदि देवताओं-देवी की पूजा और उनसे कल्याण प्राप्ति ही इन वातों का विषय रहता है। इनके अतिरिक्त गोगाजी, रामदेवजी, पाबूजी, वीरमदेवजी, आदि लोक-देवता भी अपने शौर्य एवं लोक-कल्याण में जीवन होमने के कारण जन जीवन के देवता बन गये हैं। जिनकी विशेष पर्व एवं निश्चित दिन पर पूजा की जाती है।

इन धार्मिक वातों की एक विशेषता जो सबसे महान् है वह है इनकी विश्व बन्धुत्व की भावना। क्योंकि जगत् में समस्त मानव की मंगल कामना ही इन वातों का एक मात्र उद्देश्य रहा है। यद्यपि बात की शुरूआत में भगवान को प्राप्त करने के लिये सेवक तपस्या करता है—उपासना करता है—वर्षों ध्यान लगाये बैठा रहता है – एक दिन भगवान आते हैं और वरदान देकर उसका कल्याण करते हैं किन्तु प्रत्येक बात के अन्त में हम यह कामना पाते हैं लेखक की ओर से कि—'हे महाराज, जैसा अमुक को तूठा वैसा ही सबको तूठना' और यही इन वातों की विशेषता है जो अन्यत्र नहीं पायी जाती। ये केवल अपना ही कल्याण नहीं चाहते, किन्तु सारे मानव-समाज की कल्याण कामना करते हैं। धर्म के बिना इस प्रकार की लोक-मंगल-कामना सम्भव नहीं है— सच तो यह है कि धर्म की आधार शिला पर ही लोक-साहित्य की सृजना हुई। अधिक न कह कर थोड़े से शब्दों में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि यदि लोक-साहित्य के निर्माण में धर्म का आधार प्राप्त न होता तो उसका इतना सजीव, स्वस्थ तथा सबल होना संभव न था क्योंकि धार्मिक भावनाओं से जन जीवन ओत-प्रोत है और इसी धार्मिक प्रेरणा से प्रेरित होकर वातकारों ने धार्मिक वातों की सर्जना की है।

संस्कार सम्बन्धी वातां

जैसा कि पिछले पृष्ठों में धार्मिक वातों का विवेचन करते समय यह बतला दिया गया है कि हमारे जीवन के सभी कृत्य धर्म से ओत-प्रोत हैं। भारतीय धर्म शास्त्रियों ने षोडश-संस्कारों का विधान किया है। जन्म से लेकर मृत्यु तक हमारे जीवन में कोई न कोई संस्कार होता ही रहता है। यद्यपि मुख्य संस्कारों की संख्या सोलह है, परन्तु निम्नलिखित संस्कारों का ही प्राधान्य देखा जाता है। वे इस प्रकार हैं.

१. गर्भाधानम्
२. पुंसवनम्
३. सीमन्तोन्नयनम्
४. जात कर्म
५. नाम करणम्
६. अन्न प्राशनम्
७. चूडाकरणम्
८. उपनयनम्
९. समावर्तनम्
१०. विवाह
११. द्विरागमन और
१२. मृत्यु संस्कार

इन उपर्युक्त मुख्य १२ संस्कारों में से भी पुत्र जन्म, मुण्डन, यज्ञोपवीत, विवाह, द्विरागमन और मृत्यु से संबद्ध संस्कार-प्रधान संस्कार माने जाते हैं। इन अवसरों से संबन्धित बातों से गीत ज्यादा प्रचलित हैं, जिन्हें स्त्रियां अपने कोकिल कण्ठ से गा-गा कर अपने हार्दिक उल्लास और आनन्द को प्रकट करती हैं। जहां इन गीतों में प्रत्येक संस्कार के अवसर पर प्रसन्नता एवं आनन्द दिखाई देता है वहां मृत्यु पर अमिट विषाद रेखा दृष्टिगोचर होती है। इन्ही संस्कारी से सम्बन्धित थोड़ा सा वर्णन हम नीचे दे रहे हैं:—

पुत्र जन्म भारतीय ललनाओं की ललित कामनाओं की चरम परिणति है। देवोपासना एवं अर्चना के फलस्वरूप उन्हें पुत्र-प्राप्ति होती है। इस अवसर पर पास पड़ोस की स्त्रियां एकत्र होकर गीत गाती हैं। प्राचीन काल में पुत्र की प्राप्ति का अवसर प्रधान अवसर समझा जाता था और अब भी समझा जाता है। इस अवसर पर नाच गाने की प्रथा थी वह आज भी विद्यमान है।

बालक जब बड़ा हो जाता है तब उसका मुण्डन संस्कार किया जाता है। इसे संस्कृत में 'चूड़ाकर्म' कहते हैं। मुण्डन षोडश संस्कारों में एक प्रसिद्ध संस्कार है। इस संस्कार के पहिले बालक के बालों का काटना निषिद्ध है। बालक के जन्म के पहिले, तीसरे, पांचवें, सातवें, विषम—वर्ष—वर्ष में ही इस कार्य को सम्पादित किया जाता है। इस अवसर की महत्ता समाज में काफी बड़ी है। किसी धार्मिक देवता के सामने ले जाकर बालक के बाल काटे जाते हैं और ... कर प्रसाद चढ़ाया जाता है।

मनु ने लिखा है कि मनुष्य जन्म से शूद्र उत्पन्न होता है परन्तु संस्कारों के करने के उपरान्त ही वह 'द्विज' कहलाता है।[1] अतएव इस संस्कार को 'उपनयन' संस्कार की संज्ञा दी गयी है। यज्ञोपवीत धारण करने के समय से ब्रह्मचारी को कुछ व्रतों अर्थात् नियमों का पालन करना आवश्यक होता है। द्विजातियों —ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य—के लिये यज्ञोपवीत धारण करना नितान्त अनिवार्य है। यज्ञोपवीत संस्कार ब्राह्मण बालक का आठ वर्ष की अवस्था में, क्षत्रिय बालक का ग्यारहवें वर्ष की अवस्था में और वैश्य-बालक का बारहवें वर्ष की अवस्था में किये जाने का विधान शास्त्र सम्मत है। स्त्रियां इस अवसर पर गीत गाती हैं। एक उत्सव भी होता है।

विवाह हमारा सबसे प्रसिद्ध और प्रधान संस्कार है। संसार की सभ्य, अर्धसभ्य और असभ्य सभी जातियों में यह संस्कार बड़े उत्साह के साथ मनाया जाता है। मनुष्य के जीवन में विवाह का जितना महत्व है उतना शायद सम्भवतः अन्य संस्कार का नहीं। यही कारण है कि इस संस्कार का विधान संसार के प्रत्येक भाग में किया जाता है। विवाह हमारे धार्मिक-जीवन का एक आवश्यक अंग है। भगवान मनु ने आठ प्रकार के विवाहों का उल्लेख किया है।

प्रत्येक राजस्थानी जाति एवम् समाज में विवाह की प्रथाएं भिन्न-भिन्न हैं। स्थान एवम् समय के प्रभाव से इन प्रथाओं का वर्णन करना संभव नहीं।

विवाह के अवसर पर गीत वर एवम् वधू दोनों के घर में गाये जाते हैं। विवाह के अवसर पर अनेक प्रकार के विधि-विधान किये जाते हैं।

विवाह के पश्चात् द्विरागमन संस्कार आता है। गवना शब्द संस्कृत के 'गमन' का अपभ्रंश रूप है, जिसका अर्थ 'जाना' है। कहीं-कहीं जातियों में विवाह के दूसरे दिन ही लड़की की विदाई उसके ससुराल के लिये कर देते हैं। परन्तु कुछ लोग विवाह के पश्चात् किसी अन्य निश्चित तिथि पर पुत्री को विदा करते हैं और इसे ही 'गवना' कहा जाता है। विवाह के समान यह अवसर भी धूम-धाम से मनाया जाता है। इस अवसर पर वर का पिता बारातियों के साथ वधू के घर नहीं जाता। इस समय के गाये जाने वाले करुण गीतों को सुनकर पाषाण हृदय भी द्रवित हो उठता है।

---

(१) जन्मना जायते शूद्रः, संस्कारात् द्विज उच्यते, मनुस्मृति।

जन्म से मृत्यु तक अनेक संस्कार सम्पादित किये जाते हैं। मृत्यु मानव-जीवन का अन्तिम संस्कार है । यह संस्कार संसार के सभी सभ्य और असभ्य देशों में किसी न किसी रूप में अवश्य किया जाता है । राजस्थान में चूंकि कई जातियाँ निवास करती है अतएव हर एक का मृत्यु-संस्कार मनाने का अन्य प्रकार निश्चित है । मुसलमान लोग हिन्दुओं की तरह मुर्दे को जलाते नहीं बल्कि दफनाते हैं। इसी प्रकार रामदेवजी (लोक-देवता) के मानने वाली, थोरी, ढेढ आदि अछूत जातियां अपने मरे हुए सम्बन्धी को जलाते नहीं बल्कि दफनाती है (खड्डे में नमक डाल कर गाडते हैं) । यद्यपि वे हिन्दू हैं परन्तु फिर भी इनका मृत्यु-संस्कार मुसलमानों की तरह ही सम्पन्न होता है।

भारतीय धर्मशास्त्रकारों ने जो षोडश संस्कारों का विधान बतलाया है वह भारत के अन्य भागों की तरह इस मरु भूमि राजस्थान में भी उसी रूप में विद्यमान है, यह ऊपर वर्णित किया जा चुका है। इन सब संस्कारों के जिस प्रकार गीत प्रचलित हैं उस प्रकार अलग-अलग संस्कार के लिये अलग-अलग वार्ता देखने में नहीं आयी । किन्तु इन संस्कारों का मनाया जाना कहानियों में कहीं-कहीं वर्णित अवश्य है । ये संस्कार परम्परागत होने के कारण मनुष्य के जीवन के एक अंग बन गये हैं। जिसे वह (मनुष्य) अपने आप समाज में रहता हुआ मनाता जाता है । इसके लिये साधारण आदमी कभी नहीं सोचता कि ये संस्कार क्या होते हैं किन्तु इनको वह मनाता अवश्य है चूंकि उसके पुरखे मनाते करते आये हैं।

इस प्रकार पुरखों से परम्परागत चले आते हुए ये संस्कार जो हिन्दू जाति के एक अंग बन गये हैं—समाज में अपना अलग एक सांस्कृतिक महत्व रखते हैं। इन संस्कारों द्वारा हमारी संस्कृति के विषय में पता लगाना सहज ही है। अस्तु, अन्त में यही लिखूंगा कि ये संस्कार भी हमारे धार्मिक-जीवन से सम्बन्धित हैं । इन अवसरों पर जो उत्सव, भोज आदि किये जाते हैं उनसे पता लगता है कि धर्म में समाज का विश्वास कितना गहरा है।

व्रत-कथाएं

भारतीय लोक साहित्य का एक महत्वपूर्ण अंग व्रत-कथाएं है । लोक-कथाओं के साथ-साथ व्रत-कथाएं भी भारतीय संस्कृति और साहित्य का महत्वपूर्ण अंग है। विभिन्न उत्सवों और व्रतों तथा त्यौहारों के सम्बन्ध में प्राचीन इतिवृत्त प्राप्त उपलब्ध है, इतिवृत्तों के ही आधार पर उत्सवों, व्रतों और त्यौहारों का धीरे-धीरे

हुआ है। राजस्थान, साहित्य क्षेत्र में किसी भी प्रकार पीछे नहीं रहा है और न रहेगा। राजस्थानियों ने रामायण, महाभारत और पुराणान्तर्गत सहस्रों कथाओं का अपनी मातृ-भाषा राजस्थानी में प्रण्यन किया है। 'प्रायः निरक्षर समाज में लोग मौखिक कथाएं सुनाया करते हैं। शिक्षित वर्ग ने अपनी मातृ-भाषा में संस्कृत ग्रन्थों में लिखी कथाओं का बड़ा सरल अनुवाद कर जनता जनार्दन का बड़ा हित साधन उसके साथ-साथ साहित्य की भी सेवा की है। इस प्रकार के साहित्य में व्रत-कथाओं क पद्मपुराण आदि से अनुवाद करने का महान कार्य गिना जा सकता है।'[1]

इन व्रत-कथाओं का लोगों के सामान्य जीवन पर प्रभाव पड़ता है। कुछ एक व्रत-कथाओं के उदाहरण नीचे दिये जाते हैं —

हिन्दुओं में कार्तिक महीना बड़ा पवित्र समझा जाता है। अनेक महत्वपूर्ण भारतीय त्यौहार इसी महीने में पड़ते हैं। स्त्रियां प्रति दिन सूर्योदय के पूर्व स्नान करती हैं जिसे 'काती नाहणो' कहा जाता है। 'तिलक महाराज की का'णी'— में एक नेम अवश्य ही रखना चाहिये इस बात पर जोर दिया गया है। अन्त में लेखक सबके कल्याण के लिये भगवान से प्रार्थना करता है कि जिस प्रकार इस छोरे को तूठे उसी प्रकार सबको तूठना—आधी को पूरी करना और पूरी को अत्यधिक बढ़ाना। 'सूरज भगवान की का'णी'— में सूर्य भगवान सबको खिला कर फिर स्वयं खाते हैं—अतएव इनसे यह कामना की गयी है कि हे भगवान ! भूखा उठाणजे पर भूखा सुवाणजे मत। अर्थात् संसार में हर एक पुरुष तथा स्त्री एवं अन्य प्राणी खा-पीकर सोयें यह कृपा भगवान हम पर करें।

'आस माता री वात'[2] —कहानी इस प्रकार है—चार भाई एक भूखा, कमाने निकला—आस माता का मिलना—धन-धान्य पूर्ण हो जाना—फिर स्त्री और मां-बाप का मिलना, और सुख पूर्वक जीवन व्यतीत करना। इस बात में यह कामना की गयी है कि जैसा इनको तूठी वैसे ही आस माता सबको तूठे।

'गणेश भगवान री वात'[3]—सारे संसार का सुख जिस प्रकार पांच वर्ष के

---

(१) 'शोध पत्रिका'—दिसम्बर-मार्च ५४-५५
(२) भारतीय विद्यामन्दिर शोधप्रतिष्ठान के सौजन्य से प्राप्त—व्रत कथाएं।
(३) — वही —

वार की अपनी-अपनी कथा है। परन्तु सब वारों की कथा अलग-अलग रूप में निबन्ध का कलेवर बढ जाने के डर से देनी संभव नहीं अतएव नीचे केवल वृहस्पतिवार की कथा ही उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत की जाती है—

'कहानी वृहस्पतिवार' की—[1] 'एक ठाकर हो एक बींकी ठुकराणी ही। आगी बुभती तो दीवो कोनी बुभण देता। अर दीवो बुभतो तो आगी कोनी बुभण देता। एक दिन इसो सजोग बैंठयोक् दीवो अर-आग दोन्यूं ई बुभ गया। जणा ठकुराणी पडोसण कै गई, बोली—आग घाल। पडोसण कही—कहाणी सुणू हूँ। ठुकराणी पूछी—क्यां को कहाणी सुणै है? जद बोली—विस्पतजी की। ठुकराणी कहयो—विस्पतजी की कहाणी सुण्या में के होवें? जणा कह्यो धन्न होवें, धन होवें, अर बेटा होवें। जद ठुकराणी बी विस्पतजी की कहाणी सुणनै को नेम ले लियो। एक दिन बिरामण को भेप करके बिस्पतजी आया बोल्या—ठुकराणी, म्हानै वासो देगी कै? ठुकराणी कह्यो—महाराज घणी ई रामजी की दियडी जगां पड़ी है, ठहर ज्याओ। जद बिरामण ठहरग्यो। ठुकराणी पड़ोसण कै गई, बोली—आण, सेर चूण अर पाव दाल उधार दे दे। पड़ोसण ही जिकी चून अर दाल दे दी। ठुकराणी दाल चूरमा की रसोई करकै बिस्पतजी नै जिमा दिया। एक दिन लोगां बात बणाई, कह्यो—ठाकर! तेरी लुगाई तो धायाधींगडनै घर में राख लियो धन की भूखी। जद ठाकर बी बिरामण नै आपका घरमा में काड दियो। बिरामण चलो गयो अर ठाकर कै खाणै दाणै को ठिकाणू ई कोनी रिह्यो जद दुःखी होकर भूवांनै पीर भेज दी। बेटा नै कमावण भेज दिया अर आप बी कमाण खाण की चिन्ता में निकळगो। जणा पाछै एक दिन बिस्पतजी ठुकराणी कै सुपनै आया। कह्यो ठुकराणी, दुखी है क् सुखी? ठुकराणी बोली महाराज थे चल्या गया जणा सुखी कै करणी सैं होवैं हा? अर ठाकुरजी का ठाडा पग पकड़ लिया। जाण कोनी दिवा। जद पाछै नो निध बारा सिध होगी। भू आपकै पीरां सैं आयगी बेटा दिसावरां सैं आयग्या। जणा बिस्पतजी महाराज बोल्या ठुकराणी आनन्द है ना। ठुकराणी बोली महाराज ठाकर घरां कोनी आया। जद बिस्पतजी ठाकर नैं सुपने मे कह्यो—ठाकर, तेरे घरा क्यूं जायना तेरा बेटा लुगाई उडीक रह्या है। जद ठाकर बोल्यो—मेरे सोमण सूत उलभयो पड्यो है मेरा घरां जाणू क्यां बनै? जद बिस्पतजी कह्यो सवा पहर दिन चढ्यां पहलां तप्पड बिछाकर

(१) शोध-पत्रिका—दिसम्बर मार्च—पृ० ५४-५५

बैठ ज्याये सो भापैई लेणियां ले ज्यायांगा भर देणियां दे ज्यायंगा। जि ठाकर सवा पहर दिन चढ्या पहली तप्पड़ बिछाकर बैठ्यो सो ले गियां जिका लेगया भर देणिया देगया। जद ठाकर राजा नै बोल्यो—म्हानै सी दिरावो म्हारे घरां जास्यां। जणां राजा कह्यो—थारी लुगाई नै टाबरां भ्रठे ई बुलाल्यो। कांई करस्यो घरां जाकर? जद ठाकर कह्यो—ना महारा म्हानै तो घरां जाणकी ही सीख दिरावो। जद राजा सीख देयदी भर ठाक भापकै घरां भागयो। गैला में गांव को पहला पोत एक भादमी मिल्यो, जि नै पूछी म्हारला घरका क हालचाल है? जद वो बोल्यो थारै घर पर बो बिरामण भासण लगायां बैठ्यो है सब बातां का ठाठ लाग रिह्या है। ठाक घरां भ्रा पूंच्यो। जद बिस्पतजी महाराज घोड़ा पर जींद मांड जाण लाग्या जद ठुकराणी बोली—महाराज, भाप कठ्यां चाल्या? जद बिस्पतजी बोल्या लोग निंदा करै जिको मैं तो जास्यूं। जद ठाकर-ठुकराणी पग पकड़ लिया भर कह्यो—हे महाराज, थानै गयां कस्यां सरै। जणा पाछै ठाकर-ठुकराणी बोल्यो—मेरी भाण का बीवैरा समचार भाया के। ठुकराणी नटगी। भर ठाकर घणूं-सारो धन लेयकर आपकी भाण कै चाल्यो। गैला में एक जाट के खेत भायो। जाट नै बोल्यो—चौधरी, मेरा बिस्पतजी महाराज की कहाणी सुणले। जाट बोल्यो—तेरा बिस्पतजी की कहाणी सुण्यां मेरे कं हाथ भासी? इतणी देर मे नाज बास्यूं जिको बारा महना खास्यूं। जद ठाकर भागा नै चाल पड्यो। पीछै सैं जाट के नारड़ा की तो टांग टूटगी अर जाट को भापको पेट दुखै लाग्यो। जाटणी रोटी लेयकर भाई वा बोली इतणी ई देर में के हुयो? जद जाट कह्यो—एक गैले बगलो बटाऊ बोल्यो मेरी कहाणी को हुंकारो दे दे। मैं तो नटग्यो। जद जाटणी हेलो मारयो—भ्रो गैले जाता बटाऊ! पाछो बावड़ तेरी कहाणी का हुंकारा मै देस्यूं। जणा ठाकर पाछो भायकर बिस्पतजी की कहाणी कही भर जाटणी हुंकारा दिया। जद नारड़ा की टांग संठगी भर जाट को पेट मोल होयग्यो। ठाकर भापकी भाण कै जाकर मोकळो धन दियायो भर गांवं में हेलो फिरा दियो कि बिस्पतजी की कहाणी भाठवें दिन सुणियूं भर भाठवें दिन नंई तो महीना में एक बार तो सुणियूं ई।'[1]

उपर्युक्त वर्णित व्रत-कथाओं भ्रोर वार-कथाओं के भलावा—भविष्यपुराण, जलम-भष्टमी री कथा, कजलीतीज व्रत री मां कथा, भनन्त देवीजी री कथा, बडमाव

(१) द्रष्टव्य : 'मरुभारती'—भक्टूबर १९६० पृ० ४२-४३

व्रत कथा महात्म, अगस्तरिषिमुर री कथा, एकादसी महात्म री कथा, पूरणमासी री कथा, चौथमाता कैंरड़ावाली री कथा, चंदरायण री कथा, नौरातरी व्रत कथा, महालिछमीजी री कथा आदि व्रत कथायें भी मिलती है।[1] प्रत्येक व्रत-कथा का अलग अलग संदेश, कामना एवं महात्म्य हैं।

व्रत-कथाओं से समाज की धार्मिक मान्यता का पता सहज ही में लग जाता है। प्रत्येक बात मे अपना एक संदेश निहित है। बातकार अन्त मे बातें के—सब के कल्याण के लिये प्रार्थना करता है—और प्रत्येक बात का महात्म्य कहा गया है। व्रत-कथायें लिपिबद्ध बहुत कम हैं—स्त्रियों के मुख पर विद्यमान ये व्रत-कथायें प्रत्येक धार्मिक पर्व, दिन व त्यौहारों पर सुन सकते हैं।

३. लौकिक वार्ता

हमारा प्राचीन साहित्य हमारे पूर्वजों से प्राप्त अमूल्यनिधि है। इस साहित्य-सम्पत्ति का मालिक कोई प्रान्त या राष्ट्र नहीं अपितु प्रत्येक मानव इस सम्पत्ति का भागीदार है। इस प्रकार विश्व-भर मे साहित्य हमे दो रूप मे मिलता है—एक वह साहित्य जिसको विकसित समाज ने जन्म दिया और दूसरा वह जिसकी सृष्टि लोक जीवन से हुई। जिस साहित्य की सृष्टि लोक-जीवन से हुई वही साहित्य-लोक-साहित्य कहलाया। ग्राम्य-जीवन से ओत-प्रोत लोक कथाओं और वार्ताओं मे तत्कालीन तथा भूतकालीन मानव-मनोदशा का परिचय प्राप्त होता है।

जिस प्रकार 'साहित्य' की परिभाषा नपे-तुले शब्दों मे अथवा किसी एक वाक्य में नहीं कर सकते, इसी प्रकार हम लोक-कथाओं की भी कोई एक निश्चित परिभाषा नहीं कर सकते। अंग्रेजी लेखकों ने इस दिशा में काफी कुछ कार्य किया है—और उन्होंने अपनी-अपनी ओर से विभिन्न प्रकार की परिभाषाएं भी दी हैं। किन्तु इन विद्वानों में भी एक मत नहीं है। एक वर्ग इसे 'नृतत्व-शास्त्र' की ओर घसीटता है तो दूसरा 'लोकवार्ता शास्त्र' की ओर। इस विवाद में कुछ परिभाषाएं हम नीचे प्रस्तुत कर रहे हैं[2]—

१. लोकवार्ता मे संस्कृति का साहित्यिक पक्ष है।
'Folklore is composed of literary aspects of culture.'

---

(१) द्रष्टव्य : शोध पत्रिका—दिसम्बर-मार्च पृ० ५४-५५

(२) (Journal of American Folklore Jan, March 1958, Vol. 66 No. 259 Page 1 to 17)

२. लोकवार्ता कला का वह स्वरूप है जिसका आधार मौखिक है ।
'That art form .. ..which utilize spoken language as its medium.'

३. लोकवार्ता संस्कृति के सौन्दर्यात्मक पक्ष की वास्तविक अभिव्यक्ति है ।
'The least tangible expression of aesthetic aspects of culture.—Herskovits.

४. लोकवार्ता मनुष्य के अमूर्त इतिहास का निर्माण है ।
'Folklore aimed to reconstruct the spiritual History of Mankind.'—Kreppe.

५. लोकवार्ता मानव समाज की व्यावहारिक अथवा अनुमानत जन्य संस्कृति है ।
'Folklore is traditional part of the culture.'—R. S. Boggs

६. परम्परा ही लोकवार्ता का मूल है ।
'Tradition is the touch-stone of Folklore.'

—Stith Thompson.

७. लोकवार्ता अतिजीवन का विज्ञान है ।
'Folklore is the science of Survivals.'—Carlos Vege.

इन उपर्युक्त परिभाषाओं से यह निष्कर्ष निकलता है कि लोकवार्ता में साहित्य, मौखिक आधार, सौन्दर्यात्मकता अमूर्त, इतिहास, अनुभव जन्य संस्कृति परंपरा तथा अतिजीवन का समावेश है । मेरे अपने विचार से हम यूं कहें कि लोक कथा मौखिक साहित्य का वह प्रमुख अंग है जिसमें हमें किसी राष्ट्र, देश, नगर अथवा जनपद के प्राचीनतम एवं आदि संस्कृति का स्पष्ट आभास मिलता है ।

परम्परागत मौखिक साहित्य में हमारी लोक कथाओं का स्थान बड़ा ही महत्वपूर्ण एवं सम्माननीय है इनमें लोक-जीवन का सुन्दर वर्णन पद्य एवं गद्य दोनों में हुआ है । गाथाए लोक-साहित्य का महत्वपूर्ण अंग है । जो चीज जन-मुख पर अवस्थित होती है, उसी का वर्णन इस साहित्य में होता है । राजस्थानी गाथाएं जन साधारण के इतिहास बोध का एक सुन्दर निदर्शन है । परम्परागत सुनी जाने वाली ऐतिहासिक व पौराणिक बातें लोक-कथाओं का रूप धारण कर लेती हैं । राजस्थान में लोक-कथाओं की अधिकता होने और मिलने के दो कारण हैं प्रथम तो यहां तेजस्वी और विशिष्ट चरित्र वाले व्यक्ति बहुत

अधिक हुए। वीरता और सतीत्व के प्रतिरूप स्त्री-पुरुषों की अधिकता होने से उनकी कथाएं अधिक प्रचारित हुई हैं। साथ ही उन कथाओं के कहने वाले और लिखने वाले भी यहां सबसे अधिक हुए हैं। राजस्थान में लोक-गाथायें और लोक-गीत दो प्रकार से मिलेंगे। एक तो वह बातें तथा गीत जो घर-घर प्रचलित हैं और दूसरे प्रकार के वे जिन्हें चारण, भाट, ढोली, ढाढी, बड़वे और कलाकार आदि सुनाते हैं। इन युग-युग से चली आती हुई रचनाओं में समय-समय पर परिवर्द्धन भी होता रहता है। जिन्हें हम उत्कृष्ट कोटि का काव्य कला और संस्कृति कहते हैं वे सब इसी के अंग-प्रत्यंग हैं। ये कथाएं विभिन्न जातियों और धर्मों तथा व्यक्ति विशेष से सम्बन्धित मिलेंगी।

इन लोक-कथाओं के वर्ण्य-विषय हैं—'राजा, पण्डित, पुरोहित, साधु, बाबा, जोगी, जती, नवाब, बादशाह, मौलवी, जाट, कुम्हार, तेली और चमार आदि के साथ-साथ पशु-पक्षी, दैत्य-राक्षस, भूत-प्रेत, पूर्व जन्म और भावी जन्म—इस प्रकार लौकिक और काल्पनिक जो कुछ भी हैं वे ही इन गाथाओं के विषय हैं × × × × सु-संस्कृत मानव ने जो कृत्रिम सीमायें बनाई वे लोक-साहित्य में टूटी हुई मिलेंगी। लोक साहित्य बंधन मुक्त है।'[1] लोक-साहित्य के पात्र लौकिक और अलौकिक सभी प्रकार के होते हैं। इस साहित्य में मानव-जीवन के उच्चगुण और दुर्गुण सभी से संबंधित कहानियां मिलेंगी। सभी प्रकार के मनुष्यों का चरित्र सुस्पष्ट मिलेगा। इन लोक कथाओं में अफीमचियों की कहानियां भी बहुत मिलेंगी। राजा, महाराजा, अमीर, उमराव से लेकर साधारण फकीर तक अमल खाया करते थे। शराब से ज्यादा अफीम का प्रचलन था।

लोक कथायें विभिन्न युगों की समाज-व्यवस्था पर बड़ा अच्छा प्रकाश डालती है। समाज में जो कुछ भी बुरी भली मान्यतायें और परम्परायें रहीं उनको ज्यों की त्यों ये लोक-कथायें बताती रहती हैं। ये कथायें तो स्वच्छ दर्पण के समान हैं जिसमें हम समाज का स्वरूप प्रतिबिंब रूप में जैसा भी है साफ एवं स्पष्टतौर पर देख लेते हैं।

राजस्थानी लोक-कथाओं—'बातों'-का वर्गीकरण विभिन्न प्रकार से किया जा सकता है। श्री अगरचन्द नाहटा के शब्दों में —

---

(१) 'कं रे चकवा बात' – रानी लक्ष्मीकुमारी चूंडावत-भूमिका - पृ० ५

'राजस्थानी शोध संस्थान वालों ने 'परम्परा' के वातों सम्बन्धी विशेषांक के लिये मुझे अपने ढंग से उनका वर्गीकरण करके सूची भेजी थी। वह इस प्रकार है:

ऐतिहासिक परम्पराबद्ध, सामाजिक, अलौकिक -परियों और देवताओं सम्बन्धी पौराणिक प्रकृति गवत्री, पशु-पक्षी और वनस्पति प्रेम कथाएं, उपदेशात्मक कहावती कथाए, पारिवारिक कथाएं, घटना-प्रधान तिलस्मी-जासूसी, बच्चों की कथाएं, उत्सव और त्योहार, व्रत कथाए, पशु चारण कथाएं, रोगनिवारण के लिये वात, संस्कार कथाए, हास्यात्मक, खेल सम्बन्धी, नीति विषयक, जातियों पर आधारित—नाई, जाट, चमार की कथाए, हाजिर जबावी, मनोवैज्ञानिक, प्रतीकात्मक, कुरीति निवारण, भूत-प्रेत की कहानिया, कलाकारों की कहानियां साम्राज्यवाद विरोधी कथाएं, बनजारों की कथाएं, भौगोलिक कथाएं × × × × × पर मैं संख्या दिखाने का अधिक पक्षपाती नहीं। ५-४ वर्गों में ही सारी कथाओं का समावेश हो जैसे गद्य, पद्य और मिश्रित। इसी तरह ऐतिहासिक, पौराणिक और काल्पनिक कथाएं तथा टीकाओं में अनुवाद रूप में।'[1]

उपरोक्त 'परम्परा' पत्रिका के द्वारा एवं श्री अगरचन्द नाहटा द्वारा किये गये वर्गीकरण के अतिरिक्त वर्ण्य-विषय की दृष्टि से इन वातों का विभाजन श्री कृष्णदेव उपाध्याय ने निम्न प्रकार से किया है:—

१. उपदेश-कथा, २. व्रत-कथा, ३. प्रेम-कथा, ४. मनोरंजन-कथा, ५. सामाजिक-कथा, ६. पौराणिक-कथा।[2]

डा० सत्येन्द्र ने ब्रज की लोक-कथाओं को निम्नांकित आठ श्रेणियों में विभाजित किया है:—

(१) गाथाए (२) पशु-पक्षी सम्बन्धी कथाएं (३) परी की कथाएं (४) विक्रम की कहानियां (५) बुझौवल सम्बन्धी कहानियां (६) निदर्शन गर्भित कहानियां (७) साधु-पीरों की कहानियां (८) कारण निदर्शक कहानियां।[3] कहने की आवश्यकता नहीं इनका विषय इनके नामों

(१) 'राजस्थानी वातों का संग्रह एवं प्रकाशन'—श्री अगरचन्द नाहटा ('वरदा' अप्रेल १९५९) पृ० १००
(२) 'लोक-साहित्य की भूमिका' - डा० कृष्णदेव उपाध्याय पृ० १२९
(३) डा० सत्येन्द्र—ब्र० लो० सा० अ० पृ० ८३

ही मालूम हो जाता है।

डा० दिनेशचन्द्र सेन ने बंगाल की लोक कहानियों को चार भागों में विभक्त किया है:—

१ रूप-कथा—(Supernatural tales) २ हास्य-कथा—(Humurous tales) ३ . व्रत-कथा—(Religious tales) ४. गीत-कथा—(Nursery tales)[1]

इनके अनुसार रूप-कथाएं वे हैं जिनमें अमानवीय एवं अप्राकृतिक, अद्भुत-वस्तु का वर्णन हो। दूसरी प्रकार की कहानियों का ध्येय हास्य उत्पन्न करना है। व्रत कथा किसी विशेष पर्व या त्यौहार के दिन कही जाती है। चौथी प्रकार की कहानियाँ वे हैं जिन्हें बच्चों को पालने में झुलाते समय कही जाती हैं।

इस प्रकार लोक-कथाओं के सम्यक् अनुसन्धान कर लेने पर उनकी अनेक विशेषताओं का पता चलता है। इससे पहले कि इनकी विशेषताओं के विषय में सविस्तार लिखा जाय हम कुछ प्रतिनिधि लोक कथाओं के उदाहरण लेते हैं—'बात फोफाणंद-री'—यह चारण दंपति के चातुर्य की सजीव कहानी है। फोफाणंद नाम का चारण पूरा निरक्षर भट्टाचार्य एवं कोई काम नहीं करता है। उधर चारणी ने प्रण ले रखा था कि वह ऐसे व्यक्ति से ब्याह करेगी जिसके यहां सात बीसी भैंसों का घास पड़ता हो। चारण अपने चातुर्य से चारणी को धोखा देकर शादी करके ले आता है। फिर भण्डाफोड़ हो जाता है किन्तु चारणी अपने चातुर्य बल से अपने प्रण को पूरा कर लेती है। 'बात जान सुभावरी'—में एक राजा और रानी की सत सेवा भावना की महिमा का उपकथाओं के जरिये वर्णन किया गया है और भारतीय दर्शन द्वारा सम्मत पूर्वजन्म कर्मानुसार फलादेश की विशद व्याख्या की गई है। 'बात एक जाट री'—में स्त्री के चरित्र का वर्णन है कि स्त्री के चरित्र के विषय में कोई नहीं जानता वह अपने पति को मार कर भी सती हो सकती है। 'बानर मार' में ठगों का जिक्र आता है। गांव पूरा ठगों का होता है। आने-जाने वाले यात्रियों को ठगना ही इनका पेशा है। इस प्रकार यह बात उस समय देश में फैली हुई ठगी की ओर संकेत करती है। 'खाफरिया-चोर'—इसके विषय में अनेक कथाएं प्रसिद्ध हैं। वह

(१) 'फोक लिट्रेचर ऑव बंगाल'—डा० दिनेशचन्द्र सेन

एक हवेली में चोरी करने को घुसता है। वहां पर कटी हुई ककड़ी के साथ मिला हुआ नमक भून मे खा लेता है। उसी समय चोरे हुए जेवरों की पोटली को वहीं छोड़ कर बाहर आ जाता है। 'धर्मातिपणी री वात'—में एक व्यक्ति के वशीकरण सुरमा बनाने का वर्णन है। 'चोधरी री न्याव'- में एक राजा की न्याय देने की सूक्ष्म प्रणाली तथा सत्यनिष्ठा का सुन्दर एवम् उज्जवल चित्र है। 'गाय कै भाग को बरसै'—में कोतवाल द्वारा मूंज की रस्सी तैयार करना राजमन्त्री द्वारा लकड़ी का गट्टर सिर पर धारण करना एवं स्वयं राजा द्वारा दोनों कन्धों पर पानी के घड़े रखना उनकी सादगी तथा स्वावलम्बन को तो प्रकट करते ही हैं, साथ ही प्रतीकात्मक मालूम होते हैं। कोतवाल की रस्सी उसका पाश है जिससे वह दुष्टों को बांधता है। राजमंत्री के सिर का गट्टर उसका शासन भार है। इसी प्रकार राजा के प्रत्येक कन्धे पर रखा हुआ एक-एक घड़ा संतुलित न्याय प्रकट करता है।'[1]

इसी प्रकार की अन्य वातें जैसे वात जसमा ओडणी री, अमीपाल साह री, कूंगरै बलोच-री, राजा मान री, पचमार-री, बन्दी-बुहारी री, साहूकार री, अमरा धणी री, राजा सुशील री, राजा भोज अर पाण्डे वुरस्य री, मोरड़ी मतवाली री—आदि मे लोक नीति, लोक रुचि, लोक-व्यवहार, लोक-विश्वास और लोकरुढि तथा जन-मानस के विविध भावों और आशा-आस्थाओं का समावेश मिलता है।

लोक-वातों की अनेक विशेषताएँ हैं। लोक जीवन से सम्बन्धित ये वातें संस्कृति की उच्चतम भावनाओ को अपनी परिष्कृत भाषा मे संजोकर रखती हैं। इनके अध्ययन से हम देश अथवा प्रदेश-विशेष के लुप्त ऐतिहासिक तथ्यों को प्रकाश में ला सकते हैं। इन लोक वातों में अनेक राजाओं के जीवन की घटनाएं, प्रादेशिक वीरों का जीवन-चरित्र तथा सती-स्त्रियो के जीवन की घटनाएं बड़े मार्मिक रूप में चित्रित रहती हैं। इन वातों मे हम भौगोलिक चित्र भी व्यापक रूप में प्राप्त करते हैं। लोक कथाओं के वीर अनेक नगरों और गढ़ों पर आक्रमण करके विजय प्राप्त करते हैं। इस प्रकार इन कथाओं के द्वारा नगर, नदी, गढ़, जिला और प्रसिद्ध व्यापारी केन्द्रों से परिचित होते हैं। इन वातों द्वारा समाज के आर्थिक-स्तर का भी विधिवत ज्ञान प्राप्त होता रहता है। साधारण ग्रामीण समाज का खान-पान, रहन-सहन तथा रीति-रिवाज आदि का परिचय

(१) द्रष्टव्य —'वरदा'—(अप्रेल १९५९), पृ० ६५

मिलता है । विभिन्न जातियों और उनके नियम आदि का वर्णन—धार्मिक जीवन का ब्योरेवार चित्र मिलता है। देवी-देवताओं की कहानियां, अनेक प्रकार के व्रत-उपवास, पूजा पाठ तथा तन्त्र-मन्त्र इत्यादि का सागोपांग वर्णन लोक वार्तों में प्राप्त होता है । सामाजिक, धार्मिक अवस्था का ज्ञान इनके द्वारा सहज ही में प्राप्त होता है । इस साहित्य मे मुहावरों, कहावतो एवम् सूक्तियो की भरमार रहती है ।

अन्त में केवल इतना लिखना ही पर्याप्त होगा कि ग्रामीण जीवन से सम्बन्धित धार्मिक तथा पौराणिक कथाओ से उद्भूत तथा विगत सत्य घटनाओ पर आधारित अनेक वार्तें समाज मे प्रचलित रहती हैं । लोक-साहित्य मे इन वातो का समावेश पूर्ण रूप से रहता है ।

४. प्रेम और नीति सबंधी वार्तें—

प्रेम संबंधी वार्तें—राजस्थानी वातों में प्रेम सबधी वातों का विपुल भडार है । इन प्रेम कथाओं में संयोग और वियोग दोनों प्रकार के चित्रण मिलते हैं। "प्रेम बालकपन का प्राण, यौवन का सहचर और वृद्धावस्था का सहारा होता है। इसीलिए मनुष्य के लिए यह आवश्यक है। यौवन मे अधिक आकर्षक एवं उन्मादक हो जाता है उसके अनेक व्यापार तथा अवस्थायें हैं।"[1] यह प्रेम जन्म-जन्मान्तरों का गठबंधन है। इन सभी कथाओ मे प्रेम की प्रशस्ति गायी गई है। समाज की नाना रूपात्मक परिस्थितियो एव घटनाओं के बीच में अजर, अमर और शाश्वत पुष्प को प्रस्फुटित किया गया है। इन प्रेम कथाओं में प्रेमियों का अशक्त, सहज और मानवीयता का प्रबलतम पक्ष अभिव्यक्त हुआ है। इन प्रेम कथाओं मे जातीय, राष्ट्रीय, सामाजिक, धार्मिक एवं पारिवारिक बधनो का इन्द्रजाल नही है। अपने लक्ष्य तक पहुचन के लिए प्रेमियों के लिए कोई भी कृत्रिम साधन उनके लिए बंधन नहीं है । इस प्रकार की कुछ प्रेम कथाओं का उल्लेख नीचे दिया जाता है ।

"ढोला मारु री वात"[2]— यह एक प्रसिद्ध राजस्थानी प्रेम कथा है। जो

(१) द्रष्टव्य—राजस्थानी गद्य साहित्य का ऐतिहासिक विकास—डा० अचल, पृ० १६५

(२) 'राजस्थानी वात सग्रह' सम्पादक श्री नारायणसिंह भाटी ('परम्परा' भाग ६-७), पृ० २५ ६२

राजस्थान के अधिकांश ग्रामीणों की जबान पर मौजूद है। ढोले का विवा बचपन ही में मारवणि से हो जाता है। ढोले का मोह सुन्दरता से था। उस जब मारवणि का विरहदीप्त संदेश और उसके सौन्दर्य का वर्णन सुना त उसके मन में प्रेम भावना जागृत हो उठी। इससे पूर्व अपने शैशवकालीन विवाह का ढोले को पता नहीं था। उसे अपने वैवाहिक कर्त्तव्य का ध्यान आया। किन्तु इसी बीच मे उसके पिता ने उसका विवाह मलवा की एक राजकुमारी मालवणि से कर दिया था। किन्तु वह मालवणि के प्रेम संदेश को ठुकरा न सका और चलने को उद्यत हो गया। इसमे मारवणि और मालवणि का चरित्र अधिक उभरा हुआ है। मालवणि को ज्योंही ज्ञात होता है कि उसका विवाह ढोले के साथ हो चुका है वह नव यौवना अपने जीवन की सम्पूर्ण एकाग्रता के साथ ढोले को प्राप्त करने का प्रयत्न करती है। वह ढोले तक संदेश पहुचाने का प्रयत्न करती है।

ढोला जब पूगल आ पहुंचता है और मारवणि के साथ वह वापस लौटता है तो ऊमर-सूमरा के चंगुल से निकालने के लिए मारवणि की ही चतुराई काम में आती है। ढोला एक रसिक प्रेमी है जो मारवणि का सौन्दर्य वर्णन सुनकर उसकी प्राप्ति के लिए लालायित हो उठता है और जब उसे मारु की वृद्धावस्था या असुन्दरता की खबर मिलती है तो निराश हो जाता है। किन्तु मारु के सामने ढोले के रूप या सौन्दर्य का कोई अर्थ नहीं है।

ढोले की दूसरी स्त्री जो ढोला और मारु (मारवणि) के मिलन में सबसे बड़ी बाधा होती है बड़ी चतुर, क्रूर, गर्वीली और अपने पति पर एकाधिकार चहानेवाली निरंकुश स्त्री है। अपने लक्ष्य तक पहुंचने के लिए वह अमानवीय कृत्य करते हुए भी नहीं झिझकती। मालवणि की इस उदण्डता एवं क्रूरता की वजह से ही मारु के प्रति अद्भुत सहानुभूति जागृत होने लगती है। यह वात गद्य एवं पद्य मिश्रित या केवल पद्य में—दोनों रूपो में—हमें प्राप्त होती है।

"बात सयणी चारणी री"[१]— सयणी और बीजाणद की प्रेम कथा बड़ी करुणा पूर्ण है। प्रेमी प्रिया की इच्छा पूर्ति के लिए विवाह का वचन दे कर दूसरे देश को चला जाता है। पीछे से प्रिया बड़ी उत्कंठा से उसकी प्रतीक्षा करती रहती है। अवधि समाप्त हो जाती है पर प्रेमी लौट कर नहीं आता। प्रिया की आतुरता बढ़ जाती है और उसका हृदय काव्य रूप में फूट पड़ता है।

---

(१) राजस्थान भारती—भाग १ अंक २-३, पृ० ८१८-२।

अन्त में निराश होकर वह हिमालय में गलने चली जाती है। थोड़े ही दिनों में उत्कंठा से भरा प्रेमी आता है पर प्रिया को नहीं पाता। वह भी हिमालय में गलने चला जाता है। इस प्रकार इस बात का अन्त बहुत ही करुणा-जनक है।

जहां उपर्युक्त बात मे करुणा एवं वियोग शृंगार का एक हृदयस्पर्शी चित्रण देखने को मिलता है वहां इस प्रकार "रत्ना हमीर री बात" मे संयोग शृंगार का वर्णन भी बड़े सुन्दर ढग से किया गया है। स्थानाभाव के कारण हम सभी प्रेम सबंधित वातों का विस्तार से वर्णन नहीं कर सकते। इन प्रेम कथाओं में वियोग, सयोग और करुणा भरी पड़ी है। "नागजी-नागवन्ती," "खीवजी आमलदे," "जसमादे—प्रोढण" "लाखी फूलाणी," "राणो काछवो," "मूमल महेन्दरो" "निहालदे सुलतान," "बीझा सोरठ," "जेठवा ऊजळी" "दिन मान रे फल री बात," "जोगराज चारणी री बात," "मोहणी री बात" "जलाल गहाणी री बात"—आदि इस प्रकार प्रेम से सरोबार बातें हैं जिनमे सयोग, शृंगार, वियोग एव करुणा के सम्यक् चित्र उपस्थित किये गये हैं।

नीति सम्बन्धी बातें—

संस्कृत मे 'चाणक्यनीति' शास्त्र नीति न्याय पर लिखा हुआ बड़ा ही महत्वपूर्ण एवं प्रसिद्ध ग्रथ है। नीति राजनीति का एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। प्राचीन काल से लेकर आज तक न्याय करने का उत्तरदायित्व पचों, राजाओं एवं न्यायधीशों पर रहा है। जब कोई किसी प्रकार का विवाद एव झगड़ा अथवा बुरा कार्य होता है तो उसकी छानबीन करने के लिए नीतिशास्त्र जानने वालों की आवश्यकता होती है। शहरों में तो न्याय वितरण का कार्य सदैव सुसस्कृत पडित एव धुरन्धर नीतिज्ञों के जिम्मे रहा है, परन्तु निरक्षर ग्रामीणों के पास सस्कृत के पडितों जैसा नातिज्ञान मौजूद है और अपने व्यवहार मे वह उसका प्रयोग करते रहते हैं। उनके द्वारा किया हुआ न्याय वास्तविक न्याय होता है। ग्रामों मे न्याय कैसा होता है इसका पता हमें नीति संबंधी बातों से लगता है। सस्कृत साहित्य में कुछ एक 'पचतत्र' की कथायें नीति कथाओं के अन्तर्गत आती हैं। इनमें पशु पक्षियों के सहारे जो न्याय दिया गया है उसमे सच्ची न्याय व्यवस्था की प्रतीति होती है। नीति सबंधी बातों के उदाहरण नीचे दिये जाते हैं—

घाणी नो घोड़ो लावे है—एक घोड़े वाला था सो रोजाना अपने गाव से दूसरे

गांव जाते हुए सियार को राम राम करता था-एक दिन वह राम राम ... से नही करता है-घोड़े वाला उस दिन एक तेली की घाणी से अपना घो[ड़ा] बांध कर पंचायती मे चला जाता है-सियार चूंकि उससे नाराज होता है [इसलिए] तेली को कह देता है कि तूं कह देना कि मेरी घाणी घोड़ा लायी है। [इस] प्रकार घोड़ा तुम्हारा हो जायेगा-फिर घोड़े वाला तेली से घोड़ा मांगता है। ते[ली] इन्कार करता है इसपर पचायत होती है। सियार पंच चुना जाता है। घो[ड़े] वाला उसे राम राम करता है। सियार खुश होता है और सियार ऊ[ंघने] लगता है। पूछने पर बताता है कि पानी में आग लग गयी थी अतएव रात [भर] उसे बुझाता रहा। लोगो का कहना कि क्या कभी पानी मे भी आग लग सक[ती] है तो सियार का न्याय देना कि जब पानी में आग नहीं लग सकती तो घाणी घोड़ा कैसे ला सकती है ? फिर घोड़े वाले को घोड़ा वापिस मिल जाता [है] और वह रोजाना सियार को राम राम करना नहीं भूलता है।

इस प्रकार इस कहानी से सियार की चतुरता एवं न्याय करने की क्षमता का पता लगता है।

आज काल रा पंच—इस बात मे आधुनिक पंचायत का भ्रष्टाचार का रूप बतलाकर सच्चे न्याय की व्यवस्था बतलाई गयी है। बात इस प्रकार है-हंस और हंसिनी का मानसरोवर से उड़ कर मृत्युलोक में आना-एक बरड़ के पेड़ पर विश्राम लेना-कौवे का निवास भी उसी पेड़ पर होना-कौवे का आप की स्थिति का बतलाना कि भाई-भाई को नहीं चाहता-हंस का नहीं मानना और कहना कुछ भी हो राजा, पंच तो न्याय ही देते है-फिर हंस और हंसिनी का अपने देश जाना-कौवे का हंसिनी को अपनी स्त्री बताना-फिर पंचों के पास जाकर उनको यह लोभ देकर कि मैं तुम्हें तुम्हारे बुजुर्गों के दर्शन करा दूंगा अपनी ओर कर लेना-इसी तरह सरपंच को भी अमरफल का लोभ देकर अपनी ओर कर लेना-हंस का हर एक पंच के पास जाना किन्तु निराश लौटना-पंचायत का होना और कौवे को हंसिनी का मिलना-पंचों का [illegible] की [illegible]-कौवे का एक [illegible] के घर [illegible] मे जाना और वहां उनको कौवों का [illegible] [illegible] उनके माता-पिता [illegible] [illegible] [illegible]

था-कौमें का हंस के पास माना मौर उसकी हंसिनी को उसे दे देना-हस का कहना कि मैंने यहां के पच और पंचायत दोनों देखली हैं।

इस प्रकार पंच के भ्रष्ट होने और सच्चा न्याय न देनेका बहुत अच्छा उदाहरण है। इसके साथ साथ कौमे की चतुरता का भी पता लगता है।

छोरै नै लेगी चील—इसमे एक सेठ का लोभ में आकर अपने वायदे से हट जाने का वर्णन है। एक ब्राह्मण अपना सोना सेठ के यहां तीर्थ यात्रा पर जाते समय रखता है वापिस माने पर सेठ कह देता है कि सोने को तो घुण लग गया मतएव वह पत्थर बन गया ब्राह्मण इस के बेटे को उडाकर अपने वहां बन्द कर लेता है। पूछने पर बताता है कि उसे तो एक चील लेगयी। सेठ कहता है कि कभी बच्चे को चील उड़ाकर ले जाती है इस पर ब्राह्मण कहता है कि कहीं सोने को भी घुण लग सकता है। फिर ब्राह्मण को बनिया सोना दे देता है ब्राह्मण उसका बच्चा उसे लौटा देता है।

वेटा चार पण पांती तीन—एक सेठ के चार बेटे होते हैं। तीन अच्छे एव एक लम्पट तथा बदमास होता है। सेठ मरते हुए लिख जाता है कि धन के केवल तीन हिस्से किये जाय। अब कैसे पता लगे कि कौन से तीन के लिए सेठ लिख गया है। पच के पास जाते हैं-पंच बड़ी चतुरता से काम करता है। वह सेठ का चित्र बनाता है और लड़कों से कहता है कि इस पर एक एक करके पेशाब करो। तीनों बड़े बेटे नट जाते हैं परन्तु चौथे वाला कहता है कि मैं तो एक बार क्या चार बार पेशाब कर सकता हूं। पंच कहता है कि सेठ इसी को ही धन नहीं देना चाहता था अतएव इन तीनों को ही धन मिलना चाहिए।

न्याय की परख—दो दोस्त होते हैं, एक ब्राह्मण, एक बनियां। कमाने जाते हैं। बनियां व्यापार से अच्छा कमा लेता है। ब्राह्मण एक साहूकार के यहा एक रुपया महीने में नौकर हो जाता है। १२ वर्ष व्यतीत होने पर बनियां घर चलने को कहता है तो ब्राह्मण कहता है कि मैं कुछ दिन बाद में आऊंगा। तू एक रुपया और एक हीरा जो मैं तुझे देता हू मेरी स्त्री को दे देना। बनिये के दिल मे बेईमानी आजाती है। वह एक रुपया ही ब्राह्मण स्त्री को देता है। ब्राह्मण लौटता है तो हीरा प्राप्त नहीं करता है। राजा के यहां जाता है। राजा सब से एक मीटी का हीरा बनवाता है और इस प्रकार पता लगा लेता है कि हीरा बनिये के पास ही है और ब्राह्मण को वापिस दिला देता है तथा बनिये को दण्ड देता है।

इकोल संत—यह भी इसी प्रकार की एक बात है। एक ब्राह्मण भूखा था, समुद्र में प्राण देने जाता है। समुद्र कहता है कि मरता क्यों है-ब्राह्मण अपनी स्थिति बतलाता है। समुद्र उसे एक सोहनी शंखी देता है कि इससे जो चाहे मांग लेना यह दे देगा। सोहनी शंखी से रोटी, कपड़ा, धन आदि मांगते हुए कोई अन्य देख लेता है और सोहनी शखी चुरा लेता है। ब्राह्मण फिर मरने समुद्र में जाता है समुद्र फिर उसे एक शख देता है और कहता है कि यह केवल शब्द ही करेगा, देगा कुछ नहीं। तू एक मांगेगा तो यह कहेगा पांच ले दस मांगेगा तो कहेगा सौ ले। इस पर वह चोर लोभ में आजावेगा और सोहनी शंखी छोड़ कर इसे ले जायेगा। यही होता है चोर शख लेजाता है और सोहनी शंखी घर जाता है।

'फोगसी एवाळ' से सम्बन्धित कुछ नीति कथायें भी इस बात साहित्य में विद्यमान हैं। फोगसी एवाळ एक रेवड चराने वाला होता है जिसके पास लोग अपने झगड़ों का निपटारा करवाने के लिए आते हैं और वह जो न्याय देता है उसे मानते है।

इसी प्रकार की 'पोपां बाई' 'न्याय की परख' आदि अन्य बहुत सी नीति सम्बन्धी बातें लोक साहित्य में विद्यमान हैं। स्थानाभाव के कारण सब का देना संभव नहीं इसी हेतु ऊपर चन्द बातों को ही उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत किया गया है। उस समय की न्याय-व्यवस्था की वास्तविक झलक इन बातों में देखने को मिलती है। प्रो० श्री वासुदेव के शब्दों में "नीति कथाओं का प्रतिपाद्य विषय सदाचार, राजनीति और व्यावहारिक ज्ञान है। इनमें पशु पक्षी मनुष्यों के समान ही सारे कार्य करते हैं। मनुष्यों की भांति वे बोलते हैं, मनुष्यों के सरीखे वे व्यवहार करते हैं और मनुष्यों के समान ही वे आपस में प्रेम, कलह, युद्ध या सन्धि करते हैं। नीति कथाओं की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि उनमें एक प्रधान कथा के अन्तर्गत कई गौण कथाओं का समावेश होता है। 'पंचतंत्र' और 'हितोपदेश' नीति कथाओं के अन्तर्गत आते हैं"[1]।

नीति कथा और लोक कथा के अन्तर को स्पष्ट तौर से हम नहीं देखते। नीति कथाओं की विशेषताएं लोक कथाओं में भी दीख पड़ती हैं, किन्तु दोनों का प्रधान अन्तर यह है कि नीति कथाएं उपदेश प्रधान होती हैं और लोक कथाएं

१. 'हिन्दी कहानी और कहानीकार'। पृ० १३-१४

मनोरंजन प्रधान। साथ ही लोक कथाओं के पात्र पशु पक्षी न होकर प्राय, मनुष्य ही होते हैं। जिस प्रकार नीति कथाओं में पंचतंत्र का स्थान सर्वोपरि है, उसी प्रकार लोक कथाओं में गुणाढ्य की बृहत्कथा का स्थान अग्रगण्य"[1]।

कहावतों की बातें—

कहावतों का प्रचलन सभी देशों में है। परन्तु बहु संख्यक राजस्थानी कहावतों के पीछे रहस्यमयी, रमणीक और नीति पूर्ण कहानियां अलग्न हैं। इनके प्रचलित वाक्य तो केवल एक दो ही होते हैं परन्तु इन वाक्यों के पीछे की कहानियों का आनन्द कुछ और ही होता है। हर एक कहावत अपने में एक सम्पूर्ण कहानी है। बिना कहानी सुने, कहावत का तात्पर्य समझ मे नहीं आ सकता। जिस प्रकार गूढ़ार्थ पदों की व्याख्या जानना आवश्यक है वैसे ही राजस्थानी कहावतों की व्याख्या जानना भी आवश्यक है। ये कहावतें जन जीवन के मन को आनन्दित कर देती हैं। 'एकान्त मे बैठकर कहावतो का निर्माण नहीं किया गया किन्तु जीवन की प्रत्यक्ष वास्तविकताओ ने कहावतो को जन्म दिया। किताबों की आंखों से देखने वाले निरे बुद्धिविलासी व्यक्ति कहावतों के निर्माता नहीं थे, कहावतों के रचियता जीवन के द्रष्टा थे। क्या हुआ, यदि किसी कहावत के निर्माता ने कोई पुस्तक नही पढी, जीवन की पुस्तक से उसने जो पाठ पढ़ा था, सूक्ष्म निरीक्षण, सामान्य बुद्धि और प्रत्यक्ष अनुभव के आधार पर ज्ञान का जो सक्षात्कार किया था, वही एक मनोरम लोकोक्ति के रूप में प्रकट हो गया"[2] राजस्थानी कहावतों की व्युत्पत्ति किसी न किसी घटना से है। तभी तो व्याख्याता लोग, कहावतो के मूल उदाहरण देकर श्रोताओं को शिक्षा, नीति, प्रेम तथा वैराग्य का पाठ पढ़ाते हैं। ये कहावतें वृद्धजनो के मुख पर चारण भाटों, ढाढ़ी ढोलियों, थोली मोतीसरों की जबान से निःसृत होकर जनसाधारण को न्याय नीति का पाठ पढ़ाती है।

उदाहरणस्वरूप राजस्थानी कहावतों की कुछ कहानियां प्रस्तुत की जाती हैं। ये कहानियां अपनी विशेषताओं की स्वयं प्रमाण हैं। ये कहावतें लोकसाहित्य की सबसे समृद्ध सामग्री हैं। ये कहावतें लिपिबद्ध न होकर ग्रामीणों के मुख पर ही रहती हैं।

---

१. संस्कृत साहित्य की रूपरेखा। पृ० २६५-३०२

२. राजस्थानी कहावतें एक अध्ययन—डा० कन्हैयालाल सहल—पृ० ३८

'तन्नै कैगो सो मन्नै भी कैगो'' अर्थात् जो तुम्हें कह गया, वह मुझे भी कह गया। यह राजस्थानी की एक प्रसिद्ध कहावत है जिसके पीछे निम्नलिखित एक कहानी आती है :—

''एक बुढ़िया ने किसी घुड़सवार से अपनी पोटली ले चलने के लिए कहा। घुड़सवार ने यह कहकर इनकार कर दिया कि घोड़े के सवार और बुढ़िया माई का क्या साथ ? सवार ने कुछ आगे चलकर सोचा कि अच्छा होता, यदि बुढ़िया की पोटली मैं ले लेता, उसमें जो कुछ है उसे तो स्वायत्त कर लेता। वह लौट पड़ा और बुढ़िया के पास पहुंच कर कहने लगा—'ला पोटली, तुझे कष्ट होगा, मैं घोड़े की पीठ पर लेता चलूंगा'। बुढ़िया के दिल में भी यह सद्बुद्धि जागृत हो गई थी कि चलो, अच्छा हुआ जो मैंने अपनी पोटली घुड़सवार को न दी, कहीं वह लेकर चम्पत हो जाता तो फिर क्या था ! किसी अनजान का विश्वास ही क्या ? बुढ़िया ने उत्तर दिया ''जो तुम्हें कह गया, वह मुझे भी कह गया''। राजस्थान में यह कहावत 'घोड़े के सवार को अर बुड्ढी माई को साथ' इस रूप में प्रसिद्ध है।[1]

'बा चिड़कली और देख जो भरड़ दे उड़ जाय'[2] अर्थात् वह चिड़िया और है जो भरड़ शब्द करती हुई उड़ जाती है। इसकी कहानी है—''कहा जाता है कि नागों का नष्ट करने के लिए एक बार राजा जनमेजय ने यज्ञ किया। वासुकि सर्प अपनी रक्षा के लिए किसी शहर में भाग गया और मनुष्य का रूप धारण करके रहने लगा। एक ब्राह्मणी से उसने विवाह भी कर लिया। ब्राह्मणी एक दिन पानी भर कर ला रही थी। जब वह अपने घर में प्रविष्ट हुई तो वासुकि एक चिड़िया का रूप धारण करके उसके घड़े पर आ बैठा। घड़े पर बोझ पड़ने पर ब्राह्मणी ने अपने पति को पुकारा और बोली—एक चिड़िया घड़े पर बैठा है जिसके भार से मैं दबी जा रही हूं। इसको किसी तरह उड़ाइए [illegible]। इस पर [illegible] ने उत्तर दिया—''वह चिड़िया कोई और है जो इस प्रकार 'भरड़' शब्द करती हुई उड़ जाए''

''[illegible]''—[illegible] किसी चीज का कोई [illegible] [illegible] है।

---

1 राजस्थानी कहावतें एक अध्ययन—डॉ० कन्हैयालाल सहल पृ० [illegible]

2 — वही — पृ० [illegible]

"ढेढणी रो चूडो"—',एक ढेढणी ने किसी तरह अपने काम से पैसे जोड़ कर एक चूड़ा खरीदा । वह चाहने लगी कि उसकी जाति के लोग उसके चूड़े की प्रशंसा करें । परन्तु किसी ने भी इधर ध्यान नहीं दिया । तो उसने अपनी झोंपड़ी में आग लगा दी । आग बुझने को सभी आये । अब ढेढणी शान से चूडे पहिने हुए हाथों को घुमाकर चलने लगी । तो एक ने पूछा 'अरे' तूने यह चूड़ा कब बनवाया" ढेढणी ने कहा 'तूने यह पहले ही क्यो न पूछ लिया, जिससे मेरा झोंपड़ा नहीं जलता" ।

'करन्ता सो भोगन्ता, खोदन्ता सो पड़न्ता'—अर्थात् प्रत्येक मनुष्य को अपनी करनी का फल भोगना पड़ता है । जो दूसरों के लिए खड्डा खोदता है, वह स्वयं उसमें गिरता है ।

"फागण मे सी चौगणो, जे चालेगी बाल ।" इस कहावत का अर्थ है कि यदि हवा चले तो फाल्गुन मे चौगुना जाड़ा पड़ने लगेगा ।

"गवाळ रे हाथ में गेडियो" अर्थात् गवाळा एक नौकर होता है । वह तो केवल ढोरों को चराने मात्र का कार्य करता है । ढोरों का मालिक कोई और होता है ।

> "अकल सरीरां ऊपजै, दीवी न आवै सीख ।
> अण मांग्या मोती मिले, मांगी मिले न भीख ॥"

अर्थात् बुद्धि शरीर के साथ पैदा होती है, समझ बूझ किसी के द्वारा प्रदान नहीं की जा सकती । बिना मांगे मोती तक मिल जाते हैं, मांगने पर भीख भी नही मिलती ।

> "कागा कुत्ता कुमाणसा तीन्यां एक निकास ।
> ज्यां ज्यां सेरयां नीसरै, त्यां-त्यां करै विनास ॥"

अर्थात् कौवे, कुत्ते और दुर्जन, तीनों एकसार होते हैं, ये जिस मार्ग से निकलते हैं वहां ही विनाश करते हैं, अर्थात् नुकसान पहुंचाते हैं ।

> "मरद तो मूच्छाळा भला, नैण बंकी गोरियां ।
> गुरहळ तो सींगाळ भला, घोड बंका घोड़िया ॥"

अर्थात् मर्द तो वही श्रेष्ठ है जो मूंछो वाला हो, कामिनी तो वही है जिसके नेत्र बांके हों, गाय भी वही है जिसके सींग अच्छे हों और घोड़ी तो वही है जिसके गुण सुन्दर हों ।

"जमी जोर जोर की, जोर हटयां ग्रौर की।"

ग्रर्थात् जमीन ग्रौर स्त्री पर से जब जोर हट जाता है तो वह दूसरे की जाती है।

"धनराज के धन बंटै, ज्यूं कूवें को नीर।
सापुर सो कै साटवें, सब काहू को सीर॥"

लिखमादेसर के सन्त धनराज बड़े दानी थे। उनके द्वार पर ग्राने वाला खाली हाथ नहीं जाता था। इसी को लेकर उपरोक्त गाथा कही जाती है। पंक्ति में युक्त ग्रंश का प्रयोग इस भाव मे होता है कि सत्पुरुष की कमाई में सबका हिस्सा है। राजस्थानी कहावत 'सखी की कमाई में सं को सीर' से तुलना करें।

इसी प्रकार की कहावतों से ग्रामीण जन जीवन का भण्डार भरा पड़ा है। हर एक ग्रामीण के मुख से ग्राप बात करते समय दो चार कहावतें तो उदाहरण रूप में ग्रवश्य ही सुनेंगे। ग्रनेक वर्षों के कड़े परिश्रम ग्रौर महान् शोध के उपरान्त डॉ० सहल ने ग्रपनी थीसिस 'राजस्थानी कहावतें एक ग्रध्ययन' में कहावतों से संबंधित कहानियों पर पूर्ण प्रकाश डाला है। समस्त भारतीय भाषाग्रों में सम्भवतः यह ग्रपने ढग का निराला शोध ग्रन्थ है। इस प्रकार का कार्य ग्रभी तक किसी भी ग्रन्य भारतीय भाषा में नहीं हुग्रा है। हर एक कहावत ग्रपने में एक कहानी लिए हुए जन-मानस के मुख पर हर समय विद्यमान रहती है। ये कहावतें जबानी ही हैं लोक कथाग्रों का एक विशेष ग्रंग है।

ग्रन्य वार्ता—

राजस्थानी वात साहित्य में ग्रनेक प्रकार की वातों का वर्णन ग्राता है। ग्रभी हमने पिछले पृष्ठों में ग्रर्द्धैतिहासिक, ग्रनैतिहासिक, काल्पनिक, वीरगाथात्मक, प्रेमगाथात्मक धार्मिक, नैतिक ग्रौर लौकिक वातों के विषय मे बतलाया। इन वातों के ग्रलावा ग्रौर भी बहुत सी वातें हैं।

कुछ कथायें ऐसी मिलती है जिनमें स्त्री के चातुर्य को प्रदर्शित करने का प्रयास हुग्रा है। इन कहानियों में विभिन्न परिस्थितियों में डालकर स्त्री के चरित्र को ऊंचा उठाया गया है। जैसे—

'विणजारा विणजारिन री वात'[1] में स्त्री ने पुरुष को सुधारा है। स्त्री ग्रपने

(१) राजस्थान भारती—भाग १, ग्रंक १ पृ० ८१-८३

पति के कहने पर अपने चातुर्य का परिचय देती है। एक फूहड़ लकड़हारे को सभ्य पुरुष बना देती है।

'साहूकार री वात'[1] - में भी इसी प्रकार स्त्री अपने को चतुर सिद्ध करती है।

'फोफाणद री वात' तथा 'राजा भोज, माघ पंडित तथा डोकरी री वात' भी इसी प्रकार की वातें हैं। प्रथम कहानी में महेवची धारणी और फोफानद की वार्ता है। स्त्री के साथ विश्वासघात किया जाता है किन्तु वह अपनी चातुर्य समर्थता से अपने वैभव के उपकरण जुटा लेती है। दूसरी कथा में राजा भोज और माघ नामक पंडित डोकरी से चतुराई में पार नहीं पाते।

इसके अतिरिक्त अन्य बहुत सी ऐसी वातें हैं जिसमे स्त्री चरित्र-चित्रण में सूक्ष्मदृष्टि से काम लिया गया है।

साहसिक एवं पराक्रम संबंधी वार्तों मे साहस, पराक्रम आदि को स्थान अधिक मिला है। साहसिक रचनाओं मे "सीवै बीजै री वात[2]" और 'राजा भोज अर खापरा चोर री वात"[3] के उदाहरण लिये जासकते हैं। सीवा और बीजा दोनों प्रसिद्ध डाकू हैं। दोनों बहादुर हैं। दोनों सम्मलित रूप से डाका डालते हैं। कहानी में इनके दो डाकों की वात है—१. चितौड़ से जय विजय नामक घोड़ियां चुराना २. पाटण से सतयुगी मन्दिर से स्वर्णकलश उतारना—दोनों में ये सफल होते हैं। 'राजा भोज अर खापरा चोर री वात' में खापरा चोर की चतुराई एवं पराक्रम का चित्रण है। इन वातों के अतिरिक्त 'दोलमदे री वात' 'दूदै जोधावत री वात' 'सातल सोम री वात' आदि और अन्य इसी प्रकार की वातें हैं जिनमें पराक्रम सम्बन्धी विवरण मिलता है।

भोज और विक्रमादित्य सम्बन्धी कथायें—लोक कथा साहित्य में विक्रमादित्य का नाम बहुत प्रसिद्ध है। 'वीर विक्रमादित्य री वात', 'राजा वीर विक्रमादित्य अर नक्षत्र कालीक री वात' आदि में विक्रमादित्य के नाम से कई घटनाओं का सम्बन्ध जोड़ा गया है। 'राजा भोज भी कई कहानियों के नायक हैं।' "राजा भोज माघ पिंडत अर डोकरी री वात", "बोबोसी" राजा भोज

(१) राजस्थानी - भाग ३, अंक ३ पृ० ७४

(२) अनूप संस्कृत पुस्तकालय बीकानेर में विद्यमान।

(३) — वही —

गाफरा चोर री वात", "राजा भोज री पनरवीं विद्या", "त्रिया-चरित" 'राजा भोज री चार वातां" "भोज री वात" आदि में राजा भोज से सम्बन्धित घटनायें तथा राजा भोज के नाम आये हैं।[1]

अद्भुत कथायें "राजस्थानी कहानियों की यह विशेषता है कि उनमें अद्भुत एवं वैतालिक तत्व कहीं न कहीं घुस ही आये हैं। कहानी की विस्मयता, मनोहरता, एवं आकर्षणशक्ति को बढ़ाने के लिए इन का प्रयोग होता है।"[2]

"राजा मानधातारी वात" में अप्सरा लोक का चित्रण हुआ है। अप्सरा की जादू की लकड़ी राजा मानधाता को सात समुद्रों पार ले जाती है। वहाँ मानधाता को ९ पूनियों के सम्मुख चार योगी दिखाई देते हैं। योगी उसे [illegible] देते हैं। उनको पहिनकर मानधाता अप्सरा लोक में पहुंच जाता है और इन्द्रलोक की एक अप्सरा उसे वरमाला पहना देती है। फिर वह वापिस अपने मामा परशुराम के पास अजमेर पहुंच जाता है।

"वीरमदे रा [illegible]" की कथा में पाषाण की प्रतिमा का एकाएक अप्सरा हो जाना ध्यान आकर्षित करता है। "जगमाल मालावत" री वात में देवताओं की सहायता से जगमाल अहमदाबाद के बादशाह बेग को परास्त करता है। "जगदेव पवार री वात" में कंकाली, भैरव एवं योगनियों आदि का वर्णन पाया है। "चौबोली" एवं "पूरी पर सतवादियां री कथा" में राक्षस लोक का वर्णन पाया है। 'चौबोली' में राजा भोज किसी राक्षसी की [illegible] अधिकार बन कर रहता है। 'पूरी पर सतवादियां री कथा' में [illegible] राक्षस की नगरी में निवास करती है जिसने सारे नगर को जन-रहित कर दिया था। राजा [illegible] उस राक्षस को मार डालता है।

"अद्भुत एवं वैतालिक तत्व राजस्थानी कहानियों में कहीं न कहीं किसी न किसी रूप से दिख ही जाते हैं। इन कहानियों के लिए कुछ भी असम्भव नहीं।"[3]

इस प्रकार हमने देखा कि राजस्थानी वातों में लौकिक-अलौकिक, ऐतिहासिक-[illegible] [illegible], काल्पनिक-वास्तविक आदि प्रकारों के विविध

---

(१) [illegible]
(२) राजस्थानी भाषा का विकास — डा० [illegible], पृ० १३६
(३) राजस्थानी भाषा का विकास — डा० [illegible], पृ० १३६

संश्लिष्ट रूप-विधान पाये जाते हैं। श्री रावत सारस्वत के शब्दों में, "इन विषयों में पौराणिक, आध्यात्मिक, काल्पनिक और ऐतिहासिक मुख्य हैं। और प्रत्येक विषय में प्रेम युद्ध, प्रकृति, क्रीड़ा उपदेशादि विभिन्न विभाग किये जा सकते हैं। सारांश यह कि बात साहित्य राजस्थानी-साहित्य के सर्व प्रधान अंगों में से है।"[1]

---

(१) "राजस्थानी साहित्य"—रावत सारस्वत—(राजस्थान भारती पत्रिका अप्रैल १९४९ पृ० ३८)

श्री मथुरा प्रसाद गर्ग एम० ए० के शब्दों में 'एक या एक से अधिक पात्रों के अनुभवों तथा घटनाओं का क्रमिक अनुबन्धन ही कथानक है।'[1]

'वस्तु, जिसे कथानक, वृत, प्लाट आदि नाम भी दिया जा सकता है कहानी का वह सूत्र है जो गति और घटनाओं से पात्र और दृश्य में व्याप्त होकर कहानी को कहानी का रूप देता है।[2]

'कहानी के लिये एक स्वस्थ, पर झीना कथानक चाहिये।'[3]

'वस्तुतः कहानी के शरीर में कथा वस्तु हड्डियों के सदृश है। यदि भाषा, भाव, चरित्र-चित्रण या शैली इत्यादि सब तत्व कहानी में विद्यमान हों और कथावस्तु विद्यमान न हो तो वह कहानी अस्थि-रहित शरीर के सदृश होगी।'[4]

'कथा वस्तु का चुनाव जीवन की किसी भी घटना से किया जा सकता है इसके लिये सूक्ष्म पर्वेक्षण शक्ति आवश्यक है।'[5]

आधुनिक कहानी-कला में इस तत्व को कहीं-कहीं बिल्कुल परोक्ष में डालकर केवल पात्रों और परिस्थितियों के चित्रण से कहानी प्रस्तुत हो जाती है, किन्तु फिर भी व्यापक रूप में कहानीकार को कथावस्तु का सहारा किसी न किसी रूप में लेना ही पडता है। कथा-वस्तु ही एक तरह से कथा का संगठन करती हैं। कहानी चाहे घटना प्रधान हो चाहे चरित्र प्रधान या भाव-प्रधान हो कथा वस्तु चरित्र की रेखाओं में, स्थूल-पात्र में, घटना अथवा कार्य व्यापार की शृंखला में चरितार्थ तो होती ही है। कहने का तात्पर्य यह है कि कथा के बिना कहानी होगी ही कैसे—और कथानक तो एक प्रकार से कथा ही तो है परन्तु वह लेखक की भावुकता और कल्पना के सहारे विकसित होता रहता है। कहानीकार की कला-शक्ति से कहानी में ऐसी कलात्मकता उत्पन्न हो जाती है कि जब तक वह—पाठक—कहानी समाप्त नहीं कर लेता तब तक

(१) कहानी के तत्व—मथुरा प्रसाद गर्ग एम० ए० (साहित्य-संदेश-कहानी विशेषांक-जनवरी-फरवरी १९५३ पृ० २७८)
(२) कहानी का शिल्प-विधान—डा० सत्येन्द्र (साहित्य-संदेश-कहानी विशेषांक जनवरी फरवरी १९५३ पृ० २७८)
(३) हिन्दी कहानी और कहानीकार-प्रो० वासुदेव एम० ए० पृ० १७
(४) साहित्य विवेचन—क्षेमेन्द्र सुमन, योगेन्द्र मल्लिक, पृ० १९८
(५) —वही— पृ० १९९

यह रुकना नहीं चाहता । कथानक सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक अनेक तरह का हो सकता है । कहानीकार सर्वप्रथम कथानक का ही करता है और फिर उसके धागे में पात्रों को पिरोता चलता है । और की घटनाओं और भावों को शृंखलाबद्ध करता जाता है । साधारण क में एक ही घटना या भाव का चित्रण होता है । जटिल कथानक में ए अधिक पात्रों अथवा घटनाओं का चित्रण होता है । वैसे कहानी के कथान लिये कहा गया है कि वह संक्षिप्त-छोटा-सरल एवं खूब कसा हुआ होना चाहि अगर घटनाओं का गुम्फन कहानी में हो या तो वह कहानी, कहानी न र उपन्यास की कोटी में आ जायेगी ।

जहां स्वरूप की दृष्टि से कथा-वस्तु के तीन प्रकार—घटना-प्रधान, चरित्र प्र और भाव-प्रधान है —वहां वस्तु-विन्यास या कथानक के विकास की स्थितियां कही गयी हैं:—

(क) प्रारम्भ (ख) आरोह (ग) चरमस्थिति (घ) अवरोह और (अन्त ।

कहानी का प्रारम्भ किसी पात्र के परिचय के साथ, वातावरण के वर्णन द्वारा यों दो-पात्रों के कथोपकथन के द्वारा प्रायः किया जाता है ।
आरोह में पात्रों की मानसिक व्यवस्था, स्थिति वा भावना का विकास दिखा जाता है ।

चरमस्थिति कहानी का वह स्थल है जहा पर रोचकता अथवा सुन्दरता क्षण भर में स्तब्धता आ जाती है और पाठक के हृदय में कम्पन अनुभव हो लगता है ।

अवरोह में 'आगे क्या हुआ' की जिज्ञासा या उत्सुकता का समाधान ही किि लिया जाता है ।

अन्त ही कथानक की अन्तिम अवस्था का नाम है । आरम्भ से अधिक प्रभाव अन्त में आना आवश्यक है । अन्त ही पाठक के हृदय पर एक ऐसा प्रभाव छोड़ जाता है जिसके कारण पाठक को कुछ सोचने की सामग्री मिल जाती है ।

जिस प्रकार शरीर पाँच तत्वों से बना है उसी प्रकार कहानी के भी पाँच तत्व होते हैं और कथानक इन पांचों तत्वों में सर्वश्रेष्ठ है । ऊपर हमने कथानक के

विषय में विभिन्न अंग्रेजी लेखकों एवं हिन्दी लेखकों के मतों को देखा। ये जितने भी मत कह गये हैं वे सब आज की आधुनिक कहानी के विषय में ही हैं।

किन्तु प्राचीन राजस्थानी वात के कथा संगठन और आज की कहानी संगठन में बहुत अन्तर है। आज मानव-मस्तिष्क का विकास बहुत हो चुका है वह घटना, भाव, चरित्र-चित्रण आदि को कहानी में नगण्यता प्रदान करता है और मनोविज्ञान के आधार पर ही अपनी कहानी को प्रस्तुत करता है। पुरानी कहानी में वे सब बात नहीं प्राप्त होती जो आज की कहानी में हैं। प्राचीन कहानियों में केवल-मनोरंजन, अतिप्राकृत प्रसंगों की अवतारणा, बाह्य वर्णनों की अधिकता, विषय की सीमितता, स्वाभाविकता का अभाव, वर्णनात्मक शैली, अद्भुत कल्पना, घटनाओं एवं पात्रों का बाहुल्यता के ही दर्शन मिलते हैं। इसके अलावा हमारा प्राचीन वात-साहित्य मौखिक ही हुआ करता था। किन्तु आज का कहानीकार पूर्ण रूप से विकास को प्राप्त हो गया है और कहानी क्या होती है इस बात को समझता है।

इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वात-साहित्य कथानक की दृष्टि से बिल्कुल ही बेकार है अथवा उसमें इस तत्व की नगण्यता है। किन्तु जिस प्रकार का वह समय था उसी के अनुसार वात-लेखकों ने कथा-तत्व का सगठन किया है जो अपने प्रकार से अनूठा एवं निराला तथा प्रभावोत्पादक है।

राजस्थानी वार्तों मे कथा-तत्त्व का महत्व अत्यधिक मिलता है। ये वार्तें छोटी एवं बड़ी दोनों प्रकार की मिलती हैं। राजस्थानी वात का कथानक छोटा होते हुए भी हृदय पर प्रभाव डालता है। छोटी वार्तों में कहानी के आदि, मध्य और अन्त का संगठन हो पाया है। जैसे—

'सूरे खींवे कान्धलोत री वात'[1]—यह एक ऐतिहासिक कहानी है। इसमें इतिहास के साथ ही साथ कथा के गुण भी मौजूद हैं। सूरे एवं खींवे का अपने मौसेरे भाई राजूसा के यहां जाना और बालक के स्वभाव की उदण्डता के कारण एकदम झगडा हो जाना कथा को शुरू से ही आकर्षक बना देता हैं। पाठक की उत्सुकता बढने लगती है। राजूसा का वह व्यग्य सूरे एवं खीवे को चुभ जाता है कि क्या वे उसकी घोडी ले जायेंगे? बात ही बात मे बीलोचिन दम के

(१) परम्परा राजस्थानी वात-संग्रह—सम्पादक नारायणसिंह भाटी से प्राप्त कथा। पृ० २३५

कारण इस छोटी सी बात पर झगड़ा हो जाता है। दो मौसेरे भाई सा थे हैं। भूपर मोणे की चालाकी से घोड़े को उड़वा लेता है।' राठूला घोड़े के वियोग में फकीर होकर निकल जाता है। घूमते-घूमते फिर एक दिन मौसेरे भाइयों के घर पहुंच जाता है। वहां उसकी घोड़ी बन्धी हुई होती है। उसे ले भागता है। युद्ध होता है। सूरा-खींवा भी युद्ध-स्थली में काम आ जाते हैं।

'बात पताई रावळी-री'[1] —गुजरात का बादशाह बेगड़ा महमूद पताई रावळ पर चढ़ाई करता है। पावागढ़ को बारह वर्ष तक घेरे हुए रखता है। बाद में पताई रावळ का मामा मइया-बोकलिया जो बड़ा विश्वासी होता है बादशाह से जा मिलता है। बादशाह से कहता है कि यदि सबसे ऊपर मेरा सिर रखो तो भाविदा देता हूं। बादशाह मान जाता है। पीछे सारा गढ़ विध्वंस हो जाता है—सब राजपूत तथा रानियां मर जाती हैं—फिर बादशाह जितने पुरुष काम आये थे उन सबके सिर मंगवाता है—और बोकलिया का सिर काट कर उन सब सिरों के ऊपर रखते हैं। इस प्रकार राजपूती शौर्य एवं विश्वासघात की यह एक अनूठी कहानी है। कहानी में आदि (प्रारम्भ) मध्य और अन्त तीनों स्तरों का निर्वाह बहुत ही सुन्दर ढंग से हुआ है।

'बात [illegible] कूंवर री' — इस कहानी में कूंवर अपने बाप को मारकर राजगद्दी पर बैठने के स्वप्न देखता है। बाप से उसकी अनबन हो जाती है। वह भाई से राजा को मारने के लिये कहता है। भाई उसे कहता है कि मैं तुम्हारे [illegible] अब तो [illegible] काट कर मार दूंगा। राजा ने चोर को डराने के लिये कहा कि जो तुम पहले पानी मांगते हो और फिर [illegible] तुम्हारा [illegible] है। भाई [illegible] है और वह [illegible] अतः वह उसे [illegible] देता है। इस प्रकार कूंवर की [illegible] है। भाई को [illegible] देता है। इसमें [illegible] उसका सम्यक् चित्रण हुआ है।

इस प्रकार की सब बहुत सी छोटी-छोटी बातें हैं जो इतनी सुन्दर [illegible] हैं और [illegible] आदि, मध्य और अन्त का निर्वाह हो जाता है।

---

[1] [illegible]

हां, एक बात अवश्य खटकती है कि कथानक के तारतम्य को बनाये रखने के लिये एवं प्रवाह की रक्षा के लिये पात्रों को कठपुतली बनना पड़ता है।

इसके विपरीत बड़ी वातों में आदि, मध्य और अन्त में सम्बन्ध होते हुए भी कथा संगठन का निर्वाह नहीं हो पाया है—पंचतंत्र की कथाओ मे जैसे कहानियां बहुत लम्बी-लम्बी होती है एव उनमे एक कथा में से दूसरी कथा निकलती रहती हैं और इस प्रकार एक कहानी में दो तीन उपकथायें आ जाती है वैसे ही इन लम्बी वातों में यद्यपि कथा सगठन होता है किन्तु उप कथाओ के आ जाने से उसका निर्वाह नही हो पाता। उदाहरण स्वरूप हमे 'राणी चौबोली री वात' लेते हैं—कहानी का कथानक कोई ज्यादा बड़ा नही है। राजा भोज की स्त्री उसे चौबोली से शादी करने को कहती है इससे प्रारम्भ होती है और राजा अपने साथियों की मदद से चौबोली को हराकर ब्याह कर लेता है इससे कहानी का अन्त होता है। परन्तु इसमे जो चार उपकथायें आई हैं वे कहानी के कलेवर को बढा देती हैं और कथानक के सगठन का निर्वाह नही हो पाता। राजा भोज उज्जैन नगरी मे राज्य करता था। उसके आगिया वेताल, कबाड़िया जुवारी, माणिकदे मदवांण, खापरा चोर,—ये चार मित्र थे। पन्द्रहवी विद्या प्राप्त करने के लिये ये वराही देवी के यहां जाते हैं। इधर रानी राजा से कहती है कि आप दूसरा विवाह चौबोली ही से कीजिये। राजा अकेला घोड़े पर चढ़कर चल पड़ता है—आगे एक राक्षसी मक्खी बनाकर बालो मे रख लेती है—राजा अपने साथियों को याद करता है—वे राजा को राक्षसी की आंखों मे वेश्या की कज्जलदानी का काजल डालकर उसे मूर्छित कर छुटकारा दिलवा देते हैं। फिर चौबोली से विवाह करने को चल पड़ते हैं। इधर चौबोली के प्रण होता है कि रात को या तो बोला दो और अगर चौबोली न बोले तो उस राजा को सवेरे पानी भरना पड़ता है। इन्होने आपस मे विचार किया और तय किया कि वैसे तो काम चलेगा नही हम शरीर को अदृश्य करके उसी स्थान पर जा बैठेंगे। तब तुम (राजा) बोलना हमसे हम जवाब देगें—तब रानी बोलेगी। इस प्रकार तय करने पर खापरा चोर रानी के गले के हार मे जा बैठता है, कावड़िया जुआरी खाट पर जा बैठता है, मणिकदे मदवाण झारी पर जा बैठता है और आगिया वैताल दीपक पर जा बैठता है। ये चारों मक्खी का रूप धारण करके बैठते हैं।

फिर चारों के द्वारा चार उप कथाओं का उत्तर दिया जाता है। राजा उन चारों में से एक-एक को एक कहानी कहता है और वे उसका उत्तर झुठा देते

हास्य एवं मनोरंजन के साथ-साथ गांभीर्य होना भी आवश्यक है और इसी के आधार पर ही व्यंग्य की रचना होनी चाहिए।

यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि एक ही प्रकार के पदार्थ के लगातार सेवन करने से उस पदार्थ के प्रति तनिक अरुचि का भाव आने लगता है और मधुर के बाद खट्टा और चर्परे के बाद मीठा खाने की इच्छा होने लगती है। ऐसी ही दशा में गांव का किसान जब दिन भर के कड़े परिश्रम द्वारा खून का पसीना बनाकर सध्या को अपने घर वापिस लौटता है तो खाने-पीने के पश्चात् उसे मनोरंजन की आवश्यकता प्रतीत होती है और वह अवकाश प्राप्त करते ही शृंगार, प्रेम और मनोरंजक कथानकों की ओर उन्मुख होता है। किसानों की तरह योद्धा भी युद्धों से अवकाश प्राप्त करते ही मनोरंजन प्राप्त करने के लिए उन्मुख होते थे। श्री चन्द्रकेतु शर्मा के शब्दों में, 'मानव जीवन को कटुता से उलझ-उलझ कर फिर-फिर जीने के लिए हास्य की आवश्यकता होती है। उसके जीवन के लिए यह आवश्यक है कि वह जीवन की विभिपिकाओं को हंसी के फंवारे में बहाकर अपने को स्वच्छ रख सके। उसकी सुख शांति के लिए यह भी जरूरी है कि वह मानव विशेष में आ जाने वाली कमजोरियों पर व्यंग कस कर उन्हें पूरा करे।'[1]

राजस्थानी वातों में हास्य के तत्व समाये रहते हैं। लोक कथायें जहा शिक्षा-सदाचार आदि प्रदान करती हैं वहां हास्य एवं मनोरंजन भी प्रर्याप्त रूप से प्रदान करती हैं। 'सदियों तक मौखिक परम्परा से ये कहानियां राजस्थानी जन-समाज में आशा, आल्हाद, हर्ष-विषाद, उत्साह-उमग, शिक्षा-सदाचार और आमोद-मनोरंजन के भावों को वितरित करती रही हैं।'[2]

जहां एक ओर इन वातों द्वारा हास्यात्मक वातावरण तयार किया जाता है ग्रामीणों के मनोरंजनार्थ वहां जो कथा कहने वाला होता है उसके कहने के तरीके से भी मनोरंजन मिलता रहता है। वह वात को ऐसे ढग से शुरू करता है और उसको आगे बढ़ाता रहता है जिससे श्रोतागण ऊबे नहीं। वात के बीच बीच में जो 'हूंकारा' देने की पद्धति यहाँ है उससे भी कथा कहने वाला इस

---

(१) 'राजस्थानी लोक कथाओं में हास्यरस'—श्री चन्द्रकेतु शर्मा ('वरदा' अप्रेल १९५९ पृ० ५३)

(२) राजस्थानी वाता भाग ३. श्री सौभाग्यसिंह शेखावत (सम्पादकीय पृ० १)

बात से भिन्न रहता है कि उसके श्रोतागण नींद नहीं ले रहे हैं और वे पू
रूप से आनन्द पा रहे हैं।

प्रायः कथा कहने वाला सन्ध्या समय कामकाज से निवृत होकर जब क
कहने बैठता था तो धीरे-धीरे श्रोतागण एक कल्पना लोक में खो जाते थे
जहां बीच-बीच में रोचक वर्णन अथवा काव्य की पंक्ति आती वहां वाह व
की झड़ी लग जाती और कथा कहने वाला दूने जोश से कथा कहने लगता
इससे श्रोताओं का मनोरजन होता था।

इसी प्रकार की कुछ वातों के उदाहरण नीचे दिये जाते हैं:—

'गीता की हांडी'[१]—एक चमारिन सेठ के यहां शादी में बहुत से गीत सुनकर आई। जब उसके लड़के की शादी पक्की हुई तो वह सेठानी के पास गई और कहने लगी कि उसे भी लड़के की शादी में गाने के लिए कुछ गीत देवें। सेठानी उसकी मुर्खता समझ गई। कहीं गीत भी उधार दिए जाते हैं? उसको एक मजाक सूझी। उसने मिड़ और ततैयों का एक छाता हंडिया में डलवा कर ऊपर से ढक्कन लगा दिया और चमारिन को दे दिया। साथ ही उसे हिदायत दी कि एक 'कुठने' को चारों ओर से वन्द करके उसमें बैठे और बाहर अन्य औरतों को विठा देवे। फिर गीतों की हंडिया खोले। गीत निकलने लगेंगे। वह बाहर वाली स्त्रियों से कह देवे की जो कुछ वह बोले उसे वे टेर लेकर गावें।

चमारिन ने ऐसा ही किया। वह गीतों की हडिया लेकर 'ओबरी' को अन्दर से बन्द करके उसमें बैठ गई। अन्य औरतों को उसने ओबरी से बाहर विठा दिया। अब ज्यों ही उसने हडिया का ढक्कन उठाया त्यों ही सारी मिड़ें बाहर निकल पड़ीं और उसे काटने लगीं। औरतें बाहर बैठी हुई गीतों का इन्तजार कर रही थी। अन्दर से आवाज आई—'आळे' (अरेहाय) औरतों ने सोचा कि यह गीत है। अतः उन्होंने फौरन लय बांधी—

'आळे तो बाळे म्हाळे लाईवळ में छोवै'

भीतर से आवाज आई, 'बोळै' (अरे बापरे) औरतें गाने लगीं 'बाळ पळेंगी ढोळा मे' फिर भीतर से आवाज आई—'तोबा ळे'

---

(१) राजस्थानी लोक कथाओं में हास्य-रस—श्री चन्द्रेनु शर्मा (वरदा अप्रैल १९५९ पृ० २७ से प्राप्त)

इस पर औरतों ने गाया—'तोबा थाले छिटकाळां में'। ('भोळें' हमारे दूल्हा को थोरे बारे अच्छी लगती है। 'बारें'—बाड़ ढोरों की होती है। 'तोबारें'—तोवें (तोपें) सरकार में चलती हैं।)

कुछ ही देर में बळायण रो पीट कर दर्द के मारे बेहोश हो गई। उसका सारा शरीर सूझ गया था। इसके बाद बड़ी मुश्किल से उसे बाहर निकाला गया।

'कीड़ी की टांग'[1]—एक चमार अपने खेत से जा रहा था। कुए के ऊपर एक पीपल की डाली को देखकर सोचा 'कीडी की टांग निकाली जाय। (दोनो हाथों से सिर के ऊपर किसी आधार को पकड़ कर उनके बीच मे से होकर पैर निकालने की क्रिया को कीड़ी की टाग निकालना कहते हैं) वह फौरन पीपल पर चढ़ गया और डाल पर लटककर 'कीडी की टाग' निकालने लगा। वह चढ तो गया लेकिन उतरने की युक्ति उसे नही सूझी। एक ठाकुर उधर से निकल रहा था उसने उससे उतारने की प्रार्थना की। ठाकुर ने उससे कहा कि वह अपनी घोड़ी कुंए के ऊपर से कुदाता है। जब वह उसके पास से निकलेगा तो उसके पैर पकड़ लेगा। चमार फिर अपने हाथ छोड देगा और इस तरह सकुशल नीचे उतर आएगा। ठाकुर ने घोड़ी कुदाई–चमार के पैर पकड़ लिए किन्तु चमार ने अपने हाथ नही छोडे—घोड़ी तो निकल गई अब दोनों लटक गये। जब थक गये तो चमार ने ठाकुर से कहा कि कोई बात कहो तो समय कटे। ठाकुर ने कहना शुरू किया—

घोडी थी कूदणो, डाकती कूवा।
एक डेढ हो, अर् दो डेढ़ हूवा।।

चमार इसे सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। और खुशी के मारे तालिया बजाने के लिए ज्योंही उसने हाथ डाली से छोड़े, वे दोनों धम् से कुए में जा गिरे। उपरोक्त दोनों कथाएं चमारों सम्बन्धी हास्य-रस की लोक कथाए थी।

श्री अगरचन्द नाहटा के शब्दो मे, 'कहानी का पहला आवश्यक गुण है उसका मनोरंजन और चित्ताकर्षक होना। राजस्थानी बातो की शैली मनोरंजकता के लिए अद्वितीय है। मनोरंजकता के साथ-साथ प्रसाद गुण कूट कूट कर उनमे भरा रहता है। + + + + + + + दृश्यों की प्रभावोत्पादकता बढ़ाने के लिए अथवा विशेष वस्तुओं और परिस्थितियों को पूरी जानकारी

(१) राजस्थानी लोक कथाओं में हास्य-रस—श्री चन्द्रकेतु शर्मा (वरदा अप्रैल १९५९ पृ० ५७ मे प्राप्त)

का वर्णन भी करता रहता है और इसी कारण अस्वाभाविकता के दर्शन भी होते रहते हैं।

जैसे—'वात राजा मानधाता री,—राजा युवनाश्वर निपुत्र था। ऋषियों के पास गया और बच्चे की भीख मांगी। ऋषियों ने प्रसन्न होकर उसे पानी मंत्र से पवित्र कर दिया। राजा रानी को यह कहना भूल गया कि पानी तुम्हें पीना है। रात को उसे प्यास लगी और भूल से उसी पानी को पी लिया। उसके बच्चा हुआ। नाम मानधाता रखागया। मानधाता १२ वर्ष का होने पर अपने मामा अजयपाल के यहा रहने लगा अपनी मा के साथ। एक दिन मामियो द्वारा बताये जाने पर निश्वास छोडने का कारण उसने अपने मामा से पूछा—मामा के द्वारा लकडी बतलाने पर उसने हाथ डाला और वह उसे लेकर उड गयी—सात समुद्र पार उतरा और ऋषियों द्वारा खडाऊं दिये जाने पर अप्सराओं के महल मे उतर गया। अप्सरा के साथ सुख भोगते उसे ६ मास व्यतीत हो गये। अप्सरायें मानधाता को चाबियां देकर और यह कहकर कि चार कमरों को मत खोलना-इन्द्र को मुजरा करने चली गयी। मानधाता जिज्ञासावश पहले कमरे को खोलता है और वहा गरुड़ पक्ष उसे मिलता है और उसपर सवार होकर वह भगवान के दर्शन कर आता है और वापिस बन्द कर सो जाता है। इसी प्रकार फिर हर ६ महीने पश्चात् वह बारी-बारी अन्य तीनों कमरों को खोलता है और क्रमशः मोर, सप्तमुखी घोड़ा और गदहा मिलते हैं। फिर मानधाता वापिस अजमेर आकर मामा से मिलता है और सारा हाल बतलाता है। मामा के पूछे जाने पर कहता है कि वहा का हाल अच्छा है। अब वह भी विश्वास छोड़ने लगता है। फिर मामियों को सारा वहां का हाल बतलाता है और मामा के तपस्या करने चले जाने पर राजा हो जाता है।

इस वात में जिज्ञासा, कौतूहल, चमत्कार एव अलौकिक तत्वों के दर्शन होते हैं। इनके कारण वात अस्वाभाविक-सी लगने लगती है। आज के इस युग मे ऐसा विश्वास करना मुश्किल है। हां! इससे मनोरंजन अवश्य हो सकता है।

'जगदेव पवार' की वात मे भी अस्वाभाविक तत्व मिलते हैं। जगदेव पवार का भैरव के गण को इन्द्र युद्ध में परास्त करना तथा दो बार शीश दान करने को उद्यत होना अतिशयोक्तिपूर्ण एवं कल्पना मात्र है। 'बीरम देव' की कहानी में प्रेम की पुष्टि के लिए जो काशी-करौतवाली पूर्व जन्म की अन्तर्कथा का

निर्माण होता है वह भी आज अस्वाभाविक सा लगता है।

ऐसी घटनाओं पर विश्वास नहीं हो सकता और केवल कवि या लेखक की कल्पना मात्र ही ये घटनायें प्रतीत होती हैं।

इन कथाओं में अप्सराओं के पास पहुंचना और उनका अमुक कार्य करने को मना करना-पर फिर भी उसे करना तथा देवी के आगे शीश देना और फिर जिन्दा हो जाना ये कथानक रुढियां बन गयी है।

किन्तु इन बातों की ये घटनायें देखकर केवल उन्हें अस्वाभाविक कह देना अनुपयुक्त होगा। अलौकिक तत्वों के होते हुए भी कथा सम्पूर्ण रूप में अस्वाभाविक नहीं है।

'अलौकिक तत्वों का प्रवेश व अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन देख कर इन्हें कोरी कपोलकल्पित गप्पें समझ कर टाल देना बहुत बड़ी भूल होगी। इन बातों का सामाजिक मूल्यांकन करते समय इनसे व्यंजित होने वाले सत्य को ही ग्रहण करने की आवश्यकता है, क्योंकि वही इनकी उपादेयता है और इसी में इनकी सार्थकता भी निहित है। यहां के मानव की परिवर्तनशील सामाजिक एवं नैतिक मान्यताओं को जानने का बहुत बड़ा साधन तो यह साहित्य है ही, इसके अतिरिक्त शाश्वत सत्य का उद्घाटन करने वाली कथाओं का सार्वदेशिक तथा सार्वकालिक प्रभाव सदैव बना रहेगा, इसमें भी कोई संदेह नहीं।'[1]

'मलक दरियाव री वात'[2] का कथात्मक कलेवर पौराणिक कथाओं के सम न है। यह कथा विष्णु के अलौकिक कार्यों की प्रशस्ति के रूप में लिखी गई है। इस कथा में से यदि हम अलौकिक तत्व को निकाल देते हैं तो कथानक बहुत सहज और मनोरम बन जाता है। घटनाओं का उठाव, पात्रों का निश्चित व आवश्यक स्थल पर उद्भव, आगे आने वाले महत्वपूर्ण परिणामों का पूर्व-संकेत, पाठक के मन को साग्रह अकर्षित करने की शक्ति एवं कथा की सब संघर्षमयी घटनाओं का समग्र और चरम तक विकास—यह सभी गुण इस कथा में हैं। यों तो इस कथा का पौराणिक प्रयोजन भगवान विष्णु की

---

(१) 'राजस्थानी वात-संग्रह'—श्री नारायण सिंह भाटी ('परम्परा' भूमिका में उद्धृत पृ० १८)

(२) 'कथा की वात'-सोमन कोठारी ('परम्परा' राजस्थानी-बात संग्रह) पृ० १६४.

अपरम्पार माया, उनकी कृपालुता, उनकी अलौकिक शक्ति और अपने भक्त जनों पर स्नेह है, किन्तु यदि हम पौराणिकता के इस तात्विक पर्दे को हटा कर देखें तो हमें सांसारिक मनुष्यों के मन की अद्भुत स्थितियों के दर्शन होते हैं। पिता का अपने पुत्र के प्रति प्रेम, देवीदास की अपने कार्य के प्रति लगन कुंवर विचित्र का मित्र भाव, रामदास आदि की स्वामि भक्ति सभी सामाजिक जीवन को संभव बनाने वाले तत्व हैं।

यद्यपि हम इन वातों मे अस्वाभाविकता के गुण पाते हैं किन्तु अगर इसमे जो बात कही गई है उस पर जब भी दृष्टिपात करें तो एक स्वाभाविक वस्तु मिल सकती है। इन काल्पनिक एवं प्रेम तथा नीति, धर्म सम्बन्धी वातो को छोड़कर यदि हम ऐतिहासिक वातो पर अपनी दृष्टि दौड़ायें तो देखेंगे कि उनमें स्वाभाविक तौर से वीरों के अदम्य साहस का वर्णन हुआ है। जहां-जहां ऐतिहासिक वातों में अगर इतिहास के अलावा कोई काल्पनिक घटना को रचा गया है तो उसका उद्देश्य केवल मनोरंजन करना ही है। इसके अलावा इन वातों द्वारा शिक्षा, ज्ञान एवं सदाचार की बात भी बहुत अच्छे ढंग से उस समय के कथाकार अपनी सरल, सरस एवं सुन्दर शैली मे प्रस्तुत करते थे।

श्री अगर चन्द नाहटा के शब्दों मे—'कहानी कहने और लिखने वाले राजस्थानी कवियों को सरस्वती की विशेष कृपा से कुछ ऐसा अभ्यास और प्रतिभा प्राप्त थी कि सरल से सरल भाषा मे उत्तम से उत्तम स्वाभाविक और लोच भरे भावों को भर देते थे। एक शब्द का भी वृथा प्रयोग नही होने पाता था। भरती के शब्द और भावो को उनमे ढूंढना आकाश-कुसुम की तरह निरर्थक है। भाव-भंगी और भावुकता-द्योतक चमत्कारों की तो राजस्थानी वात एक तरंगिणी है जिसमे असंख्य भाव लहरियां किलोल और कलरव करती हुई अपने उद्दिष्ट पथ की ओर प्रवाहित होती रहती है। बीच-बीच में अलंकृत भाषा की निराली छटा देखते ही बनती है। × × ××× राजस्थान देश और समाज का चित्र अपनी वैयक्तिक विशेषताओं के साथ इन कहानियों में देखने को मिलता है।'[१]

उपरोक्त तमाम विवरणो के द्वारा हमने देखा कि इन वातों मे अस्वाभाविकता

(१) 'राजस्थानी बातों का संग्रह एवं प्रकाशन'—श्री नाहटा (वरदा अप्रेल ५६) पृ० १०४

होते हुए भी वह स्वाभाविकता बन जाती है। राजस्थानी वार्तों में स्वा
विकता लाने का भरसक प्रयत्न लेखकों ने किया था और वे उसमें सफल भी
थे। चूंकि उन पर एक तो संस्कृत-साहित्य का प्रभाव था और दूसरा
समय के लोग प्रनपढ़ भी होते थे यही दो कारण है जिनसे वार्तों में अ
किकता एवं चमत्कारिता के दर्शन होते हैं।

राजस्थानी वार्तों में अति प्राकृत (अलौकिक) तत्व

अति प्राकृत—अलौकिक - तत्व का तात्पर्य है जो स्वाभाविक नहीं है। अ
के संसार मे हम जिसे अपने मध्य नहीं देखते हों, जिसके विषय में को
कल्पना हो की गई हो ऐसी घटना को हम अलौकिक कहेंगे। सुसंस्कृत मा
ने जो कृत्रिम सीमायें बनाई वे इस अलौकिक-साहित्य के विषय हैं। इन
अज्ञात काल से आज के युग तक और आज के मानव तक एक शृंख
जुडी हुई मिलेगी। पूर्व जन्म का सम्बन्ध आज के जीवन से और आज
जीवन का सम्बन्ध भावी जन्म से बड़े चमत्कारपूर्ण ढंग से जुड़ा हुआ मिलेगा
शिवजी ने पार्वती की अनुनय विनय पर अपने कमंडलु से पानी छिड़क क
मृत मानव को जीवित कर दिया, एक जादूगरनी ने अपने प्रेमी को सदा अप
पास रखने के लिए मनुष्य से तोता बना लिया, एक भूत गगनचुम्बी मह
उठा लाया और एक राजकुमार सात समुद्रों को पार कर चला गया और व
से धन वैभव के साथ-साथ सुन्दरी राजकुमारी को ब्याह लाया आदि सर्भ
अलौकिक एवं असाधारण घटनायें इस साहित्य में मिलेंगी।

अलौकिक तत्वों से युक्त इस प्रकार की वार्तें राजस्थानी वात-साहित्य में बहुत
मिलती हैं। कहानीकार अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए लौकिक एवं अलौकिक
सभी प्रकार की सामग्री का उपयोग करता है। कथा के विकास मे स्थान
स्थान पर ऐसी घटनाओं का आगमन होता है जिससे नायक या नायिका की
उद्देश्य प्राप्ति में निरंतर विघ्न उपस्थित होते रहते हैं। एक विघ्न के हटने
पर जब कुछ आशा बंधती है तो दूसरा विघ्न उपस्थित हो जाता है। इन
वार्तों की एक विशेषता यह है कि इन विघ्न उपस्थित करने वाली घटनाओं
का आगमन इस तरह करवाया जाता है कि औत्सुक्य का निर्वाह बराबर
होता रहता है। इन वार्तों में आये हुए कुछ तत्व इस प्रकार है—भूत, बैताल
पिशाच, भैरव, कंकाली, जोगणी, योगिनी, साधु, तन्त्र-मन्त्र, सिद्ध पीर,
उड़नखटोला, कायाकल्प लेना, पाषाण से प्राणी हो जाना, प्राणी का पाषाण

प्रतिमा हो जाना, शीश दान देकर जीवित हो जाना, उड़नेवाली खड़ाऊ, उडने वाली छड़ी, किसी का जीव किसी में रहना—परकाय प्रवेश—आदि-आदि।

वात-रचयिताओं ने कहानी में जिज्ञासा, कोतूहलता, मनोहरता एव चमत्कार तथा आकर्षण पैदा करने के लिए इन अप्राकृत तत्वों का सहारा लिया। इन वार्तो मे एक और 'फिर क्या हुआ' की भावना भी पायी जाती है। चू कि वातें रात में ही कही जाती थीं और साथ-साथ वे लम्बी एव छोटी दोनो प्रकार की होती थी अतएव श्रोता ऊबे नहीं इसी बात को ध्यान मे रखते हुए इन अलौकिक तत्वों का समावेश वातों मे किया गया। उस समय ये अलौकिक और असम्भव तत्व ही मानव जाति को असीम महत्वकाक्षा की ओर अग्रसर करते थे। दादी-नानी की कहानियो मे कल्पना की जो असीम उड़ानें भरी जाती थीं उनमें एक अपार आनन्द की अनुभूति होती थी। कहानी के पात्रों के आपस में मिलने के लिए अगर कोई विघ्न उपस्थित हो जाता था तो कहानीकार ऐसे दृश्य उपस्थित करके उन में औत्सुक्य के भाव का निर्वाह करता रहता था।

'इन घटनाओं व पात्रों की अवतारणा में भूत-प्रेत, शकुन, स्वप्न, देवी-देवता, आकाशवाणी, जादू टोना आदि कितनी ही अलौकिक बातों का समावेश मिलता है।'[1]

'पदमसिंह जी री वात' मे एक जती के वशीकरण सुरमा बनाने का वर्णन आता है। इसी तरह 'अनोखा कंवर जी'—में एक जोगी का जिक्र आता है। उसके अपना डंडा फटकारते ही दो गुलाम भूत हाजिर होते और उनसे वह मनमानी, बुरी भली चाकरी लेता, वे गुलाम भूत दुःखी हुए उसके बुरे भले हुक्म की तामील करते। इसी प्रकार के अन्य विश्वास हमारे समाज मे सदियों तक प्रचलित थे।

डॉ॰ शिवस्वरूप शर्मा 'अचल' के शब्दो मे 'राजस्थानी कहानियों की यह विशेषता है कि उनमे आप्सरिक एव वैतालिक तत्व कहीं न कहीं घुस ही आये हैं। कहानी की विलक्षणता, मनोहरता एव आकर्षण शक्ति को बढ़ाने के लिए इनका प्रयोग होता है।'[2]

---

(१) राजस्थानी वात-संग्रह—श्री नारायणसिंह भाटी ('परम्परा' भाग ६-७ भूमिका) पृ॰ १६

(२) राजस्थानी गद्य का ऐतिहासिक विकास—डॉ॰ शर्मा 'अचल' पृ॰ १७४

'पलक दरियाव री बात'[1]—में भगवान की लीला का वर्णन हुआ है। इसका कथात्मक कलेवर पौराणिक बातों के समान है। इस कथा में भगवान् विष्णु की लीला का तत्व कथानक की प्रभविष्णुता को तीव्रतम बनाता है। इस अलौकिक तत्व के कारण ही देवीदास और कुंवर विचित्र—एक ही 'व्यक्ति' बने रह सके। कुंवर विचित्र के जन्म से लेकर युवक होने तक के कुल वर्ष कुछ क्षणों के रूप में बयान किये गए हैं। अपने पिता के पास से उसका पुत्र देवीदास भगवान विष्णु की पूजा के लिए गया और वहीं लक्ष्मी की अनुकम्पा से वह भगवान से 'पलक दरियाव' का तमाशा देखने का आग्रह करता है। उधर उसके पिता भोजन की थाली पर उसका इन्तजार कर रहे हैं।

'ताहरां देवीदास जाणियो श्री भगवान प्रसन्न हुवा आवाज देवे छै, सो देवीदास हाथ जोड़ि अरज कीवी जो आप महरबान हुवा सो मांगू सो पाऊं। फेर हुकम हुवो—जो तू मांगसी सोई हूं देईस। ताहरां देवीदास अरज कीवी—जो आप पलक दरियाव कहवो छो तो म्हे पलक दरियाव रो तमासो दिखावो। श्री भगवान फरमायो—इये बात कासूं देखसी ? क्यूं दूजो मांग। राज मांगसी, पातसाही मागसी और कोई सरवरी वसत देखै सो मांगीजै देवीदास प्रणाम-दण्डोत कर अरज करी—जो इतरा थोक तो आप रै प्रताप से सदा ही है। जे आप कृपा कीवी छै तो आप पलक दरियाव रो तमासो दिखावो। तद फेर आवाज हुई—तो देख। इतरो हुकम हुवो, तिसे देवीदास दण्डोत करि नीचे नमियो अर जीव नीसर गयो। ऐसी माया ईश्वर री हुई।'

इन्हीं कुछ क्षणों में देवीदास राजा कनकरथ के यहां जन्म भी लेता है, विवाह भी करता है और उसके पुत्र भी उत्पन्न हो जाता है अन्त में राजा के यहाँ से मृत होकर वह वापस देवीदास बन जाता है, और जब वह वापस अपने घर लौटता है तो उसके पिता उसी थाली पर बैठे हुए हैं। इस प्रकार देवीदास-कुंवर विचित्र की सारी जिन्दगी जीकर, कुछ ही क्षण में वह अपने पिता के पास आ जाता है।

'जगदेव पवार री बात'[2]—में कंकाली, भैरव एवं जोगनियों आदि का वृत्तान्त मिलता है। जगदेव पवार अपने आश्रयदाता सिद्धराज-नरेश की रक्षा हेतु

---

(१) 'कथा की बातें'—श्री कोमल कोठारी ('परम्परा' राजस्थानी बात-कंवर विशेषांक) पृ० २६४

(२) हस्त० अनूप पुस्तकालय बीकानेर में प्र० ८१

भौर जोगनियों से करता है। जब अर्द्ध रात्रि के समय राजा सिद्धराज जोगनियों का हंसना और रोना सुनता है और उसका कारण जानना चाहता है तब जगदेव पवार ही उसका पता लगाकर सूचना देता है कि यह पाटन और दिल्ली की जोगनियाँ हैं:—

'तरे उवे बोली, पाटण री जोगणियां छां। तिको प्रभात सवा पौर दिन चढ़ते सिधराय जै सिंह री मृत्यु छै। तिण सूं रुदन करां छा। × × × × × × × × × × × तरे कह्यो म्हें दिल्ली री जोगणियां छां जिके राजा जैसिंह ने लैण ने आई छां। तिण सूं बधावा गीत गावां छां।' इस कथा मे कंकाली का रूप देखने योग्य है 'तिका काळी डीघी, मोटा दांत, दूबळी, घणी डरावणी, माथारा लटा बिखरिया, घणा तेळ माहे चवती धवळा केस माथे निलाड़ सिंदूर थेथड़ियो थको, लोवड़ी काळी, हाथ माहे त्रिसूळ भालिया दरबार आई।' यह कंकाली जगदेव पवार की दान-प्रतिष्ठा को बढ़ाने के लिए दरबार में आती है। सिद्धराज से दान की याचना करती है। सिद्धराज उत्तर देते हैं कि जगदेव जितना करेगा उससे चौगुना वह दान करेगा किन्तु जब जगदेव कंकाली को अपना सिर उतार कर दे देता है तो सिद्धराज अपनी असमर्थता पर शर्मिन्दा होता है। कंकाली प्रसन्न होकर जगदेव को पुर्नजीवित कर देती है।

"राजा मानधाता री वात"[1] मे अप्सरा लोक का चित्रण हुआ है। अजयपाल की जादू की लकड़ी मानधाता को सात समुद्रों पार ले जाती है। वहां मानधाता को ६ धुनियों के सम्मुख चार योगी दिखाई देते हैं। योगी उसे खड़ाऊ देते हैं। उनके पहिनते ही मानधाता अप्सरा लोक में जा पहुंचता है। ये इन्द्रलोक की अप्सरायें है। इनमें से एक उसको वरमाला पहिना देती है।

"देखें तो आगे राजा मानधाता सूता छै। अपछरायां कह्यो माणज मामा मेल्हीयो, कह्यो जी मामा मेल्हीयो। ताहरां एक अपछरा माणेज रै वरमाला घाली छै। सु अपछरां सुं सुख भोगवै छै। यूं करता मास ६ हुवा। छटे महीने कोठार री कूंचया लाया छै। अपछरायां कह्यो ये चार कोठार मता खोल ज्यो। यु कहि अपछरायां इन्द्र रै मुजरै गयां छै।"

मानधाता प्रति छः मास में एक एक कमरा खोलता है। क्रमशः प्रत्येक कमरे में उसे

---

(१) 'चौबोली'—सं० कन्हैयालाल सहल एव पतराम गौड पृ० ४३

गरूड़ पंख, मोर, अश्व एवं गधा मिलता है। गरूड़ पंख उसे इन्द्र के घर में ले जाता है। मोर उसे सारे नाग लोक में घुमाता है। अश्व उसे मृत्युलें एवं यमपुरी की प्रदक्षिणा कराता है। गधा उसे वापिस मामा अजयपाल के पा अजमेर पहुंचा देता है।

"राणी चौबोली री वात"[1] एवं "सूरा अर सतवादी री वात"[2]—में राक्षस स्वरूप की कथा दिखाई देती है। "राणी चौबोली री वात" में राजा भो किसी राक्षसी की जटा मे स्वर्ण मक्षिका बनकर रहता है

"राजा भोज अगर री वात सु ं उथ आयौ। राखसणी राजा नुं देखि साड़ीरौ पलौ फेरियो। समस्या कीवी तूं एथ क्यूं आयौ। तोनुं राखस खासे राखसणी सोवनमाखी राजा नुं करि नैं जटा माहे राखीयौ।"

"सूरी अर सतवादी री वात" मे फूलमती राक्षस की नगरी में निवास करती है। जिसने सारे नगर को जन-रहित कर दिया था। राजा वीरमाण उस राक्षस को मार डालता है।

"पाबूजी री वात" में धांधलजी किसी अप्सरा से विवाह करते हैं। इस अप्सरा से सोना नाम की लड़की और पाबू नाम का लड़का उत्पन्न होता है।

"वीरमदे सा नगरा" की कथ"[3] में पाषाण की प्रतिमा का एकाएक अप्सरा हो जाना ध्यान आकर्षित करता है—"देह में पासाण री पूतळी। हा घणी फूटरी। कान्हड़ दे जी उणरे रूप हिसी घणं गोर करि जोवण लागा। तिण समैं कोई देव रैं जोग उवा पूतली थी तिका अपछरा हुई। तरैं रावजी कह्यो, थे कूण छो। तरैं उवा बोली अपछरा छुं। मैं थाने वारिय छूं। पिण म्हारी आवात किणो आगे कही तो परी जासूं।"

इस प्रकार कान्हड़दे की रानी के रूप में वह रहती है। वीरमदे उसका पुत्र है। एक दिन की बात है कि वीरमदे को कोई मस्त हाथी उठाने वाला होता है। गवाक्ष में बैठी हुई वह रानी उसे देखती है। वहीं से वह अपने हाथ फैलाकर अपने पुत्र को उठा लेती है। इस प्रकार अलौकिक व्यापार देखकर उसके अप्सरा होने की बात प्रकट होती है। फलस्वरूप अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार वह वहीं अन्तर्धान हो जाती है।

(१) "चौबोली" डा० कन्हैयालाल सहल एवं पतराम गौड़, ६ पृ० और ४१
(२) राजस्थानी गद्य साहित्य का एतिहासिक विकास (प्रकाश्य) डा० अचल पृ० १७५

इस प्रकार की अलौकिक तत्वों से युक्त यह राजस्थानी बातें केवल औत्सुक्य वृत्ति का ही पोषक रही हैं इन वातों में वैतालिक एवं आप्सरिक तत्व कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में मिल ही जाता है। इन कहानियों की कल्पना में कुछ भी होना असम्भव नहीं है। किन्तु आज के युग मे यह कोरी कल्पना अस्वाभाविक सी लगती है। इन मे उन घटनाओं का वर्णन आता है जिनसे न तो हमारा कोई सम्बन्ध है और न ही इस ससार में जिन्हें हम अपनी दृष्टि से देख पाते हैं। यह तो केवल एक कल्पना की दुनियां है जहां लौकिक–अलौकिक, झूठे–सच्चे, काल्पनिक–वास्तविक एव विचित्र किसी की भी कामना करो तुरन्त सामने उपस्थित हो जाती है तो भी इन वातों में मनोरंजन का जो विशेष गुण है, उसके कारण ये सदियों से जन–मानस मे अपना अमिट प्रभाव जमाये हुए हैं। वातावरण बदल गया। युग के बाद युग बीत गये पर मनोरजन के गुण ने इन वातों के आकर्षण को कम नहीं होने दिया और इसीलिए वे आज भी जीवित हैं अलौकिक-अतिप्राकृत-तत्वों से भरी ये राजस्थानी-वातें राजस्थानी लोक साहित्य की एक अमर निधि है।

अध्याय/४

राजस्थानी वार्तों में चरित्र-चित्रण

'पात्र वो होते हैं जो या तो कथानक का कार्य करते हैं अथवा जिन पर घटनायें निर्भर करती हैं।'[1] कहानी शुरू करने से पहले कथाकार हमारे समक्ष कुछ व्यक्तियों को लाता है—इन व्यक्तियों का सम्बन्ध कहानी की घटनाओं से होता है और ये ही व्यक्ति कहानी के पात्र कहलाते हैं। बिना पात्रों के कहानी नहीं होती। पात्रों का मनोभाव, उनकी प्रकृति, उनका आदर्श, उनका उद्देश्य आदि जो सुन्दर ढग से सम्पूर्ण रूप में हमारे सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है वह चरित्र-चित्रण होता है।

'कहानी में चरित्र-चित्रण का महत्व सबसे अधिक है क्योंकि कलात्मक दृष्टि से एक ओर कहानी की संक्षिप्त सीमा के कारण चरित्र का विकास दिखाने का अवसर बहुत ही कम रहता है और दूसरी ओर चरित्र-चित्रण की संभावनाएं इतनी सीमित रहती हैं कि उनके चरित्रों को स्पष्ट करना परम हस्तलाघव की परीक्षा है।'[2]—पात्र ही कथावस्तु के सजीव संचालक होते हैं। अगर पात्र नहीं तो कहानी नहीं और बिना चरित्र-चित्रण के कहानी अधूरी ही समझी जायेगी।

---

(१) कुछ विचार—स्व० श्री प्रेमचन्द
(२) "हिन्दी कहानियों की शिल्प विधि का विकास" डा० लक्ष्मीनारायणलाल पृ० ३३१

Seon'O' Faolain के शब्दों में, "One of the best definations ever given of the techinique of fiction in that action reveals character and that character demonstrates itself in action and action is only another word for incidents."[1] —जिस प्रकार से एक गूंगा एवं बहरा व्यक्ति रूप और रंग से कितना ही सुन्दर हो—चाहे उसने कितनी बढ़िया पोशाक पहिन रखी हो वह हमे अच्छा नहीं लगेगा उसी प्रकार से कहानी का कलेवर कितना ही बढ़िया हो, उसमे चाहे कितने ही गुण मौजूद हों, किन्तु जब तक उसमे सम्यक चरित्र-चित्रण नहीं हुआ होगा तब तक वह हमें अच्छी नहीं लगेगी। पात्र अपनी चारित्रिक विशेषताओं द्वारा ही पाठक के हृदय पर अपनी एक अमिट छाप छोड़ जाते हैं। श्री जिज्ञासु के शब्दों में 'चरित्र-चित्रण से ही पात्र कहानियों में अमरत्व को प्राप्त होते हैं। इसी के द्वारा उनके आदर्श सदैव हमारे सामने झूमते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। कहानी रूप दर्पण में चरित्र की छवि-छाया हमे अमरत्व प्रदान करती है, इसमें कोई संदेह नहीं।'[2]

पात्र में जीवन-शक्ति विद्यमान होनी आवश्यक है। पात्र हमेशा सजीव और स्वाभाविक हो, इनका निर्माण कोरी कल्पना की कलम से न किया जाकर आत्मानुभूति की रंगीन कलम से होना चाहिए। पात्र ऐसे होने चाहिए जो सप्राण एवं सर्वसुलभ हों। पात्रों के अन्दर मानव हृदय के सुख-दुःख, हर्ष विषाद, विरह-मिलन आदि भाव विद्यमान रहने चाहिए।

'पाठक के हृदय में पात्रों के प्रति सहानुभूति का उदय होना, सफल चरित्र-चित्रण का प्रतीक है।'[3] पात्रों के चरित्र-चित्रण में वास्तविकता, संक्षिप्तता, *स्वाभाविकता,सांकेतिकता, वर्णनात्मकता, सकेतात्मकता, कथोपकथनात्मकता* और घटनात्मकता आदि होने चाहिए। जो लेखक अपने पात्रों को घटना के सहारे ही आगे बढ़ाता रहता है, पात्र को कभी भी अमरत्व प्रदान नहीं कर सकता। और न ही वे पात्र आदर्श पात्र होते हैं। 'आदर्श पात्र के लिए यह आवश्यक है कि वह घटनाओं पर विजय प्राप्त करे, तथा समय और

(१) The short Story-Seon 'O' Faolain—Page No. 165.

(२) कहानी और कहानीकार—श्री मोहनलाल जिज्ञासु पृ० ३०

(३) कहानी के तत्व श्री मथुराप्रसाद शर्मा एम० ए० (साहित्य-संदेश जनवरी फरवरी १९५६ पृ० २७६

परिस्थितियों के अनुसार उन्हें अपनी ओर मोड़ सके। पात्रों को जीवन-शक्ति देना कहानी-साको-वाला का प्रधान कार्य है।[1]

पात्र का चरित्र-चित्रण करने से पहले लेखक को अपनी वर्णन-शैली, व्यक्तित्व के विषय में और संसार की गतिविधियों के विषय में ज्ञान ले आवश्यक है। पात्रों में व्यक्तित्व भाव, संघर्ष और मानव के शाश्वत प्रश्नों शृंखला गुंथी होनी चाहिए। 'कहानीकार पात्रों के विषय में कुछ न कहानी पढ़ लेने पर स्वयं उनके स्वभाव, आचरण और व्यवहार की हमारे ऊपर पड़ जाय—श्री मोहनलाल जिज्ञासु।

राजस्थानी वातों के पात्रों की विशेषता—

राजस्थानी का वात-साहित्य अत्यन्त समृद्ध है— उसमें सभी विषयों को छु हुई वातें विद्यमान हैं। धर्म की और नीति की, वीरता की और प्रेम की हास्य की और करुणा की, राजा की और प्रजा की, देवताओं और भूतों की चोरों और बारोटियों की, आदर्शवादी और यथार्थवादी, लौकिक और अलौ की—सभी प्रकार की हजारों की संख्या में वातें विद्यमान हैं। इन वातों में घटनायें ही मुख्य रूप से आय हैं—पात्र घटनाओं के सहारे ही चलते हैं। पात्रों का चरित्र-चित्रण है अवश्य किन्तु घटनायें ही उनके चरित्र को दर्शाती है। चन्द वातें ही ऐसी मिलेंगी जिनमें पात्र अपने स्वयं के व्यक्तित्व के कारण उभर आयें हों। किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वातों में पात्र केवल कठपुतली मात्र ही रहे हैं—थोड़ा थोड़ा चरित्र-चित्रण हमें प्रायः हर वात में मिल ही जाता है।

राजस्थानी वातों में पात्र दो प्रकार के मिलते हैं—एक ऐतिहासिक और दूसरा काल्पनिक। इसके साथ-साथ हमें स्त्री पात्र भी मिलते हैं जिनमें स्त्री चतुरं का वर्णन प्राप्त होता है। देवी-देवता, जोगिनी, कंकाली भूत प्रेत, पिशाच आदि भी वातों में कहीं-कहीं पात्र बनकर हमारे सम्मुख आते हैं।

ऐतिहासिक पात्र तो हमारे सामने अपनी अमरता की छाप लिये हुए आते हैं किन्तु काल्पनिक पात्र भी इन इतिहास प्रसिद्ध पात्रों के एक से अधिक कथानकों में छाये हैं अतएव वे भी इनके साथ-साथ अमर बन गये हैं। जैसे खापरा चोर अनेक कथाओं का विषय बन गया है। "राजा भोज और खापरा

(१) कहानी और कहानीकार श्री मोहनलाल जिज्ञासु पृ० ११

चोर री वात'' "राजा भोज की पंदहरवी विद्या'' आदि ऐसी वार्ते है जिनमे खापरा चोर इतिहास प्रसिद्ध पात्रों के साथ आकर वात -साहित्य मे एक अमर पात्र बन गया है । मांगिया बैंताल, कवड़िया जुआरी, माणिकदे मरवाण आदि भी कुछ काल्पनिक पात्र राजा भोज के साथ सम्बन्धित होकर वात कथाकारो की कल्पना में हर समय जिन्दा रहते हैं ।

वात लेखकों का प्रधान लक्ष्य चरित्र-चित्रण करना नहीं था उनका उद्देश्य या तो श्रोताओं का मनोरंजन करना या अथवा वे अपने पात्रों द्वारा हमारे हृदय पर एक विशेष प्रभाव डालना चाहते थे । कहानियों में आता है-एक था राजा एक थी रानी ....और कहानी चल पड़ती है—यहां तक कि सारी कहानी समाप्त हो जायेगी किन्तु राजा कौन था उसका क्या नाम था—कहानी मे इस पात्र को प्रस्तुत करने का उद्देश्य क्या था-इस बात का पता अन्त तक नहीं लगा सकता । वात लेखकों ने चरित्र-चित्रण को सदा गौण समझा । डा० अचल के शब्दों मे "इन कहानियों में पात्रों के चरित्र-चित्रण की ओर ध्यान बिल्कुल नही गया है । स्वाभाविक या मनोवैज्ञानिक आधार पर बहुत कम पात्र खड़े हुए दिखाई पड़ते हैं । कथानक के तार तम्य एव प्रवाह की रक्षा करने के लिए पात्रों को कठपुतली बनना पड़ा है । आसुरी, देवी या मानवी वृतियो में लिपटे हुए पात्र भाग्य या अप्रत्याशित परिणामों की शरण मे छोड़ दिये गये हैं ।"[1]

ये लेखक नीति धर्म, धार्मिक, पौराणिक आदि वातों द्वारा केवल प्रभाव ही डालना चाहते थे चरित्र चित्रण की प्रधानता कहानी में होनी चाहिए इस ओर इनका ध्यान बिल्कुल नहीं गया था । तो भी चरित्र-चित्रण किसी न किसी रूप में थोड़ा बहुत मिलता ही है कहीं कहीं थोड़े से शब्दों द्वारा ही पात्रों का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है जैसे 'जगदेव पंवार री वात" मे भैरव का जो रूप वर्णन किया गया है उससे उसका स्वरूप स्पष्ट हो जाता है ।

'काळो भैरु लूंगी री लगोट पहरियां केस तेल माहे गरक कीयां, सिंदूर लागो गुरज हाथ माहे लीयां, चोखा ऐराक माहे मैमंत हुवो थको सिधराव रु निहैं जाय ने हाथ पकड़ नीचे नाखि पाशा नीचे दे नैं आड़े चोरने भैरू पौढ़ रह्यो ।"

इसी वात में वर्णित कंकाली का स्वरूप भैरु से भी अधिक स्पष्ट एवं प्रभावशाली है – " तिका काळी डोगी मोटा दात, दूबळी, घणी डरावणी, माथारा

(१) राजस्थानी गद्य साहित्य का ऐतिहासिक विकास—डा० शिवस्वरूप शर्मा 'अचल' पृ० १७८

लटा विखरिया, घणां तेल मांहे पचती, पचळा केस माथै, लिलाड़ सिं येयड़ियो थको, लोवड़ी काळी काळो घावळो, कांचली तेल मांहै भरकाव थ उघाड़े माथे कीयां, हाथ माहे त्रिसूळ झालियां दरबार आई।"

यह तो पात्रों के बाह्यरूप का वर्णन है किन्तु इसके अलावा कुछ ऐसे पात्र भ हैं जिनमें अन्तर्द्वन्द्व भी मिलता है। इन प्राचीन वातों में कुछ ऐसी बातें भी मिल हैं जिनमें कोई एक आदमी किसी खास काम के लिए ही प्रसिद्ध होता है औ वह उसके लिए कुछ निश्चित धन लेता है। बातों में ससटकिया एक ऐसा पात्र है जिसे केवल विशेष काम ही सौंपा जाता है, साधारण कार्य नहीं औ वह इस कार्य को करने के लिए एक लाख टके लेता है। ससटकिये की बा भी हमें खापरिया चोर की तरह बहुत संख्या में मिल जायेगी।

इसके अलावा हमें कर्तव्य पालन के भी चित्रण मिलते हैं। इनके पात्र अधिकां इतिहास प्रसिद्ध ही हैं। ये पात्र विशेषतौर पर राजपूत ही होते हैं। राजपू चरित्र से उनकी मन, कर्म और वचन से दृढ़ता का पता लगता है। राजपू प्रतिज्ञा पालन से विमुख होना अपनी कायरता समझता है, वह अपने प्राण देकर भी प्रतिज्ञा पालन करता है। सभी राजपूत वीर दृढ़ प्रतिज्ञ होते हैं। राजपूती शौर्य और वीरता की अनेक कहानियां हैं। जैसे—"बात पताई रावळ री" में पताई रावळ अपने देश के मान की रक्षा के लिए अपने प्राण दे देता है। वह इतना वीर होता है कि बादशाह की हिम्मत भी जवाब दे देती है किन्तु फूट के कारण बादशाह जीत जाता है और वह अप्रतिम वीर मारा जाता है। इसके शौर्य की बड़ाई स्वयं बादशाह ने की।

"बात मिरजाराव राजा करमसेन री" इस कहानी में नायक करमसेन के आदर्श राजपूत चरित्र को दर्शाया गया है। इसमें राजा उग्रसेन के पाटवी कुंवर करमसेन के मारवाड़ राज्य से च्युत होने पर अजमेर मेरवाड़ा के [illegible] पर कब्जा करने का वर्णन है। राजा करमसेन बादशाह जहांगीर के समकालीन हैं। जहांगीर ने इन्हें एक बार चंवर ढुलाने के लिए कहा किन्तु स्वाभिमानी को चंवर ढुलाते देख राजा करमसेन ने इनकार कर दिया इस प्रकार अपने मान की परवाह नहीं की। इस स्वाभिमान के रूप में करमसेन का चरित्र विशुद्ध एक सच्चे राजपूत के रूप में स्पष्ट बन पड़ा है।

[illegible] के राजा [illegible] के शौर्य और प्रतिज्ञा [illegible] हुआ है।

"जगदेव पंवार"—एक ऐतिहासिक व्यक्ति है । यह एक अत्यन्त शौर्यवान् वीर हैं । कहानी में जगदेव भैरव के गण को दो बार परास्त कर देता है तथा दो बार कंकाली को शीश दान देने को उद्यत होता है ।

"पाबूजी री वात"—पाबूजी भी एक वीर चरित्र हैं—जो अपनी वीरता और सात्विक आचरण के कारण राजस्थानी जनता के द्वारा देवता की नरह पूजे जाते हैं । इन्होंने गायों और अनाश्रितों की रक्षा के लिए अपने प्राण दिये थे ।

राजपूत शौर्य की बढ़ाई जितनी की जाय उतनी ही थोड़ी है । सत्य के लिए राजपूत वीर पिस जाता है, अपने अस्तित्व को मिटा देता है, परन्तु अपने सैद्धान्तिक सत्य की जीते जी रक्षा करने की भरसक चेष्टा करता है । यह एक विलक्षणता केवल राजपूतों के चरित्र मे ही पाई जाती है जो संसार की बहुत कम शूरवीर जातियों में मिलती है । स्व० श्री सूर्यकरणजी पारीक के शब्दों में, "आजीवन युद्ध करने के लिये हृदय मे अदमनीय लालसा रखना, सिर कट जाने पर घटों युद्ध करते जाना, निशस्त्र होकर शेरों से मल्ल युद्ध करना और आत्मगौरव की भावना से प्रेरित होकर अपने हाथ से अपना मस्तक काट देना, × × × जिनका कर दिखाना संसार मे यदि किसी जाति के लिए संभव है तो वह है राजपूत जाति ।"

राजपूतों ने जहां एक ओर कर्त्तव्य पालन किया वहा दूसरी ओर प्रेम की कथायें भी आती हैं, जिनमें प्रेमियों का चरित्र-चित्रण बड़ा अच्छा बनरहा है । सबसे पहला उदाहरण प्रसिद्ध प्रेम कथा "ढोला मारूरी वात" लेते हैं—इस कथा मे ढोले का एक प्रेमी के रूप मे बहुत ही सुन्दर चित्रण हुआ है । ढोला एक सहज, सहृदय, और वीर नवयुवक है । वह एक राजकुमार है । उसके हृदय मे प्रेम की औसत मात्रा है । ढोले का मोह सुन्दरता से था । वह जब मारवणि का विरह-दीप्त संदेश और उसके सौन्दर्य का वर्णन सुनता है तो प्रेम-भावना का अनुभव करता है । इससे संदेश से पूर्व ढोला को अपने शैशवकालीन विवाह का ज्ञान नही था । उसका विवाह उसके पिता इसी बीच मारवणि से कर देते हैं । अन्त में ढोला कठिनाइयों को पार करता हुआ पूगल से मारवणि को ले आता है ।

"सयणी चारणी री वात"—यह वात भी दो प्रेमियों की एक करुण कथा है । जितना उभार एक प्रेमी के नाते ढोले के चरित्र मे आया है उतना इस वात में सयणी के चरित्र में नहीं । तो भी वह एक सच्ची प्रेमिका होती है जो छः माह

तक अपने प्रेमी की प्रतीक्षा करती है, किन्तु जब वह नहीं लौटता है तो वह उसकी याद को दिल से लगाये हिमालय में गलने चली जाती है।

इसी प्रकार की राजस्थानी बात-साहित्य में प्रेम सम्बन्धी अनेक कथायें जिनमें प्रेमियों का चित्रण हुआ है।

इसके अलावा राजस्थानी बातों में स्त्रियों का चरित्र-चित्रण भी किया गया है स्त्री चरित्र-चित्रण में इनके स्त्री-चातुर्य की बात को दर्शाया गया है। इ त्रिया-चरित्र का वर्णन भी बहुत सी बातों में देखने को मिलता है। इ कहानियों मे विभिन्न परिस्थितियों मे डाल कर स्त्री के चरित्र को ऊंचा उठा गया है। जैसे 'विणजारा विणजारिण री बात"[1] मे स्त्री ने पुरुष को सुधा है। अपने पति के कहने पर पत्नी अपनी चतुरता का परिचय देती है। व एक फूहड़ लकडहरे पर अपना प्रयोग करके उसे सभ्य पुरुष बना देती है यह स्त्री की विजय है। इसमे स्त्री के चरित्र का वह गुण दर्शाया गया है जं चातुर्य से युक्त है।

"साहूकार री बात"[2] मे स्त्री अपने को चतुर सिद्ध करती है वाणिज्य के लिये बाहर जाने वाला उसका पति साहूकार अपनी पत्नी से ३ इच्छायें प्रकट करता है १ पातिव्रत धर्म की रक्षा करते हुए पुत्र उत्पन्न करना, २ सुन्दर भवन बनाना, ३ अश्व मगवाकर उनके लिए अश्वशाला का निर्माण करना। इनमे प्रथम कार्य कठिन होता है, किन्तु वह अपनी चतुराई से ग्वालिन का वेष धारण करके उसके पास पहुंच जाती है। वह इसे पहचान नहीं पाता और अपने चरित्र से गिर जाता है। इस प्रकार एक कठिन कार्य करने में भी वह सफल हो जाती है।

"एक काणा रजपूत री बात"[3] इसमे स्त्री चरित्र के साहस का वर्णन है। वह अपने साहस तथा बुद्धिमानी द्वारा दुश्चरित्र काने राजपूत और रूप लोभी, कपटी कर्मचारियों की सारी पोल राजा के समक्ष खोल देती है और इस प्रकार अपने पातिव्रत धर्म की रक्षा करती है।

"राजा रा गुरू रा बेटा री बात"[4]—एक अबला कहलाने वाली स्त्री अपने

(१) राजस्थान भारती भाग १. अंक १. पृ० ८१—८३
(२) राजस्थान भारती भाग ३ अंक ३, पृ० ७४
(३) राजस्थानी बातां सं० सौभाग्यसिंह शेखावत पृ० ३६—४२
(४) — वही — पृ० ६८—९२

त्रिया चरित्र के द्वारा किस प्रकार पण्डिताई करने वाले पंडितों के हाथ सीधे करवा देती है इस बात का वर्णन इस वात मे किया गया है।

इसके अतिरिक्त और भी बहुत सी वातें हैं। जिनमे स्त्री चरित्र पर प्रकाश डाला गया है एवं स्त्री-चरित्र का सूक्ष्म निरीक्षण किया गया है।

इन उपर्युक्त चरित्रों के साथ-साथ खापरिया चोर भी एक प्रसिद्ध चरित्र है। खापरिया चोर की अनेक बातें आती हैं। खापरिया चोर इतना प्रसिद्ध हुआ है कि नामी होशियार चोर का विशेषण ही खापरिया वन गया। राजस्थान में कई ऐसे स्थान हैं जो खापरिया चोर से सम्बन्धित हैं। खापरिये चोर में कुछ चारित्रिक विशेषतायें भी थीं। जैसे जिसका नमक खा लिया उसको चोरी नहीं करना। बाजी हार जाने पर शर्त को पूरी करना आदि वातें उसकी चारित्रिक विशेषता को बतलाती हैं।

इस प्रकार हमने देखा कि यद्यपि वातों मे पात्रों का एक चारित्रिक महत्व है किन्तु पात्र खुले रूप में सांस नही ले पाते। पात्र घटनाओं के दास बन गये हैं। इसके अलावा राजस्थानी वातों में बहुत सी ऐसी कहानिया हैं जिनमें कथा के अन्दर से कथा निकलती है—अन्तर्कथाएँ चलती रहती हैं—इनमे पात्रो की भरमार हो जाती है। फल यह होता है कि सभी पात्रों का चरित्र दब जाता है और घटनायें उभर जाती हैं। यदि उनमे आधुनिक पाठक चरित्र-चित्रण, संवेदना, कथोपकथन और कला का रसास्वादन नहीं कर सकता तो कम से कम प्राचीनता प्रेमी पाठक के लिए उनमे मनोरंजन और रस की पर्याप्तसामग्री अवश्य है।" जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि राजस्थानी वात लेखकों का ध्येय चरित्र-चित्रण न हो कर एक विशेष प्रभाव श्रोताओं पर छोड़ कर उनका मनोरंजन-मात्र ही करना होता था। इसके अलावा वो चारित्रिक विशेषताओं से अनभिज्ञ भी थे, अतएव उस परिस्थिति मे उन्होंने जैसा भी चरित्र-चित्रण किया है वह उपयुक्त एवं पर्याप्त है। राजपूतों के अलावा अन्य पात्रों का चित्रण नही के बराबर ही हुआ है। इतना सब होते हुए भी अन्त मे यही कहूंगा कि यद्यपि राजस्थानी वातों के पात्रों मे चारित्रिक विशेषताएँ हैं—वे स्वय का अस्तित्व रखते हैं—तो भी वे लेखक के हाथ की कठपुतली ही जान पड़ते हैं। जिन्हें जिधर चाहो घुमालो, जैसा चाहो बनालो उन्हें कोई एतराज नहीं।

(१) चौबोली स० डा० के० एल० सहल एवं धनराम गोड़ आमुख पृ० १०

राजस्थानी वार्तों में मनोविज्ञान—

स्व० श्री प्रेमचन्दजी ने कहा है "कहानी वही श्रेष्ठ है जिसका आधार कोई मनोवैज्ञानिक सत्य हो।" मन सम्बन्धी सिद्धान्त ही मनोविज्ञान कहलाता है। मनुष्य अपने सब कार्यों को मन की प्रेरणा से ही करता है। मनोविज्ञान सिद्धान्तों पर पात्रों का चरित्र-चित्रण किये जाने पर वह स्वाभाविक बन जाता है। पात्रों में जब तक मनोवैज्ञानिक सत्य नहीं रहेगा तब तक चरित्र स्वाभाविक नहीं बनेगा क्योंकि मनुष्य का स्वयं का स्वभाव कुछ नियमों या सिद्धान्तों से बन्धा हुआ रहता है। मूल रूप से मनुष्य का जीवन मनोविकारों या भावों से संचालित होता है। भय, उत्साह, क्रोध, लोभ मोह आदि जो मनोविकार हैं वे प्रत्येक मनुष्य में पाये जाते हैं। शेर को देखने से या कोई अस्वाभाविक घटना से भय उत्पन्न होने लगता है या अगर हमें कोई चोट या नुकसान पहुंचायेगा तो हमें उस पर क्रोध आयेगा अथवा किसी कार्य को करने का उत्साह या जहां मनुष्य लाभ देखता है वहां वह लोभ वशीभूत हो जाता है। ये सारे विकार हम प्रत्येक मनुष्य में पायेंगे। जिस पात्र का सूक्ष्म-मनोवैज्ञानिक चित्रण किया जाता है वह पात्र प्रभावशाली एवं सुन्दर होता है। मनोविज्ञान चित्रण में प्रमुख पात्र के आदर्श सामने लाये जाते हैं अथवा चरित्र में आकस्मिक परिवर्तन लाया जाता है। ऐसी कहानियों में आदर्श गुण-अवगुणों का मनोवैज्ञानिक चित्र उपस्थित करना अथवा पात्र के परिवर्तित रूप का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण उपस्थित करना ही लेखक का प्रधान उद्देश्य रहता है। मनोवैज्ञानिक कहानियां एक तरह से चरित्र-प्रधान कहानियां ही होती हैं।

पात्रों के भाव अलग-अलग होते हैं किसी में वीरता, किसी में दान वीरता और किसी में करुणा आदि के भाव पाये जाते हैं। वैसे मनोभाव सब में समान रूप से पाये जाते हैं, यद्यपि मात्रा का अन्तर उनमें अवश्य रहता है, लेकिन उदाहरणों से तो कोई सन्देह नहीं रह जाता। चूंकि राजस्थानी कहानियों का प्रधान लक्ष्य मनोरंजन प्रदान करना ही है अतएव इन कहानी रचनाकारों ने स्वाभाविकता और अस्वाभाविकता का ध्यान नहीं रखा। तो भी अनेक कहानियों में चरित्र-चित्रण मनोविज्ञान के अनुकूल ही हुआ है। डा० सहल के शब्दों में "कहीं कहीं अतिरंजना रूप में राजस्थानी कहानियों में अनुचित मनोवैज्ञानिक तथा यथार्थ और आदर्श-प्रधान कहानियों के बीज मिल जाते हैं।"[1] इसी प्रकार के कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं:—

(१) [illegible] डा० कन्हैयालाल सहल एवं [illegible], पृ० ११

"लाखो फूलाणी री वात"[1]—यह वात मध्य युग के राजपूत काल की एक सच्ची तस्वीर है। इसमे एक राजपूत के उत्साह का वर्णन है। उस समय की प्रचलित एक प्रथा की बाप को मारने वाले से बदला लेना बेटे का पुनीत कर्त्तव्य था। इसी बात का इसमें जिक्र है। लाखा अपने बहनोई को मारकर उसका पाणीपन्था तेज चलने वाला घोड़ा हथिया लेता है। उसी बहनोई के पुत्र और अपने भानजे राखायच को लाखा अपने पास रखता है। बडे होने पर राखायच अपने बाप का प्रतिशोध मामा से लेने को उद्यत होता है। लाखा अपने भानजे राखायच के उत्साह की प्रशंसा करता है। युद्ध में दोनों काम आ जाते है।

"चातर नार"[2] - इसमे ठगों का जिक्र आता है। सारा गाव ही पूरा ठगों का है। आने जाने वाले सम्पन्न यात्रियों को ठगना ही जिनका पेशा है। यह कहानी किसी समय देश में फैली हुई ठगी की ओर संकेत करती है। ठग यात्रियों को अपने यहां ठहराकर माल लेकर निकाल देते थे, खून कर देते थे। ठगों के कारण यात्रा आपदाओ से भरी हुई थी।

"प्राम री घरणीं री वात"[3]—इसमे जो एक राजपूत महिला का चरित्र-चित्रण हुआ है वह थोड़ा बहुत मनोवैज्ञानिक आधार पर हुआ है। इस वात मे एक सच्चरित्र, सयानी और सूझ बूझ वाली राजपूत महिला की युक्ति, धैर्य, साहस पर जहां एक ओर प्रकाश पड़ता है, वहां दूसरी ओर सौतों के कुटिल दाव-घात कैसे कैसे रंग बिखेरने में सफल हो जाते हैं—इसका चित्रण भी भली भांति पात्रों के चरित्रों द्वारा किया गया है।

"वात जात-सुभाव री"[4]—इसमें नारी जाति मे जो प्रेम का एक स्वाभाविक गुण होता है उसी का चित्रण एक राजपूत कन्या के सहारे किया गया है। एक राजा एक राज्य में कहीं दौरा करने जाता है—वहां एक राजपूत कन्या उसे पसन्द आ जाती है—वह उससे शादी कर लेता है। चूंकि यह कन्या अपने मां-बाप से विशेष प्यार किया करती थी अतएव अपने पति से भी वह विशेष प्यार

---

(१) "कै रे चकवा वात" रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत पृ० १—८
(२) — वही — पृ० ८५—९०
(३) राजस्थानी वातां ३ सं० सौभाग्यसिंह शेखावत पृ० ९३-१२४
(४) राजस्थानी वाता भाग २ स० भवानीशंकर उपाध्याय पृ०२४ ३२

करने लग जाती है—वह राजा प्यार से अनभिज्ञ होता है—क्यों कि इसकी पुरानी दोनों रानियों ने इससे ऐसा प्यार नहीं किया था अतएव वह इस नई रानी पर गैर चलन का शक कर लेता है और उसे बन्द करवा देता है एक बार एक समस्या का समाधान कराने के लिए वह उसे बुलाता है तब वह कहती है:—

> सींह कदे गज भेंटियो, में कद भेंटयो नाह।
> जात सुभावन मुच्चवै, टूटो लक्ष्य बचाह॥

इस प्रकार जब राजा स्त्री जाति के स्वाभाविक गुण-प्रेम को जब जान लेता है तो उसे अपना लेता है।

वात आंखी लापण री''[1]—राजस्थान में यह माना जाता है कि गर्भकाल के समय जो स्त्री को दिखायी देता है, उसी के लक्षणों वाली संतान होती है—इसी सत्य का वर्णन इस बात में हुआ है। इसमें राजपूत ठाकुर की मां मुरादिया महतर का मुंह देखती है और उसकी स्त्री की मां गर्भकाल के समय नवघन राजा का। उन दोनों का चरित्र-चित्रण भी इसी के अनुसार हुआ है। दोनों के स्वभाव में अन्तर होता है राजा में महतर के स्वाभाविक गुण पाये जाते हैं और स्त्री में नवघण राजा के।

"अमरसिंह गजसिंहोत री वात" और "पदमसिंह री वात"[2]—इन बातों में राजपूतों की वीरता के एक स्वाभाविक गुण के दर्शन होते हैं। अमरसिंह और पदमसिंह दोनों वीर पुरुष थे, अभिमानी थे और अपनी वीरता की वजह से ही वे दिल्ली के बादशाहों के यहां आदर एवं भय की नजर से देखे जाते थे।

"डाढ़ाळी सूर''[3]—प्रतीक शैली में लिखी गयी वीरता की कहानी है। यहां वीरोचित कार्यों का आरोपण एक सूअर परिवार पर किया गया है। अन्य मानवीय मनोविकारों की तरह 'वीरता' का मूल्य कम नहीं है। वीरता के तत्त्व का एक सूअर परिवार पर आरोपण किया गया है। और उसके बाद सूअर की व्यावहारगत एवं स्वाभावजन्य परिस्थितियों के आधार पर मानवोचित वीर भाव

---

(१) राजस्थानी वार्ता भाग २—सं० भवानीशंकर उपाध्याय, पृ० ३३-४१

(२) राजस्थानी बात-संग्रह—सं० नारायणसिंह भाटी (परम्परा भाग ६-७) पृ० १४१-१५६ और १६७-१६३।

(३) — वही — पृ० १६७-१६०

की अभिव्यंजना की गई है। इस कथा में सूमरनी और सूअर का युद्ध वर्णन, उनकी सहज वीरता की पारस्परिक बात चीत, साहस, भय का अंश मात्र भी, अपने बालकों को युद्ध की शिक्षा आदि का परिचय मिलता है। इस कथा के पीछे एक अनुभव की बात यह है कि राजस्थान में सूअर का शिकार स्वयं राजाओं का मन पसन्द खेल रहा है। सारी कथा में सूअर के कार्य-कलापों एवं युद्ध के तरीकों का सूक्ष्म वर्णन हुआ है। इसके चरित्रों में एक गंभीर भाव 'उत्साह' और वीरत्व निहित है।

इन बातों में मनुष्य के जिन स्वाभाविक भावों का वर्णन किया गया है उसके अलावा और भी मानवोचित भाव अन्य बातों में मिलते हैं। जैसे कई कहानियाँ ऐसी हैं जिनमें कंजूसी का भाव मिलता है। ऐसी बातों में कंजूस मनुष्य के स्वभाव में जो गुण पाये जाते हैं उन्हीं का वर्णन किया गया है। बहुत सी बातें ऐसी भी हैं जिनके पात्रों में दानवीरता का भाव पाते हैं। ऐसे पात्रों में दान करने का एक स्वाभाविक भाव पाया जाता है।

इसके अतिरिक्त कुछ ऐसे पात्र भी देखे गये हैं जो धर्म परिवर्तनशील होते हैं। ऐसे पात्र शुरु शुरु में तो अच्छे कार्य करते हैं परन्तु फिर अन्त में आकर बुरे कार्य में लीन हो जाते हैं। जैसे लोभ वशीभूत होकर बुरा कार्य कर देना— "बात रपूत कुंवर री"— ऐसी ही कहानी है।

कुछ ऐसे पात्र हैं जो शुरु में अच्छे हैं तो अन्त तक अच्छे ही रहेंगे। उदाहरण के लिए हम राजा भोज एवं लापरिया चोर—दो पात्रों को ले सकते हैं। लापरिया चोर सच्चाई पर ही रहता है। "एक बार वह एक हवेली में चोरी करने आता है। बटी हुई बकरी के टुकड़ों के साथ मिला हुआ नमक भूल से चाट लेता है। उसी समय चुराये हुये जेवरों की पोटली को वहीं छोड़ कर बाहर निकल जाता है। जिसका नमक खा लिया, उसकी चोरी नहीं की जाती" "लापरिया जुआ खेलता है, बाजी पर राजा सिद्धराज का कल्याणिक घोड़ा रखता है। बाजी हार जाने पर वह कल्याणिक घोड़ा चुराकर देने को जाता है। रास्ते में पृथ्वी को फाड़ कर एक अद्भुत मन्दिर को निकलते हुए देखता है। उस कलाकृति को देखकर लापरिया प्रसन्न हो जाता है। सोचता है, सिद्धराज की अनुपम मन्दिर बनाने की उत्कट इच्छा रहता है। उसकी इच्छा अनुसार कोई भी मन्दिर कभी तक नहीं बना है। लापरिया चोर भर्तृ राजा के झिंड घोड़े को चुराकर लाता है, और उसके आने पर उत्सव की तैयारी करता है परन्तु

वह एक सच्चे एवं ऊँचे व्यक्तित्व को रखने वाला होता है अतएव उसी राजा के चुराये हुए घोड़े पर जाकर राजा को उस अनुपम मंदिर की बात बताता है। राजा के पूछने पर करोड़ीपज को जुए में बाजी में लगाने का और फिर हार जाने पर उसे चुराकर लेजाने का हाल साफ-साफ सुना देता है। इस सच्चाई पर राजा प्रसन्न हो जाता है और अपना प्यारा घोड़ा सांपरिया को दे देता है।"

राजा भोज भी अपने न्याय के लिए बहुत प्रसिद्ध है। उसने अपने जीवन में दूध का दूध और पानी का पानी का भाव रखा—कभी अन्याय का साथ नहीं दिया। उसके लिए ऐसी कहावत प्रसिद्ध है कि राजा भोज के राज्य में शेर और बकरी एक ही घाट पर पानी पीते थे। उसके न्याय की अनेक बातें राजस्थानी वात साहित्य में विद्यमान हैं।

पात्र दो प्रकार के होते हैं—एक तो व्यक्ति विशेष और दूसरे एक टाइप-वर्गगत रूप में। व्यक्ति विशेष के विषय में हम ऊपर देख चुके हैं। इसके साथ-साथ वर्गगत पात्रों की भी बहुत सी बातें विद्यमान हैं। टाइप या वर्गगत पात्रों से तात्पर्य यह है कि उनका स्वभाव सारी जाति में पाया जाता है। वह पात्र अपने वर्ग का एक प्रतिनिधि होता है—उसके गुण, दोष स्वभाव उसकी जाति के गुण, दोष स्वभाव होते हैं। उदाहरण, स्वरूप हम 'वात एक जाट री'[1] ले सकते हैं। इसमें इसके चरित्र को अल्पबुद्धि, मूर्ख और अज्ञानी के रूप में चित्रित किया गया है। जाट राजस्थान की एक प्रमुख जाती है, बहुधा यह कृषि कार्यरत है, और राजपूत आश्रित गाथा-कार जातियों के व्यंग और कटाक्ष का उपकरण मात्र रहा है, फलतः जाट सम्बन्धित बात में इसी विचार धारा का दर्शन होता है। प्रायः देखा गया है कि जाट अधिकतर अल्पबुद्धि, मूर्ख और अज्ञानी ही होते हैं।

कुछ चरित्र स्थिर होते हैं जिनके चरित्र मे स्थिरता का भाव पाया जाता है। ऐसे चरित्रों को चाहे कितना ही डिगाने की कोशिश की जाय किन्तु वे हर कोशिशें व्यर्थ जाती हैं। उदाहरण स्वरूप हम पातिव्रत धर्म का पालन करने वाली स्त्री के चरित्र को ले सकते हैं। 'साहूकार री वात'[2] इसमे स्त्री अपने पातिव्रत धर्म का पालन कठिनाइयों का सामना करते हुए भी करता है।

(१) राजस्थानी वातां भाग २ सं० भवानीशंकर उपाध्याय पृ० १००-११०
(२) राजस्थान भारती: भाग ३ अंक ३, पृ० ७४

'एक राणां राजपूत री वात'—मे स्त्री अपने साहस तथा बुद्धिमानी द्वारा दुश्चरित्र काने राजपूत और रूप के लोभी, कपटी कर्मचारियों की सारी पोल राजा के समक्ष खोल कर अपने पतिव्रत धर्म का पालन करती है।

स्त्री-चरित्र के अलावा और भी बहुत से पात्र वातों मे वर्णित हैं जिनके चरित्र में हम एक दृढ़ता को प्राप्त करते हैं। राजपूतों का यह कथन कि 'प्राण जाय पर वचन न जाहि'—उनके दृढ-चरित्र को द्योतित करता है।

राजस्थानी वातों मे वर्णन, सकेत, कथोपकथन और घटना कार्य-व्यापार द्वारा ही पात्रों के चरित्र-चित्रण मे मनोविज्ञान को वर्णित किया गया है। अन्त मे केवल श्री भाटी की ये पंक्तियां ही उद्धृत करूगा—'आधुनिक कहानी के विकसित रूप मे जो लेखक के व्यक्तित्व की निहित, सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, जीवन यथार्थ को उद्घाटन करने वाला शिल्प नैपुण्य और कथा तत्व की गतिशीलता आदि गुण दिखाई देते हैं—वे चाहे इन वातो मे नहीं पर वर्णनों की सजीवता, औत्सुक्य का निर्वाह, लयात्मक भाषा में काव्य का सा आनन्द और सामाजिक सत्य की सहज अभिव्यक्ति आदि कुछ ऐसे गुण हैं जिनके कारण सैकड़ों वर्षों से इन कथाओं का समाज मे महत्व रहा है।'[1]

राजस्थानी वातों में चरित्र-चित्रण की शैलियां—

राजस्थानी वातो मे साधारणतया चरित्र-चित्रण की शैलियाँ दो रूपों में पायी जाती हैं—१. नाटकीय शैली और २. विश्लेषणात्मक शैली। नाटकीय शैली का तात्पर्य यह है कि लेखक पात्रो की परस्पर वार्तालाप की योजना से उनके स्वभाव, आचरण और व्यवहार आदि का परिचय देता है। विश्लेषणात्मक शैली में लेखक स्वयं अपनी ओर से कथनों के द्वारा पात्रों की टीकाटिप्पणी करता है और अन्त मे अन्य कथनों के सहारे चरित्र-चित्रण करता है। विश्लेषणात्मक शैली का मूल भाव यही है कि कहानीकार स्वयं ही चरित्र पर प्रकाश डालता है। चरित्र में व्यक्तित्व प्रतिष्ठा के लिए चरित्र-विश्लेषण आवश्यक होता है।

उपर्युक्त दोनों शैलियों के कुछ उदाहरण दिये जाते हैं:—

'साहूकार ने सूवा री वात'[2] मे एक सूवे का चरित्र अच्छा दिखाया गया है। इसमे सूवे की सेठ के लड़के से बातचीत और फिर कुंवर और सूवे की

(१) परम्परा भाग ६—७ भूमिका पृ० १६

(२) राजस्थानी वातां भाग ४ सं० सौभाग्यसिंह शेखावत पृ० १०४–१२५

बातचीत—सुग्गे के चरित्र पर प्रकाश डालती है। ये बातचीत सारी कहानी में घटनाओं के साथ-साथ चलती रहती है और इस प्रकार सुग्गे का चरित्र-चित्रण होता रहता है। इसमें यह बतलाया गया है कि एक सुग्गे की बुद्धि भी किसी आदमी से कम नहीं है बल्कि वह तो ज्यादा चतुर होता है। सुग्गा राजकुमार का अनेक कठिनाईयों आने पर भी पद्मिनी से ब्याह करवा देता है।

'राणी चौबोली री वात'[1]—में यद्यपि घटनाएं ही पूरी कहानी का निर्माण करती हैं। किन्तु इन घटनाओं के साथ-साथ राजा भोज और उसके चारों दोस्तों का वार्तालाप—फिर राजा का महल में जाना और चारों दोस्तों से अलग अलग वार्तालाप—साथ में चौबोली का भी बोलना—ये सारी बात-चीत ही कहानी के प्रमुख पात्र राजा भोज और रानी चौबोली के चरित्र को विकसित करती है। यद्यपि वार्तालाप नहीं के बराबर है फिर भी राजा भोज के चरित्र के विषय में लेखक ने कुछ नहीं कहा है। घटनायें और पात्रों से भोज की बात-चीत उसके चरित्र के पर्त खोलती रहती है।

'भले-भली बुरे बुरी री वात'[2]—इसमें भले का भला और बुरे का बुरा होता है यह बात बतलायी गयी है। कहानी में छोटे-छोटे कथोपकथनों द्वारा ही शाह के पुत्र का चरित्र चित्रण किया गया है। शाह का पुत्र अपनी ओर से अच्छे का कार्य ही करता है यद्यपि उसके लिए उसके सम्बन्धी [illegible] बुरी भावनायें रखते हैं किन्तु अन्त में सत कार्य की जीत होती है।

'ढोला मारू री वात'—यह एक प्रसिद्ध प्रेम कहानी है। इस वात में पद्य और गद्य दोनों साथ-साथ आते हैं। यद्यपि इसमें कथोपकथन बहुत कम है पर जो भी है वे [illegible] चरित्र पर प्रकाश डालते हैं। इसमें ढोला के चरित्र को विकसित करने के लिए लेखक स्वयं कुछ नहीं कहता। कुछ तो घटनायें और कुछ कथोपकथन ढोला का चरित्र चित्रण करते हैं। गद्य और पद्य दोनों के अन्दर ही कथोपकथन का प्रयोग किया गया है।

'[illegible] कुंवर'—इस कहानी में कथोपकथन तो पद्य में है पर काफी मात्रा में [illegible] है। इसमें [illegible] और कुंवरी—कुंवरी और [illegible] [illegible] कुंवरी और [illegible] बादशाह और [illegible]—[illegible] और फिर

---

(१) [illegible] कुंवर [illegible] के [illegible]

(२) [illegible] सं० [illegible], [illegible] पृ० [illegible]

इनके कथोपकथन आये हैं। जलाल बूबना से प्रेम करता है यह उसके मामा की विवाहिता पत्नी है। इसमें जलाल का चरित्र-चित्रण सुन्दर हुआ है। सारे कथोपकथन ही जलाल के चरित्र को दर्शाते हैं। इसके कथोपकथन का एक नमूना देखिये —

'दिन उग्यां पे मो बादसाह रै मुजरै गयो तद बादसाह फुरमाई—जे जलाल नूं दिन च्यार हुआ, मुजरे नूं नही आया सो वो कहां गया है ? तद पे मो अरज कीवी—जी, वे हजरत सलामत जिसके हजरत से मामू, आ जवानी, बूबना सरीखी औरत पाई तिससे गैर महल मस्त हुआ रहै है।'

यह छोटी सी बात-चीत पूरी कहानी का भाव बतला देती है एव इसके साथ-साथ जलाल और बूबना के प्रेम को और उनके चरित्र को भी दर्शाती है।

इसी प्रकार अन्य बहुत सी बातें मिलती हैं जिनमे पात्रों के वार्तालाप से चरित्र-चित्रण हुआ है। कई कथोपकथन छोटे हैं तो कई बड़े हैं। लेखक ने इन कथोपकथनों द्वारा पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का उद्घाटन किया है तथा इनसे कथा-सूत्र की प्रगति मे भी सहयोग लिया गया है।

विश्लेषणात्मक शैली में लेखक ने अपने द्वारा ही चरित्र की विशेषताओं का वर्णन किया है। लेखक स्वयं कहानी में कथनों द्वारा चरित्र-चित्रण करता है।

'राणी चोबोली री वात'—में लेखक राजा भोज के चरित्र के महत्व को स्वयं अपने शब्दों मे इस प्रकार वर्णित करता है—'उजेणी नगरी राजा भोज राज्य करै। नव वारा नगरी। चोरासी चोहटा, छतीस पोली। च्यार वरण रहै। छतीस पवन जाति लोक बसै। कोडीधज व्यापारी रहै। पट दरसणी रहै। तिण नगरी रै विषै राजा भोज राज्य करै। छतीस राजकुली राजा री सेवा करै।'[1]

'महाराज श्री करणसिंह जी री वात'—इस वात के शुरू मे स्व० महाराजा करणसिंह जी के चरित्र का चित्रण किया गया है। एक पहरे में उनके जीवन की सारी बात को बतला दिया है। राजा लोक प्रिय थे ईश्वर भक्त थे, देश भक्त थे, हिन्दू संस्कृति के पुजारी थे, मुसलमानों के दुश्मन थे आदि उनकी चारित्रिक विशेषताओं को एक ही पहरे मे बड़े स्वाभाविक ढंग से लेखक ने बतला दिया है।

'महाराजा श्री करणसिंह जी बीकानेर रो बडो राज कियो। बडा प्रतापवन्, धर्मिष्ठ राजा हुवा। श्री लक्ष्मीनारायण जी रा बड़ा भक्त हुवा। परमान रा

(१) 'चोबोली' सं०—डा० के० एस० सहल, बलराम गौड़, पृ० १

तुरक रो मुंहडो नहीं देखता। × × × घोड़ा नूं घास भुरट रो नखावता नी सारा डेरा में भुरट रा कांटा सिड़ता तिणसूं गुरजबरदार दोरा होवता। देसरा लोगां नूं फरमाय राखियो थो जे भरडी आवे तिण नूं बारा पाणी और भूरट वाले मारग ल्यावणो। पाद्धा लोटतो बसतां दरबार सूं श्रोठी देता जिकां नूं श्राही जे फरमावता—जे इण मारग काढज्यो तिणसूं बादशाही मांही करणसिह भूरटीयो ही जे कहीजियो।'[1]

'वात श्रमीपाल साह री'[2]—श्रमीपाल साह यद्यपि वैश्य कुल में उत्पन्न हो' है किन्तु वह वीर होता है—इसी वीर के श्रपूर्व शौर्य की यह कथा है। वात लेखक ने शुरू मे ही जो इसका वर्णन किया है उससे इसके स्वरूप का पता लग जाता है—

'दिली सहर पातिसाह श्रलावुदीन पातिसाही करे। श्रमीपाळ साह पातिसाहरी चाकरी करै। पाच सौ असवार राखै। सू श्रमीपाळ साह दोइ माला पहिरै—गळै मे एक तुलछी री माळा, श्रेक तसबी, दोइ रंग-रो जोड़ो पहिरै-श्रेकै पगै स्याह पैंजार। श्रेकै पगै लाल पैंजार। दोइ तरवार बांधै, दोइ कटारी बांधै इयें भांति रहै।'

'वात कुंगरै बळोच-री'[3] इस कहानी मे भी शौर्य का ही वर्णन है। कुंगरै के स्वरूप का वर्णन लेखक ने बहुत ही सुन्दर ढंग से किया है—

'ताहरां कुंगरै कटारी काढियो। सिळी काढी-श्रर कटारी सिळी ऊपर लायो, लगाइ—नै मिळी पाली। कटारी पकडि हाथ—मे घोडो उपाडियो सो सौ पांवडा ऊपरि आयो—आइ नै तेरह असवारां मांहिलो श्रेक असवार-रो माथो काटि-नै ले-श्रर पूठो सो पांवडा गयो।'

इन वातो के अलावा और भी बहुत सी वातें हैं जिनमे लेखक ने स्वयं किसी न किसी तरीके से पात्र का चरित्र-चित्रण किया है। जहां लेखक स्वयं पात्र की चारित्रिक विशेषताओं को बतलाना है वहां-वहां पात्रों का चित्रण बहुत ही स्वाभाविक बन पड़ा है। चूंकि वातें लिपिबद्ध न होकर जन जीवन के मुख पर रहती थी अतएव वे पात्रों के चरित्रों का वर्णन स्वयं ही अधिकतर किया

(१) राजस्थानी वातां सं० नारायणसिंह भाटी ('परम्परा' भाग ६-७) पृ० १६७

(२) राजस्थानी वातां भाग १ सं० नरोत्तमदासजी स्वामी पृ० ३२

(३) — वही — पृ० ४४

करते थे। कहीं-कहीं तो दो-चार पंक्तियों में ही पात्र का पूरा चरित्र खींच कर रख दिया है। चरित्रों में शौर्य, वीरता, बुद्धिमता, चातुरी आदि जो भाव पाये जाते हैं उनका चित्रण इन वात लेखकों ने बड़े मार्मिक ढंग से पेश किया है। चरित्र-चित्रण करना इनका प्रधान लक्ष्य नहीं था किन्तु जहां पर भी पात्र के शौर्य या अन्य उसके चरित्र से सम्बंधित कोई बात आती तो उसका वर्णन खुल कर करते थे। मनोरंजन के साथ-साथ पात्रों के स्वभाव का भी वर्णन ये वात लेखक करते जाते थे।

कहने का तात्पर्य यह कि पात्रों के चरित्र-चित्रण में वात लेखकों ने नाटकीय शैली को विशेष तौर पर न अपनाकर विश्लेषणात्मक शैली द्वारा अधिकतर पात्रों का चरित्र-चित्रण किया है। और इस कार्य में वे सफल भी हुये हैं। जब वे किसी चरित्र का चित्र अपने शब्दों द्वारा प्रस्तुत करते हैं तो उस चरित्र का रूप हमारे नेत्रों के समक्ष झूमने लग जाता है। ऐसा लगता है जैसे यह चरित्र हमारे समक्ष ही उपस्थित है। एक स्वाभाविकता इनके वर्णन में आ गयी है।

अन्त में केवल यही कहूँगा कि अगर इनका उद्देश्य मनोरंजन करना न होता तो इनके चरित्र आज साहित्य में अमर हो जाते। वे भी आधुनिक चरित्रों से कम नहीं उतरते।

अध्याय/५

राजस्थानी वातों में वातावरण

कहानी में वास्तविक जीवन की प्रधानता उसकी जड़ है—कल्पना कहानी में गौण होती है मुख्य रूप में नहीं। वास्तविक जीवन देश और काल एवं जीवन की अच्छी एवं बुरी परिस्थितियों से निर्मित होता है अतः इन तीनों अङ्गों को एक ही स्थान पर एकत्र करके इसका चित्रण करना कहानी में वातावरण उपस्थित करना है। कथावस्तु का सम्बन्ध किसी देश से व किसी काल से होता है— वर्तमान, भूत और भविष्य इनमें विभेद हो सकता है। इन दोनों का सम्बन्ध जीवन की किसी न किसी परिस्थिति से अवश्य ही होता है—अतएव इन तीनों तत्वों के अलग-अलग चित्रण से कहानी में विभिन्न परिपार्श्व प्रस्तुत होते हैं और इनके सामूहिक संकलन और प्रभाव से कहानी में वातावरण की सृष्टि होती है।

'वातावरण के लिये स्थान-स्थान पर यथोचित देश-काल-परिस्थिति के चित्रण प्रस्तुत करने होते हैं।'[1] वर्णन की स्वाभाविकता कहानी-कला की एक प्रधान विशेषता है—जो ग्रामीण कथाओं में अधिक पायी जाती है।

राजस्थानी वातों में जहां घटनाओं का आधिक्य है, वहां वर्णनों की भी कमी नहीं है। चूंकि ये वातें लोक-जीवन से सम्बन्धित होती है अतएव इनमें वातावरण का होना आवश्यक ही है। यह अवश्य है कि वर्णनों का आधिक्य होने

(१) हिन्दी कहानियों की शिल्प-विधि का विकास—डा० लक्ष्मीनारायणलाल पृ० २३७।

के कारण वार्तों में एक शिथिलता अवश्य आ जाती है, परन्तु उनकी सजीवता पाठक एवं श्रोता को ऊबने नहीं देती। वार्ते चाहे गद्य में हों, चाहे पद्यमय हो अधिकांशतः वर्णनों से ही शुरू होती है। वात कहने वाला अपने विशेष प्रकार के ढंग से वर्णनों को श्रोताओं के सम्मुख रखता हुआ वात के प्रति उत्सुकता पैदा करता है। 'वार्तों के बीच-बीच में तो जहां भी अवसर मिला है वहीं प्रकृति की अनुपम छटा, नगर की विशालता एवं सम्पन्नता, दुर्ग की अभेद्यता, युद्ध की भयंकरता, वीरों का रण-कौशल, हाथी घोड़ों के लक्षण, नायिका का राशि-राशि सौन्दर्य उसके शृंगारिक उपकरण, विरह की सुकोमल भावनाओं का उद्वेलन और मिलन की सुखद घड़ियों का वर्णन अलंकृत शैली में जम कर किया गया है। ये वर्णन इतने सजीव और मार्मिक हैं कि पाठक के कल्पना-पटल पर सजीव चित्र उपस्थित कर देते हैं। इसी से अपेक्षित वातावरण की सृष्टि होती है जिसमें हमारी भावनाओं का तादात्म्य सहज ही उस काल के साथ हो जाता है।'[1]

डा० श्री कन्हैयालालजी के शब्दों में 'रूप-चित्रण और दृश्य-वर्णन इन कहानियों में जिस अपूर्वता और विदग्धता के साथ किया गया है वह प्रशंसनीय है। उक्तियों पर उक्तियां, उपमाओं पर उपमाओं की झड़ी और वात का रस देखते ही बनता है। उदाहरण—'सो पनां किण मातरी सौसरी सोमा नारेल पर-काण निलाड़ दोजिरी आंणिचन्द नासिका जाणें दीपक री लोइ। कठ घणो कोमल दरसावे जिको पीवतां पांणी निजर आवे। आंगल्यां मूंगफल्यां से तूलें नांही। जांणे गुलाब रो फूल। हास मद मानो सौलेकला उदोतचन्द ''' '।'[2]

'क्लिष्टता के अनास्तित्व के साथ-साथ छोटे-छोटे वाक्यों की योजना से राजस्थानी वार्तों का वर्णन अत्यन्त मधुर हो गया है। × × × केवल साधारण बोल चाल की भाषा मे कही इन वार्तों का रसास्वादन आवाल वृद्ध सभी कर सकते हैं।'[3]

---

(१) 'राजस्थानी वात-संग्रह'—श्री नारायणसिंह भाटी (परम्परा भाग ६-७) भूमिका, पृ० १४-१५।

(२) 'चौबोली'—सं० डा० के० एल० सहल एवम् पत्तराम गौड आमुख, पृ० १२।

(३) राजस्थानी वात-साहित्य—श्री रावत सारस्वत (राजस्थान-भारती जुलाई ५१), पृ० २०।

राजस्थानी वार्ते जन-जीवन से सम्बन्धित हैं। इन वातों में प्रत्येक राजस्थानी जाति के रूप एवम् कार्य का वर्णन है। वातावरण देख कर हम पात्र के चरित्र का पता सहज ही मे प्राप्त कर सकते हैं।

ऐतिहासिक वातों में वातावरण—

ऐतिहासिक वातों में स्थिति और वातावरण का निर्माण इस कला की प्रमुख विशेषता है। कार्य-वस्तु से सम्बन्धित देश-काल और परिस्थिति का पूरा-पूरा ज्ञान और उसकी सहज अभिव्यक्ति ऐतिहासिक वातों की मूल आत्मा है। यदि इस दिशा में अस्वाभाविकता और अज्ञानता उपस्थित हुई तो यह निश्चित है कि कहानी असफल हो जायेगी और पाठक के साथ साधारणीकरण न हो सकेगा यही धारणा है कि सफल ऐतिहासिक कहानियों में वातावरण उपस्थित करने के लिये देश-काल और परिस्थिति का विशद-वर्णन प्रस्तुत किया जाता है। कहानी मे वातावरण का स्थान विशेष नहीं होता किन्तु ऐतिहासिक कहानियों मे वातावरण की प्रधानता रहती है। राजस्थानी वातों में इतिहास और कल्पना का मिश्रण है अतएव ये वातें अर्द्धऐतिहासिक हैं। तो भी इनमे इतिहास प्रसिद्ध घटनाओं और ऐतिहासिक पात्रों का चित्रण हुआ है। इन वातों में जिन दिनों, समय, युद्ध के वर्णन एवम् जिन परिस्थितियों का वर्णन आया है उनके द्वारा तत्कालीन इतिहास का पता लगता है। इन ऐतिहासिक वातों में युद्ध का वर्णन, पात्र के स्वरूप का वर्णन, शिकार का वर्णन, उमड़ती घटा का वर्णन, दुर्गों को जीतने का वर्णन, आदि का चित्रण हुआ है।

उदाहरण के लिये—

'बात लाखा-फुलाणी री'[1] मे बीभजी का वर्णन उनके चरित्र को द्योतित करता है—

'लाखो फुलाणी री सवारी चढी नै थाय निकाळियो। देखै तो एक [illegible], [illegible] देखैन मूवो पड़ियो। घोड़ो चोकड़ो [illegible] है। सवार [illegible], कोई [illegible] निजर नी थी है नी, कनै पड़ो एक मग री आव ही देखी है के [illegible] कोई मारकरो मरद है। सवार बीभजी रा [illegible] [illegible] किनो। [illegible] कहैं [illegible], बीभजी [illegible]।'

वर्णन [illegible] होते हुए भी [illegible] में कमी नहीं। इसी शैली के अन्तर्गत

(१) 'कै रे चकवा बात'—रानी लक्ष्मीकुमारी चूंडावत, पृ० १

किये हुए व्यक्ति चित्रण एवं वातावरण के चित्रण भी अत्यन्त सजीव हुए हैं। दो तीन वाक्यों में सम्पूर्ण व्यक्तित्व का रेखा-चित्र हमारे सामने उत्तर आता है:—

'जैसल देस रै देस मांहे जोगराज चारण वसै। बडो चतुर, होस नाइक, बडा रुपक जोडै। मोटो चारण। नामव्वादीकोसाहसिक भलौ। रुपमलो। मू उदास रहै। घरै अस्त्री नहीं, गुण नहीं, तिकै करि उदास रहै।'[1]

'वात खेतसी कांधलोत री'[2] में शकुन को मानना 'तद मारग जावतां सुवण हुवा सू नाहर जनावर रो माथो मुंह माहे लियै जावै छै। तद सोवणिया कह्यो जू कोट तो थे लेसो पण आंसू हीज जामै।' आराधना करके मेह बरसाना 'जती नू खेतपाळ रो वर थो तद रोही माहे जाजि खेतपाळ री अराधना कीवी मेह हुवो।' और भटनेर किले के जीतने का वर्णन मिलता है।

'वात कछवाहां री'[3] में—सुमित्र राजा का कोढ मिटाने के लिये तीर्थ यात्रा पर जाना रास्ते में सूअर का शिकार करना 'ताहरा शिकार रमतां थकां सूवर एक मल आइ नीसरियो। × × × × सू वनसपती मे सऊ को विखरियो। राजा वाराह वासै एक्ल असवारै चलाया। सू न बरछी री घात सूवर आयो न मारीयो। सूवर पहाड चढियो, राजा ही वांसै पहाड चढियो। पहाड चढि नै सूवर मारियो।' राजा का कोढ मिटना आदि का वर्णन आया है।

'वात कवलसीह सांखलै नै भरमल री'[4]—मे उमडती घटा का वर्णन एक ही पंक्ति में अति सजीव बन पड़ा है—'ताहरां कुवरसींह शिकार गयो हुतो। आकाश नव-नव रंग रा बादल देखिनै कुवरसींह नै भरमल संभरी।' इसी तरहा बरसात का वर्णन भी देखिये 'मेह झुरमिर-झुरमिर बरसै छै। बीज चमकै छै। बादल धरती सूं लागै छै। अन्धार घोर रात पडी छै। हाथ नूं हाथ सूझै नहीं

(१) 'राजस्थानी वात-साहित्य—श्री रावत सारस्वत (राजस्थान भारती जुलाई ५१), पृ० २१

(२) प्राचीन राजस्थानी वार्ता भाग १—सम्पादक श्री नरोत्तमदास स्वामी ए०, भारतीय विद्यामन्दिर शोध प्रतिष्ठान से प्राप्त—अप्रकाशित है।

(३) — वही —

(४) — वही —

छै। ताहरां बीज मारै चमत्कार सूं भारमली री नजर कुंवरसींह पड़ी।'

'खीची गंगेव नींबावत रो दो पहरो' में प्रकृति चित्रण की एक और छटा को निहारिये:—

'वरखा रितु लागी, विरहणी जागी। ग्राभा झरहरै, बीजां ग्रावास करै। नदी ठेवां खावै, समुद न समावै। पहाड़ा पाखर पड़ी, घटा ऊपड़ी। मोर सोर मंडै, इन्द्र धारा न खण्डै। दादुर डहड है, सावण भादुवै री संधि कहै। इसो सनइयो वण रहयो है ग्राभो गाजै, सारंग वाजै। द्वादस मेघ नै दुवो हुवो, सु दुखियारों री ग्रास हुवो। झड़ लागो, ग्रथोरां दळद्र भागो।

वरखा मण्डन रही छै, बिजळी झिलोमिल करनै रही छै, बादला झड़लायो छै। सेहरां-सेहरा बीज चमकनै रही छै। जाणै कुलटा नायका घरसूं नीसर ग्रंग दिखाय दूसरै घर प्रवेस करै छै।'[1]

'वात जैसळमेर री'[2] मे राजा रावळ रतनसिंह के शासन काल में जैसलमेर पर ग्रलादीन द्वारा किये गये ग्राक्रमण से रावल केहर के राज्यारोहण तक का विवरण है।

'वात राव के केल्हणरी'[3]—मे राव केल्हण के बेटे का तथा राव राणगदे के बेटे का बादशाह द्वारा मुसलमान बनाये जाने का वर्णन ग्राया है।

'वात राव मलीनाथ पंथ मे ग्रायो तै-री'[4]— मे ग्रलौकिक तत्व का वर्णन ग्राया है। ग्रगवसी द्वारा घड़े पर हाथ रखना ग्रौर उसका पानी से भर जाना ग्राश्चर्यपूर्ण है—'तद ग्रगवसी पाणी पी ग्रर घड़ै ऊपर हाथ दे कह्यो—साहब पूरी तद घड़ो मरीज गयो।'

'वात तमाइची पातिसाह री'[5]—में बीण बजाने का वर्णन किया गया है—'तद तमाचिची कह्यो हजरत बीण वजावता है, गावता है, बोहत भला, तद पातिसाह कह्यो हमारा मुजरा करो। प्रिये बीण बजायो मल्हार कियो गयो, तद

(१) राजस्थानी-साहित्य संग्रह भाग १—सम्पादक श्री नरोत्तमदासजी स्वामी, पृ० २५
(२) — वही —
(३) — वही —
(४) — वही —
(५) ग्रनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर मे विद्यमान।

पीरोशाह राजी हुयो ।'

'खीचियां री वात'[1] में औरंगजेब के समय में हाड़ा भगवतसिंह चतरसा लोस की विजय का चित्रण है ।

'वात जगदेव पंवार'[2] इस वात में जगदेव की वीरता एवं शौर्य का वर्णन इसका भैरव के गणों के साथ युद्ध करवा के चित्रित किया गया है । भैरव को दो बार शीश देने का वर्णन भी इसमें आया है । इन वर्णनो से जगदेव के चरित्र का पता लगता है ।

'वीरमदे सोनगरा री वात'[3]—में वीरमदे का शाहजादी से प्रेम होना और फल स्वरूप युद्ध का वर्णन माना और प्रेम पुष्टि के लिए काशी करोत वालो पूर्व जन्म की अन्तर्कथा का निर्माण—वीरमदे के चरित्र के शौर्य को द्योतित करते हैं । इस वात में जालौर के स्वामी सोनगरा राजपूत, राव कान्हड़दे और उसके पुत्र वीरमदेव ने बड़ी वीरता पूर्वक बादशाह की सेना के विरुद्ध गढ को रक्षा की थी—यह ऐतिहासिक दृष्टि से सत्य है ।

उपर्युक्त वातों में केवल ऐतिहासिक घटना वर्णनों का ही जिक्र किया गया है इसके अतिरिक्त कुछ वातें युद्ध की जीवित झांकियां बन पाई हैं । इन वातों में जो युद्ध का वर्णन आया है वह इतना सजीव चित्रण है कि वात पढते-पढते ही ऐसा लगता है मानों युद्ध हमारे सामने हो रहा हो । उदाहरण के लिए 'पाबूजी री वात'[4] का एक उदाहरण देखिये:—

'.................. पर पहलड़ी लड़ाई माहे चांदे मीची तूं तरवार बाही हैनी । तद पाबूजी तरवार आपड़ लीवी । कही मारो मती । बाई रांड हुती । तद चांदे कही राज आप तरवार आपड़ीमु बुरी कीवी । मैं छोडो छुं । मारिया भला । पण पाबूजी मारण दिया नहीं । तठै फौज आई । चांदे कहो राज, जो मारियो हुवो होत तो पाप कटियो हुतो । हरामखोर आयो । तठै पाबूजी बुहा-बडेने लड़ाई कीवी । बडो रिठ वाजियो । तमूं पाबूजी काम आया । ....'

(१) अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर में विद्यमान

(२) 'राजस्थानी वातां' सं० श्री सूर्यकरणजी पारीक

(३) — वही —

(४) अनूप संस्कृत पुस्तकालय बीकानेर मे विद्यमान

इसी वात में आगे तलवार का वर्णन आया है—पृ० ४५

'तरवारियांरा साज खुलै छै, सु किण भांतरी तरवार थेट सिरोहीरी, सांतरी, दाणांदार, मिस्रान आतिमां विमागुले बाढे भेरिग्रां-मिस्रानसूं काढि नै घास मे नाखो हुवै तो पांणी रै भोळै जिनावर ठूंक मारै, छछोहो वाल नागणी चिलकै जाणै कालीरी जीभ हालै, घणुं मुखमल नै घणी सोनै रूपै माहे गरकाव करी थकी, इण भांतरी तरवार, घणै ककड़े गीनीग्रे सावरमा लेपटी थकी तहनाळ, मुंहनाळ, कड़ी, कुरसी समेत नकसी मंठि उभा राजानांरै हाथरी उभां हीज वहां नै पोरलीरी सासांसूं नागलीजै छै।

वात कहने वालों ने युद्ध के वर्णनों में युद्ध-स्थल के एक-एक भाग का वर्णन किया है। एक राजा दूसरे राजा के देश पर चढ़ाई करता—जीतता और फिर वह राजा उस पर चढाई करता—इस प्रकार उनका जीवन युद्ध-स्थल में ही बीतता था। स्थानों मे ऐतिहासिक स्थान बीकानेर, जोधपुर, चित्तौड़, भटनेर आदि के दुर्गों का वर्णन आया है। एक ऐसे ही प्रकार के दुर्ग का चित्रण प्रस्तुत है—

'राजान सिलामति गढ़ कोट चौफेर कांगुरा लागा थका विराजै छै, जाणे आकास लोक गिलणनूं दांत दीया छै-ऊंचीनिजरि करि जोइजै तो माथारो मुगट पड़इड़ै, तिण कोट री खाई ऊंडी इह नागद्रही सारीखो अट छंन पाताळरी जड़ांसूं लागि नै रही छै-तिण गढ़ मांहे बावडी कूआ तळाव जळ बहुळ धान घ्रित तेल लूण असम कपड़ो अपार संचो कियो छै कोट भुरजांरा कोसीस नै धमळहर धमळागिरी पहाड़ ज्यौं बादळांरा कोरण सारीसा ऊजळा सोपोट भौं निजरी आवै छै। नगर रा घर कोट बराबरि ऊचा विराजि नै रहिया छै।'

इनके अतिरिक्त इन वातों मे जिन ऐतिहासिक पात्रों एवं घटनाओं का वर्णन आया है उनके द्वारा उस समय के इतिहास का पता लगता है। अमुक घटना अमुक शताब्दी की है उस अमुक शताब्दी की घटना के वर्णन मे उस समय के वीरों का खान पान, पोशाक, हथियार और युद्ध लड़ने का तरीका आदि ज्ञात होता है। कल्पना के अलावा सारी वात इतिहास से सम्बन्धित होती थी। उदाहरण के लिए 'जगदेव पवार री वात' ले सकते है। 'पाटण के राजा सिद्धराज सोलंकी जयसिंह और जगदेव पंवार की वात प्रसिद्ध है। × × × सिद्धराज जयसिंह देव विक्रमी संवत ११५० मे पाट बैठा और ४९ वर्ष ...

राज्य किया।'[1]

'वीरमदे सोनगरा'—विक्रमी सं० १३३६ से १३५४ के बीच में जालोर में रावल सामन्तसिंह राज्य करता था। उसके कान्हड़दे और मालवदेव नामक दो पुत्र हुए। पिता के बाद ज्येष्ठ कुमार कान्हड़दे जालोर की राजगद्दी पर बैठा। इसी कान्हड़दे का वीर पुत्र वीरमदे हुआ।'[2]

इसी प्रकार की ऐतिहासिक वातों की संख्या बहुत है जिनके द्वारा इतिहास प्रसिद्ध वीरों के समय का वर्णन मिलता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि इन ऐतिहासिक वातों में उस समय के समाज का यथातथ्य चित्रण हुआ है। इतिहास की कथाओं का सम्बन्ध भारत की एक मुस्लिम सत्ता से है। मध्यकाल में सामन्ती राज्यों के षडयन्त्रों का ताना-बाना कितना उलझ चुका था वह इन वातों से स्पष्टतया समझा जा सकता है। चारों ओर युद्ध, चारों ओर विग्रह, मार-काट, जीतना-हारना—और इन्हीं के बीच में वीरता के मापदंडों का अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन। मध्यकालीन भारत की सर्वश्रृंखलित सामाजिक स्थिति का वर्णन हुआ है।

अन्य वातों में स्थानीय-अनुरंजन (Local Colour) का वर्णन—

वातावरण, कहानी में रंगमंच का सा काम करता है। नाट्य-कला में नाटक की स्थिति और वातावरण के लिए रंगमंच, विशेष पर्दे, सजावट और अभिनेताओं की वेशभूषा आदि कार्य करते हैं, लेकिन कहानी कला, पठन पाठन की वस्तु होने के कारण इसमें स्थिति और वातावरण के लिए स्थान-स्थान पर यथोचित देश-काल-परिस्थिति के चित्रण प्रस्तुत करने होते हैं। कहानी में जो दृश्यों का वर्णन है वो एक प्रकार से नाटक के पर्दों का काम दे देता है। वातावरण में स्थानीय-वर्णन कहानी के सौन्दर्य की अभिवृद्धि ही नहीं करता लेकिन इसके द्वारा पाठक कहानी में सतत आकर्षित और प्रेरित रहता है डा० लक्ष्मीनारायण लाल के शब्दों में, 'इस से कहानी में परिपार्श्व के साथ-साथ पाठक के सवेद्य जगत अर्थात् मस्तिष्क में भी उसी के अनुरूप वातावरण की स्वयं सृष्टि हो जाती है और कहानी पढ़ते समय या कहानी समाप्त करने के बाद पाठक उसी

---

(१) राजस्थानी वातां' सं० स्व० श्री सूर्यकरण पारीक, टिप्पणी पृ० २००
(२) — वही — पृ० २०४

कहानी के देश काल और परिस्थिति लोक में मगन मिलता है।'[1]

राजस्थानी वार्तों में वातावरण के साथ-साथ यहां का तत्कालीन स्थानीय वर्णन भी मिलता है। इन वार्तों में हिन्दी-कहानियों में जिस प्रकार का स्थानीय अनुरंजन का वर्णन मिलता है उस प्रकार का नहीं। वार्तों मे कहीं-कहीं रोचकता लाने के लिए वातकारों ने अवसर देखकर तत्कालीन समाज का सुन्दर वर्णन किया है। मध्यकालीन राजस्थान के बहुत बड़े समाज का चित्रण इन वार्तों में हुआ है। यहां की शासन-प्रणाली जागीर-प्रथा, कलात्मक-सृजन, साहित्यिक वातावरण, आमोद-प्रमोद, नैतिक मूल्य, भाग्यवादिता, रूढ़िनिर्वाह और जीवन-सिद्धान्तों का सर्वपक्षीय चित्रण इन वार्तों के माध्यम से अंकित हुआ है। श्री नारायणसिंहजी भाटी के शब्दों मे, विभिन्न प्रकार और समय की वार्तों के अध्ययन से तत्कालीन समाज की विभिन्न प्रवृतियों की जो महत्त्वपूर्ण जानकारी मिलती है वह तथाकथित लिखित इतिहासों मे उपलब्ध नहीं होती। प्रदेश का सामाजिक इतिहास लिखने में इस सामग्री मिलने वाली सहायता का महत्व असंदिग्ध है'[2]

स्थानीय अनुरंजन का तात्पर्य केवल यही है कि पाठक या श्रोता इन वार्तों को जब पढ़े या सुने तो उसे जो वर्णन चल रहा है उससे यही मालूम हो कि यह वर्णन राजस्थान ही का है। वैसे नदी, नाला, तालाब, गढ़, वेश-भूषा आदि के वर्णन में अन्य प्रान्तों से ज्यादा फर्क नहीं रहता अतएव बात मे वर्णन की कुछ ऐसी विशेषता हो कि जिससे वह राजस्थानीपन ही लिये हुए हो। वर्णन को पढ़ते ही वीर भूमि राजस्थान का स्मरण होकर उस प्रदेश के दृश्य आंखों के समक्ष नाचने लग जाना हो सफल स्थानीय अनुरंजन का वर्णन करना है।

उदाहरण के तौर पर हम पेड़ पौधों को ले सकते है जिनका वर्णन इन वार्तों मे अत्यधिक है। इन पेड़ पौधों में कुछ अन्य प्रान्त के पेड़ पौधों से साम्य हो सकता है किन्तु फोग' एक ऐसा पेड़ है जो केवल राजस्थान ही मे पाया जाता है अतएव जिन वार्तों में फोग पेड़ का वर्णन आता है या उल्लेख होता

---

(१) हिन्दी कहानियों की शिल्प-विधि का विकास : डा० लक्ष्मीनारायण लाल पृ० २३८

(२) राजस्थानी वातां, नारायणसिंह भाटी, (परम्परा' भाग ६-७ भूमिका, पृ० १५)

है तो राजस्थान की भूमि अपनी स्मृति को हमारे मस्तिष्क को ताजा करा देती है। इसी प्रकार जिन बातों में टीलों का वर्णन आया है वे इस मरु भूमि राजस्थान के ग्रामीणों के विषय में सब कुछ हमारे समक्ष प्रगट कर देती है।

बातों में जो भी वर्णन आये हैं उनमें क्लिष्टता न होकर छोटे छोटे वाक्यों की एक सुन्दर योजना पाई जाती है। चूंकि इन बातों को साधारण बोलचाल की भाषा में ही कहा गया है अतएव इनका आनन्द बच्चे से लेकर बूढ़े तक प्राप्त कर सकते हैं। इन वर्णनों में बातकार स्थानीय-वर्णन को नहीं भूले हैं। उन्होंने जो भी बात कही वह उस समय के समाज की ओर एक गंभीर इशारा करती है। नीचे एक उदाहरण दिया जाता है जिसे पढ़कर हमारे नेत्रों के सामने खेत पर अपने पति के लिए खाना ले जाती हुई स्त्री का चित्र झूमने लगता है।

'बरसात रा दोड़ छै। दीवाण सिकार चढ़िया छै। हल वहे छै, माहरो मास छै। धणियाणी भातो ले ज्यावै छै। दोड़ पाछो छै सू जिन्है हाथे पकड़ी छै निरा [illegible] छै। पाछली नाखे छै, पेरै कई करत्वा आवे छै भातो नाखे छै वे परवाह [illegible] जावै छै।'[1]

राजस्थानी राजपूतानियों का जौहर-व्रत धारण करना किससे छुपा हुआ है— हँसते हँसते जौहर व्रत को धारण कर लेती थी किन्तु अपनी आन को न जाने देती। इसी प्रकार यह निम्न उदाहरण है जो उन वीरांगनाओं के [illegible] एवं जौहर व्रत धारण करने की स्मृति को तरोताजा कर देता है—

'अब [illegible] रजपूतणियां [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।'[2]

एक और वर्णन नीचे दिया जाता है जिसमें उस समय के राजपूतों के [illegible] के कुछ [illegible] मिलते हैं [illegible] [illegible] [illegible] में पाये जाते थे

(१) '[illegible] री बात'— राजस्थानी [illegible] हिन्दी-[illegible] [illegible] [illegible] पृ० २०

(२) '[illegible] री बात' — राजस्थानी बातां सं० [illegible] पृ० ६०

एक दिन रो समायोग छ। वालसोवर तळाव सिखरे अमणावन गोठ किवी छै। सारा ईदा भेकठा हुवा छै, अमल पाणी किया छै। चाकर मारिया छै। सोहता हुवै छै.........।'[1]

एक और अन्य वर्णन देखिये:—

'प्रहणाठिया अमल किया। तौ हिवै सूरज-वासिया करौ। ताहरां सूरिज वासिया किया। आप पूछियौ-ठकुरे सूर्यवासिया किया? तौ हिवै आंवा वासिया करौ ताहरां आंवा वासिया किया। आप फुरमायो-खासिया करौ। तरै खासिया किया। आप फुरमायो गालिया करौ। तरै गालिया किया। तरै आप फुरमायो हापला करौ। तरै हापला किया। अमलां गह तक साथ हुयौ।'[2]

नाई का चालाक होना बहुत ही प्रसिद्ध है एव उसके चरित्र में एक और वात भी आती है वह है धन के लिए उसका किसी का भी खून कर देना। ऐसे ही दो उदाहरण नीचे दिये जाते हैं:—

'इलै चाही जे सौ मांगलै। तद नाई कही हूं छोडू नहीं मारंगो। तद साहा कही रे जो तूं छोडै नहीं अर मारेहीज है तौ एक संदेसौ तू माहारी बहू नैं दीजै। तद नाई कही। × × × × × विचारी नैं वाण्यो एक कागद माहें लिखे दियो जो। अप्रसिसी यो साह लिखे नें नाई रे हाथ दीयौ। उठै नाई वाण्यौ कटारी री मारयौ। उठै साहानें मारे नैं नाई तो ऊंट पर चढ़े मता हथियार लेन साह ने कोहो सोहला मे नाखे नें चढ़यो सो रातो रात घरै आयो'[3]

नाई के स्वभाव से संबंधित एक और वात का उदाहरण देखिये:—

'बोल्यो आज चाकर नैं कौंतर याद फरमायो। जदी कंवरजी कियो—थारा ऊं कालू काम पड़यो। यो काम था बनो नी व्हे सकै। नाई बोल्यो-ज्यौ होकम। जदी कवरजी बोल्या-कीनें ई खबर पड़णी चावै नीं, ने राणाजी ने यूं मार नाकै तो थनै पांच हजार रोपा इनाम देऊ। यो काम यूं हेल हाटे कर सकै। जदी वो

(१) 'ऊदै आमणावत री वात-राजस्थानीवातां' स० नरोत्तमदास स्वामी पृ० २५
(२) प्रतामल देवड़े री वात — वही — पृ० ६५
(३) वीरचन्द मेहता री वारता — वही — पृ० ६१-६२

बोल्यो-मदाता, यो तो म्हारे डावा हाथ रो काम है।'[1]

इसी प्रकार के अन्य जातियों से संबंधित वर्णन भी इन वातों में मिलते हैं जिनसे इन जातियों के स्वभाव की विशेषताओं का पता सहज ही में प्राप्त हो सकता है। इन जातियों की संस्कृति, रहन-सहन, बोल-चाल, खान-पान आदि का पता देने वाली केवल ये वातें ही हैं।

राजस्थान के अन्दर दो प्रेत शक्तियां 'सौखता' और 'पोखता' की गांवों में बहुत मान्यता है पोखता जिस मनुष्य के पीछे आ जाती है उसे धन-धान्य पूर्ण बना देती है और सौखता जिस के पीछे आ जाती है उसे बरबाद कर देती है ऐसा राजस्थान के ग्रामीणों का एक अन्ध विश्वास है नीचे पोखता का एक उदाहरण देखिये:—

'भाग जोग री वात, कुवा में एक पोखता बैठी, पोखता रे माथा पै जाय वो काजळ पडियो, काजळ पडतां ही पोखता तो बस में व्हेगी, कुंवरजी रो हाथ पकड लीयो, कुंवर जी पूछियो–थूं है कुण ? म्हूं पोखता हूं, थां बुलाई ज्यूं आई हूं, थांके बिना म्हनै कांई नीं दीखे, म्हने कोई मानवी नीं देख सके, म्हूं थावे जठे जाय सकूं हूं, अबै रोजीना सांझ पड़ियां थारे कने आवूं तो, रोजीना साझ पड़े पोखता सोना को थाळ ले आय जावें'।[2]

राजस्थान में प्राचीन समय में और अब भी गांवों में अमल का नशा बहुत किया जाता है हर त्यौहार, शादी आदि खुशी के अवसर पर अमल अभ्यागतों को खिलाया जाता है। जिस प्रकार शराब का नशा अधिक प्रचलित है उसी प्रकार अमल का नशा शराब से भी ज्यादा प्रचलित है, जैसलमेर मे तो वहां का ग्रामीण अमल का ही नशा अधिकतौर पर करता है और इन अमलदारों को जब अमल नही मिलता है तो इनकी क्या दशा होती है इसका एक चित्र नीचे देखिये:—

'नीचो तो वठे ही भूलगी' हैं ? है केवतां ही कवरजी रे अमल ही वाहीं उतरगी 'घबासिया आवा लागगी, अब उठै कांकड में अमल लावे कठा सूं'। कवर जी

---

(१) वात कपूर कुवर रो राजस्थानी वातां भाग २ पृ० ५२–५३
(२) पदमसिंहजी री वात—कं रं घरवा वात–रानी लक्ष्मीकुमारी चूंडावत पृ० १३०–१३१

चूंकि बातें लोक-जीवन की झांकी होती हैं अतएव उनमें स्थानीय अनुरंजन का वर्णन होना अत्यावश्यक है । किन्तु इन राजस्थानी बातों में वर्णन बहुत कम मिलते हैं। केवल घटनाओं के सहारे से ही एक एक दो दो पंक्तियों में स्थानीय वर्णन दे दिया गया है। वर्णनों की प्रधानता बातों मे दृष्टिगोचर नहीं होती। किन्तु जैसा भी है इस वीरभूमि के वीरों के विषय मे बतलाने वाली ये केवल बातें ही हैं—जिनके वर्णन उस मध्यकालीन संस्कृति और समाज के चित्र एक के बाद एक हमारे सामने खींचते रहते हैं।

अध्याय/६

राजस्थानी वातों की भाषा-शैली

भाषा और शैली का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। भाषा का सुन्दर और सशक्त होना लेखक की योग्यता पर निर्भर करता है। इसके अतिरिक्त साहित्य जितना ही उच्च कोटि का होगा एवं लेखक जितना योग्य होगा, शैली भी उतनी ही उच्च कोटि की होगी। भाषा ऐसी होनी चाहिए जो कि सजीव लगे। जिसमें सफल चित्र खड़ा करने की सामर्थ्य हो और ओज एवं माधुर्य गुणों की अवस्थिति विषयानुकूल और रसानुकूल हो। उसमें व्यंग और परिहास के स्थल भी हों। मुहावरों के प्रयोग से भाषा सजीव और सशक्त होती है। 'भाषा शैली के कहानीकार के मनोभावों की अभिव्यक्ति का एक मात्र साधन है इसी के आधार से हम इस निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं कि अमुक कहानी सरल, सुबोध और सरस शैली में है तथा अमुक कहानी दुरूह, अस्पष्ट और दुर्बोध शैली में है।'[1] शब्द-शक्ति का ज्ञान, गम्भीरता और संयम, विषय और वस्तु कहानी की भाषा शैली की मुख्य विशेषता है। लेखक के हृदय के उद्गार उसके भाव ही होते हैं और इन भावों की अभिव्यक्ति का आधार भाषा ही होती है। 'भावों की अभिव्यक्ति का आधार भाषा है अतएव भावों को सुन्दर रूप में प्रकाशित करने के लिये उसी के उपयुक्त भाषा में सुन्दरता होनी चाहिये। मानवें भाषा के द्वारा ही मार्मिकता का पुट दिया जा सकता

(१) हिन्दी कहानियों की शिल्प विधि का विकास - डा० लक्ष्मीनारायण लाल पृ० १४०

है।'[1] कहानी के गद्य में शब्द चयन और वाक्य-योजना ही भाषा की वह कलात्मकता है जिसके विविध प्रयोग और रूपों से कहानीकार अपने भाव-चित्र को पूर्ण करता रहता है।

'कहानी की भाषा ऐसे सार्थक शब्द-समूहों से गठित होनी चाहिये जो एक विशेष क्रम से व्यवस्थित होकर लेखक अथवा पात्र के मन की बात पाठकों के मन तक पहुंचाकर उनके द्वारा उन्हें प्रभावित करते हों।'[2]

शैली लेखक का स्वभाव है और स्वभाव का उद्भवशील जीवन। 'शैलीकार जीवन को आंखों से देखते हैं पुस्तकों द्वारा नहीं झांकते।'[3] शैली कलाकार के अस्तित्व और व्यक्तित्व का परिचय देती है। कहानी के अन्य समस्त तत्वों को उपयोग करने की रीति ही शैली है।' शैली लिखने का वह कौशल, सौष्ठव और सौंदर्य है, जिसमें एक प्रकार के वैशिष्ट्य की आवश्यकता होती है और वह प्रधान गुणों के कारण पाठकों का ध्यान सहज ही में अपनी ओर आकर्षित कर लेती हैं।[4] आधुनिक कहानियों में मुख्यतया पांच प्रकार की शैलियां पाई जाती हैं—१. साधारण वर्णनात्मक शैली, २. आत्म चरित शैली, ३. आलाप शैली ४. पत्र शैली और ५. डायरी शैली।

बातों की भाषा—

राजस्थानी गद्य काफी प्राचीन है। और बात-साहित्य चूंकि गद्य का ही अंग है अतएव यह भी काफी पुराना है। हमने पिछले अध्यायों में बतलाया है कि बातें हमें १८वीं शताब्दी से मिलने लगती हैं। इन बातों की भाषा पुरानी राजस्थानी है पर समय के दौरान में भाषा का रूप निरन्तर बदलता गया है। इन बातों में प्रयुक्त भाषा का सबसे बड़ा गुण उसकी सहजता और सजीवता है। वर्णनात्मक स्थलों पर इतनी सशक्त भाषा का प्रयोग हुआ है कि सहज ही में चित्र उपस्थित हो जाता है। उदाहरण स्वरूप एक तालाब का वर्णन देखिये जो कितना सजीव, सरस एवं मनोहर है:—

'तिको तळाव विण भांतरो छै। राती वरडीरो। पांडरो नीर। पवनरो

(१) कहानी और कहानीकार—मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० ३४
(२) — वही — पृ० ३४
(३) आलोचना के पथ पर—सहल।
(४) कहानी और कहानीकार—श्री मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० ३४

मारियो फोण म्राछंटतो थको भोला खाय रहयो छै। लहरां लियै छै। भयत्र होव छै। कड़िया सुंवै पाणी में वैठा पगारा नख भाखै छै। दूधरै मोळावै विलाव वासीजै छै। ऊपर कुंजा, सारसां गहकनै रही छै। डेडरा उहकमै रहया छै। टीटोड़ी टहकनै रही छै। जळ-काग गुटकनै रहया छै। मुरगाबी तिरनै रही छै। म्रठार भार वनस्पती भुकनै रही छै। तळावरै छेहड़ा कुंवळ फूलनै रह्या छै। हजार पांवड़ा ईम छै। म्राठ सै पांवडा उपळै छै। इण भांतरो ताळाव छै।'

जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि इन वातो की मूल-प्रकृति कहे जाने की है और भाषा म्रभिव्यक्ति का साधन है पर इन राजस्थानी कहानीकारो के कहने का म्रपना एक म्रनूठा ढंग है। कथन की इनकी म्रपनी प्रणाली है जो सर्वथा नवीन है म्रौर जिसमे छोटे छोटे वाक्यों का प्रयोग एव म्रनेक स्थलों पर तो काव्यात्मका-कविता जैसी तुकबन्दी-सा गयी है। जैसे गंगेवनीवावत के व्यक्तित्व का वर्णन निहारिये:—

'तठा उपरायत गगेव नींवावत बाहर पधारै छै। सू किण भांतरो छै? ऊगतो सूरज पावासररो हांस, कुंवरांपत कुंवर, जळहर जबाब भोगी भवर कसतूरियो मिष, लाखियोमिष पील गगेव, दुरजोधन म्रहमेव, जुजठळ ज्यू साच, दुरवासा वाच, ग्यानारो गोरख, सहदेव ज्यू सारी बात समरथ, म्ररजुन ज्यूं बाण, करण ज्यू दान पाण, वत्तीस म्राखडीरो निवाहणहार, वैरियां विभाडणहार, पर भोम पचायण, घण दियण, जस लियण, कळायरोमोर सूचै भीनैं गात, केसरिया पौसाँक कियां, पाच हथियारां बांधा म्राण घोडे म्रसवार हुवे छै।[1]

इन वार्तो मे वैसे वार्तालाप बहुत ही कम स्थानों पर म्राये है परन्तु जहा कहीं पर भी वार्तालाप म्राये हैं वहा प्रायः पात्रों के म्रनुरूप ही भाषा का प्रयोग मिलता है। इनमे ऐसा नहीं देखने में म्राया है कि राजस्थान प्रान्त के म्रलावा जितने भी म्रन्य प्रान्तों के चरित्र म्राये हैं उनके लिये भी राजस्थानी का प्रयोग हुम्रा हो। यहां तक कि बहुत वातों में तो मुसलमान पात्रों के मुंह मे उर्दू म्रथवा फारसी मिश्रित भाषा प्रयोग में लायी गयी है। इन कहानी कहने वाले म्रौर लिखने वाले कथाकारों पर सरस्वती की ऐसी कृपा थी कि ये म्रल्प में

(१) खीची गगेव नींवावत रो दो-पहरो-राजस्थानी साहित्य-संग्रह भाग १— सं० नरोत्तमदासजी स्वामी, पृ० ३

सरल भाषा में उत्तम से उत्तम एवं लोच भरे भावों को भर देते थे। शब्द चयन में पटु थे। निरर्थक एवम् भरती का एक शब्द भी ये नहीं आने देते थे। बातों की मूल-प्रवृत्ति कहे जाने की होने के कारण—इसके अनुरूप ही भाषा में भी लयात्मकता, खानगी और सहजता है। 'भाव और वस्तु-वर्णन दोनों ही में भाषा की यह अभिव्यक्ति क्षमता अपने औचित्य के साथ दृष्टिगोचर होती है।'[1] इन बातों की भाषा मे शब्दाडम्बर नहीं पाया जाता। कथाकार के सम्मुख अनायास जो शब्द उपस्थित हो जाते हैं उन्हीं से वह उनकी रचना करता है। अनमेल, बेजोड़ या भोंडे शब्दों की योजना इनमें नही मिलती। इन कथाओं की कथावस्तु जितनी स्वाभाविक है इनकी भाषा भी उतनी अकृत्रिम है। ये कथाएं अबाध गति से प्रवहमान सरिताओं की भान्ति हैं जिनमें अवगाहन कर जन का मानस आनन्द लेता है। जिनका जल निर्मल तथा शीतल होने के कारण मान करने वालों को संजीवनी शक्ति प्रदान करता है।

बातों की भाषा में प्रसाद, ओज एवम् माधुर्य तीनों गुण पाये जाते हैं इसके साथ साथ भाषा में लाक्षणिकता का भी प्रयोग किया गया है।

कहानी में सरलता के गुण को ही कहानी का प्रसाद गुण कहेंगे। भाषा का प्रसाद पूर्ण चमत्कार 'राठौड़ अमरसिंह गजसिंहोत री बात' के प्रारम्भ में देखिये —

'अमरसिंह गजसिंह जी रै बडो कुंवर। सांचेर रा चहुवाणां रो देहितो। सो गजसिंहजी री रजा नहीं। अमरसिंह निराठ सारी बात में अव्वल, बडो देतीन, मांटीपणै रो थोक। तद गैरचाकर लोगां सूं बातां कर, लोग लागे साथ लेय आगरे बादशाह साहजहां कन्है गयो। बादसाह आछी तरह सूं राखियो। आमेर रै घर परणियो थो जोधपुर रै धणी रो बडो बेटो, फेर आप बातां नरनाणी सो आछी तरह सूं रहै। नरशी मरघी पावै ....।'[1]

वीर-रस की जगह युद्ध के वर्णन एवम् क्रोध के समय ओज पूर्ण शब्दों का प्रयोग किया गया है। युद्ध के दृश्य को चित्रित करने वाली ओज पूर्ण भाषा का एक नमूना 'महाराजा पदमसिंह जी री बात' से दिया जाता है—

(१) राजस्थानी-बात संग्रह—नारायणसिंह भाटी (परम्परा भाग १-२) भूमिका, पृ० १०

) — वही — पृ० १११

पदमसिंह जी हरवळ था सो इहाँ सूं ही जै रीठ बाजियो । सो फेरा पांच तो आपरै डील घोड़ो फेरियो । तरवारियाँ खड़ाखड़ बाज रही छै । नवाब पण बड़ो-बड़ो देख रह्यो छै । पदमसिंह जी रै सिर दक्खिणी श्राय जूंझिया छै । पाथ ऊपर चौकड़ी तरवारियां री पड़ रही छै । × × × × इतरै में आपरी लोग पण आप हौज-पहोंचियो सत्रुसाळ, रतन महेसदासोत अै सामळ रहिया । बड़ो इकळास थो सो पण आ पहोंचिया । इतरै मे राघोजी घोंसलो फौज री मुही थो तीनूं पदमसिंह जी मार लीन्हो । तद लोग सारो भाग गयो सो फतह कर डेरा पधारिया ।'[1]

वातों में जहां प्रसाद एवं ओज गुण की अधिकता है वहां माधुर्य की भी कमी नहीं है। वातों के गद्य का एक उदाहरण देखिये जो कितना मधुर एवं छटा-दार है।

'अचळदास खींची री वात' में झीमी चारणी ने जो उमा का रूप वर्णन किया है वह कितना स्वाभाविक एवं मधुरता लिये हुए हैं—

'उमां सांखुळी मारवणी रो अवतार । आसमान सूं ऊतरी जाणे इन्द्र री अपच्छरा । सरोवर से हंस । सारद को कमल । बसंत की मंजरी । भादवा की बादळी । बादळा की बीच मेह को झमालो । बावनो चंदन । सोळमो सोनो । रायकेल कोप्रम हंस को बचो । लछमी का अवतारु । अमृत को सूर । पूनम को चांद । सरद की चांदणी की क्रिया । सनेह की लहर । गुण को प्रवाह । रूप को निधान गुणवंत की मूल । जोवन को लेखणों । चौसठ कला री जाण ....।'[2]

इसके अतिरिक्त वातों में लाक्षणिकता के दर्शन भी हो जाते हैं । वातों में जैसा जैसा प्रसंग आता रहता है उसी के अनुसार भाषा में भी परिवर्तन आता रहता है। जैसे 'डाढ़ाळो सूर' की वात में वीर परिवार का प्रतीक सूअर परिवार को बताया गया है। वीरता के तथ्य का सूअर के परिवार पर आरोपण किया गया है। इसी वात मे लाक्षणिकता का एक उदाहरण देखिये—

'एक दिन सारो परिवार लियां डाढालो नै भूंडण सोय रह्या छै । इतरै भांभर के री वसत री ठाडी पवन आई । तीं पवन री साथ हरिया जवांरी बोय आई

---

(१) राजस्थानी वात-संग्रह—नारायणसिंह भाटी ('परम्परा भाग ६-७') पृ० १८१

(२) अनूप संस्कृत-पुस्तकालय में विद्यमान । लालगढ़ पैलेस, बीकानेर

सद भूंडण उठ बैठी हुई और कह्यो—हरिया जशां गी सुमत्रू मावें छै। हानो जो घरां। जद डाढाली कह्यो—अब सिरोही रै धणी रा छै। इयां जगा ऊपर कजियो हांयसी। चोल्हर नेंन्हा छे। मारिया जासी।'[1]

वार्तों की भाषा लोक-जीवन से सम्बन्धित है। जन-मानस के साथ इन वार्तों का बहुत नजदीक का सम्बन्ध है इसलिये जन-मानस की भाव-निधि को वहन करने की क्षमता इनकी सहज विशेषता है। किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि भाषा-लोक-जीवन से सम्बन्धित होने के कारण साहित्यिकता से कोरी रह गयी है। वार्तों की भाषा में साहित्यिक गुण भी विद्यमान हैं। उपमा-उत्प्रेक्षा आदि गुण वर्णन के समय स्थान स्थान पर लक्षित होते हैं। भाषा पर क्लिष्टता का आरोप नहीं किया जा सकता। छोटे छोटे वाक्यों से सुसज्जित सरल, सुन्दर तथा मनोहर भाषा वार्तों में प्रयुक्त हुई है। उदाहरण स्वरूप चन्द्रगढ़ दुर्ग का चित्रण देखिये जिसकी सुन्दरता उपमायें लग जाने के कारण अपने पूरे निखार पर आ गयी है—'तिण समें सरा में ज्यूं मानसरोवर, तरां में ज्यूं कलप तरोवर। खगां में ज्यूं राजहंस, नगां में ज्यूं मोम मन। नमां में ज्यूं नेह रो नसो, रसां मैं ज्यूं सिणगार इम रो ठसो। तुरगां में ज्यूं सूरज रो तुरंग दुरगां में इण भांत चन्द्रगढ़ दुरग।'

लोक-कथाओं की शैली बड़ी सरल तथा सीधी सादी है। इनमें जिन वाक्यों का प्रयोग किया जाता है वे बड़े छोटे होते हैं। साधारण वाक्य को छोड़कर संयुक्त या मिश्र वाक्यों का इनमें अभाव होता है। जैसे 'एक राजपूत करणिक देस में रहे। जो धणीरे प्रछत भाई जडी रजपूताणी रजपूत है कयो। राज धारे तो खरचो चावे।' इत्यादि। लोक-कथायें प्रधानतया गद्य में ही पायी जाती हैं। परन्तु बीच-बीच में इनमे पद्यों का भी प्रयोग किया गया है। चम्पू को संस्कृत के आचार्यों ने गद्य-पद्य मय काव्य कहा है। इस प्रकार इन कथाओं में चम्पू-शैली का प्रयोग उपलब्ध होता है। मुझे तो ऐसा लगता है कि श्रोताओं पर स्थायी भाव जमाने के लिये कथा के बीच-बीच में पद्य की अवतारणा की गई है। गद्य-पद्य की इस गंगा-जमुना ने कथा के महत्व तथा उनकी प्रभावोत्पादकता को बहुत अधिक बढ़ा दिया है।

---

(१) राजस्थानी वात-संग्रह—नारायणसिंह भाटी (परम्परा भाग ६ ७) पृ० १२६

इन वार्तों में अधिकांश कहानियां दृष्टा-रूप में हैं, आत्मकथात्मक रूप में बहुत कम, दृष्टा-रूप शैली में–'कहानीकार एक कथावाचक की भांति पूर्णतः तटस्थ होकर कहानी को सृष्टि करता है। यह सृष्टि पूर्ण वर्णनात्मक ढंग की होती है, अतः समूची कहानी का सूत्रधार स्पष्ट रूप से कहानीकार होता है और इसका नायकत्व वह अथवा किसी अन्य पुरुष को दी जाती है। कथावाचक की मान्ति कथाकार पात्रों के वर्णन, घटना के चित्रण और कहानी के समस्त तत्वों को अपनी वर्णनात्मिकता में समेट कर कहानी को पूरा करता है। यह शैली कहने की सबसे आदि और प्रचलित शैली है।'[1]

एक उदाहरण देखिये:—

'अचलदास खीची री वात'[2]—गोधूली की लग्न में अचलदास एवं उमा का विवाह होना है। राजा मण्डप के नीचे बैठे हैं इसका एक चित्रण है—'गोधूलि री लग्न छै। अचलदासजी माईं नैं चुंरा माहे बैठा छै। हथलेवो जोड़ियो। ब्राह्मण वेद भणै छै। पला बांधा छै। अचलदास परणीया छै। ब्राह्मण नुं भणो दीयो छै। परणी नैं महल माहे पधारिया छै।'

राजस्थानी कथा की शैली अपनी स्वय की विशेषता रखती है। कहीं इस शैली द्वारा भूत-प्रेत, शकुन, स्वप्न, देवी-देवता, जादू-टोना आदि अलौकिक तत्वों का वर्णन पाते हैं तो कहीं यह शैली पशु-पक्षी तथा पेड़-पौधों को पात्रों के रूप में उपस्थित करती है तो कहीं प्रेमी-प्रेमिका के प्रिय संदेश भेजती है। इस शैली द्वारा चित्रित वर्णन मानव-हृदय के साथ सहज ही में तादात्म्य स्थापित कर लेते हैं। इस शैली में एक और बात देखने को मिलती है कि कथा-तत्व में मुख्य कथा के अतिरिक्त छोटी-बड़ी अन्य सहायक कथाओं का प्रयोग भी मिलता है कथा से उपकथा निकलती जाती है। स्व० श्री सूर्यकरणजी पारीक राजस्थानी शैली की विशेषता बतलाते हुए कहते हैं, 'सबसे विचित्र बात जो राजस्थानी कहानी में देख पड़ती है वह है उसकी शैली की विलक्षण वैयक्तिकता, राजस्थानी कहानी की शैली राजस्थानी ही की है। उसकी समता दूसरी भाषा में ढूंढना निरर्थक है। यह गूंगे का गुड़ है जो वर्णनातीत है।'[3]

---

(१) हिन्दी कहानियों की शिल्प विधि का विकास — लक्ष्मीनारायणलाल पृ० ३४२

(२) अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर म।

(३) 'राजस्थानी-वातां'—स्व०

कहानी सुना जाता है। यद्यपि शैली में लम्बे समय से परिवर्द्धन और परिवर्तन होते आये हैं फिर भी इन वार्ताओं की निजी शैलीगत विशेषताएं हैं। आधुनिक कथा-साहित्य की शैली से इनकी शैली में बहुत भिन्नता है। यह ठीक है कि इन वार्ताओं में आधुनिक कहानी की तरह सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण या जीवन यथार्थ का उद्घाटन नहीं मिलता किन्तु वर्णनों की सजीवता, औत्सुक्य का निर्वाह, लयात्मक भाषा में काव्य का सा आनन्द, मनोहरता, एवं मनोरंजकता आदि कुछ ऐसे गुण हैं जो इन कथाओं के अस्तित्व को सैंकडो वर्षों से बनाये हुए रख रहे हैं।

भाषा पर विभिन्न बोलियों का प्रभाव—

राजस्थानी वार्ताओं में कई प्रान्तों की भाषाओं का दर्शन होता है। इनमें अधिकांशतः वार्ते जो ऐतिहासिक हैं—उनमें हिन्दू और मुसलमान दोनों संस्कृतियों का वर्णन मिलता है। क्योंकि राजस्थान दिल्ली के पास ही में है और दिल्ली पर उस समय अधिकांशतौर पर मुसलमानों का ही शासन रहा अतएव जो वार्ते मुसलमानों से सम्बन्धित हैं उनमें हिन्दी, उर्दू, और फारसी शब्दों की प्रचुरता देखने को मिलती है। श्री अगरचन्द नाहटा के शब्दों में:—

'भाषा राजस्थानी प्रधान होते हुए भी, वे राजस्थान की कई बोलियों में लिखी जाने के साथ-साथ किसी में हिन्दी, उर्दू, पंजाबी, सिन्धी, गुजराती, भाषाओं के शब्द और पद्य भी मिले-जुले होते हैं। इसका प्रधान कारण यह है ये 'वार्ते' कई प्रान्तों और जातियों से संबंधित हैं जिनकी भाषा और शैली की अपनी-अपनी विशेषताएं हैं।'[1]

राजस्थानी-भाषा का विकास अपभ्रंश से हुआ। अतएव इसका गद्य बहुत ही प्राचीन है। किन्तु चूंकि वार्ते जन-जीवन से सम्बन्धित हैं अतएव जन-मानस की भाव-निधि को वहन करने की क्षमता इनकी सहज विशेषता है। इन वार्ताओं में जहां डिंगल एवं राजस्थानी भाषा का प्रयोग हुआ है वहां इनके अतिरिक्त शुद्ध संस्कृत तथा अरबी फारसी के शब्दों का भी सम्मिश्रण हुआ है। इसका प्रभाव पड़ने का एक कारण भी है कि उस समय मध्यकालीन राजस्थान पर मुस्लिम संस्कृति का बहुत प्रभाव था। फलस्वरूप अरबी और फारसी के कुछ

(१) 'राजस्थानी वार्ताओं का संग्रह एवम् प्रकाशन'—श्री अगरचन्द नाहटा (वरदा–जुलाई १९५९), पृ० ६०

शब्द तो इस भाषा में इतने घुल-मिलकर एक हो गये हैं कि उनका प्रयोग आज तक भी होता है। और उन्हें राजस्थानी शब्द ही समझा जाता है।

भाषा पर विभिन्न बोलियों का प्रभाव हमें वार्तालाप के समय दृष्टिगोचर होता है। क्योंकि वार्तालाप में पात्रों के अनुरूप ही भाषा का प्रयोग मिलता है। अतएव जहां पर जो पात्र चित्रित किया जाता है, वहां उसके मुंह से भी उस ही के प्रान्त की भाषा का प्रयोग किया गया है—मुसलमान पात्रों के मुंह से उर्दू-फारसी मिश्रित भाषा प्रयुक्त हुई है। वातों की भाषा में जहां अरबी, फारसी, गुजराती पंजाबी, सिन्धी आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है वहां हमें ब्रज-भाषा के प्रचलित शब्दों का प्रयोग भी देखने को मिलता है। हमारे यहां की कई वातें जैसे 'ढोला-मारू री वात', 'जलाल बूबना री वात' पंजाब एवं सिन्ध में 'शशीपुनो' 'हीर-रांझा' की तरह विशेष प्रसिद्ध रही हैं और राजस्थान से इस प्रान्त की सीमा जुड़ी हुई है—शताब्दियों से गमनागमन भी होता रहा है अतएव कई वातों में पंजाबी-सिन्धी के मूल पद्य उद्‌धृत मिलते हैं। इसी तरह सीमा के नजदीक होने के कारण एवं अन्य प्रान्तीय सम्बन्ध होने के कारण गुजरात, सौराष्ट्र, कच्छ और मालवा प्रदेश की बहुत सी कथायें राजस्थान में बहुत प्रचारित हुई हैं। अतः उन वातों में प्रान्तीय बोलियों का प्रभाव पाया जाना स्वाभाविक है।

यहां पर हम केवल एक उदाहरण देते हैं जिनमें उर्दू एवं फारसी भाषा का प्रयोग किया गया है—'इतरै बूबना अरज करी—हजरत सलामत जलाल रै बिनां भूमना बहुत दुखी है। बात तक कहणी नहीं आवै, तींसूं ही बहन रा दुख री खातिर अरज है। बादशाह सलामत इतरी सुण तुरत फरमाई—जे तुम ही परवाना लिख देवो। मुहर दस्तखत कराय कागद ले घर आई, कासिद बुलाय हुकम कियो—जे तुरत जाय।'[1]

उपर्युक्त गद्य में जहां उर्दू और फारसी शब्दों का प्रयोग है वहां हिन्दी के भी दो एक शब्द प्रयुक्त हुए हैं। इसी प्रकार की अन्य बहुत सारी संख्या में वातें विद्यमान हैं जिनमें विभिन्न प्रान्तीय बोलियों के प्रचलित शब्द आये हैं।

यहां पर हम एक बात और कह देना नहीं भूलेंगे वह यह कि इन वातों की भाषा में जहां अन्य प्रान्तीय भाषाओं के शब्द मिलते हैं वहां इन वातों की

1) 'जलाल-बूबना'—राजस्थानी वात-संग्रह (परम्परा भाग ६-७), पृ० ११६

भाषा राजस्थान के राज्यों की भाषाओं से भी पूर्णतया प्रभावित है। उदयपुर में जितनी भी वातें प्राप्त हैं वे तमाम मेवाड़ी भाषा में लिखी गयी हैं— उदाहरण स्वरूप—

'सांपरियो घोड़ा रे एड़ लगाई। करोड़ीधज तो ओंणे वायरा सूं वातां करवा लागियो। दो घड़ी मे जाय आबू पूगियो।' सांपरियो सोची अबे तो आपां पछरा दूर आयगिया हां। थोड़ो विसराम करलो। घोड़ा ने बांध विसराम करवा लागियो। अतराक में देख्नो धरती फाटी ·· ।'

इसी तरह जोधपुर में जो वातें प्राप्त हुई हैं उनमें अधिकांश की भाषा-मारवाड़ी जोधपुरी मिलती है किन्तु जितना प्रभाव मेवाड़ी भाषा का इन वातों पर है उतना जोधपुरी का नहीं। जयपुर और बीकानेर की बोलियों का भी प्रभाव इन वातों पर पड़ा है। राजस्थानी-मारवाड़ी भाषा का एक उदाहरण देखिये।

'एक नवाब तीन हजारी। उणरै महाराज सूं बड़ो इखलास। महाराज डेरे आवतो जणां आप साम्हे आय हाथ झाल बैठावतो। आप जमो ऊपर बेठतो। उमरावां आवै थी। हवलदार दोनूं नूं दास पावै थो। आप हैंसी खुसी करता और नवाब जद महाराज रै डेरे में आवे थो तो महाराज भी यूं ही जे करै था। रागरंग हुवै था।'

कहने का तात्पर्य इतना ही है कि जिन-जिन प्रांतों की संस्कृतियों का सम्पर्क हमारे प्रान्त से हुआ उन-उन प्रान्तों की बोलियों का प्रभाव इन वातों पर पड़ा चाहे वे बोलियां राज्यों की—उदयपुरी, बीकानेरी, जयपुरी, जोधपुरी हों— चाहे वे पंजाबी, सिन्धी, गुजराती, ब्रजभाषी आदि हों। अतएव बोल-चाल की भाषा में लिखी गई इन वातों में उस समय के प्रचलित शब्दों का आ जाना स्वाभाविक ही है, क्योंकि यह तो निश्चित है कि मनुष्य जैसे वातावरण के सम्पर्क में आयेगा वह उसी वातावरण के अनुसार अपना व्यवहार एवम् अपनी भाषा का प्रयोग करेगा। विभिन्न राज्यों के वात लेखकों ने अपने राज्य की बोल-चाल की भाषा में इन वातों को कहा और लिपिबद्ध किया तथा जो अन्य बोलियों के शब्द उस समय प्रचलित थे उनका प्रयोग स्वाभाविकतौर पर अपनी वातों में एक रवानगी लाने के लिये किया।

भाषा में लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग—

प्राचीन जनता अपने दैनिक व्यवहार में अनेक लोकोक्तियों, मुहावरों एवं

उक्तियों आदि का प्रयोग करती है। लोकोक्तियों के प्रयोग से कथन में शक्ति आ जाती है और श्रोताओं पर उसका प्रभाव पड़ता है। मुहावरों के द्वारा भाषा मे एक चुस्ती आ जाती है और उसका स्वरूप सुन्दर बन जाता है। जन जीवन इन लोकोक्तियों और मुहावरों से भरा पड़ा है। लोक-साहित्य में इन लोकोक्तियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। लोकोक्तियां अनुभव सिद्ध ज्ञान की निधि है। मानव ने युग युग से जिन तथ्यों का साक्षात्कार किया है उनका प्रकाशन इनके माध्यम से होता है। ये उक्तियां कथाकार के अनुभूति ज्ञान के सूत्र हैं। समास रूप में चिरसंचित अनुभूत ज्ञानराशि का प्रकाशन इनका प्रधान उद्देश्य है।

लोकोक्तियों की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। वेदों और उपनिषदों में भी इनके दर्शन होते हैं। संस्कृत साहित्य में तो ये प्रचुर मात्रा में पायी जाती हैं। पंच-तन्त्र, हितोपदेश आदि ग्रन्थों में नीति सम्बन्धी उक्तियों का प्रयोग किया गया है। 'कण्टकेन कण्टकम्' या 'शठे-शाठ्यं समाचरेत्' ऐसी ही उक्तियां हैं जिनमें नीति या उपदेश भरा पड़ा है। राजस्थानी-साहित्य में लोकोक्तियों का अक्षय भण्डार है। परन्तु इनका विस्तृत संग्रह प्रकाश की प्रतीक्षा कर रहा है। सन् १८८६ ई० में फेलन ने हिन्दी कहावतों के सम्बन्ध में अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ 'डिक्शनरी आफ हिन्दुस्तानी प्रावर्स' लिखा जिसमे राजस्थानी, पंजाबी भोज-पुरी और मैथिली कहावतों का संकलन किया गया है। परन्तु इसमे राजस्थानी लोकोक्तियां अधिक नहीं हैं। राजस्थानी लोकोक्तियों का सबसे बड़ा संग्रह डा० श्री कन्हैयालाल सहल ने कई वर्षों के निरन्तर अथक प्रयत्न से अपने ग्रन्थ 'राजस्थानी कहावतें एक अध्ययन' में किया है। इस बड़े संग्रह के अलावा और भी राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओं में लोकोक्तियां प्रकाशित हुई हैं। किन्तु जितना बड़ा संग्रह श्री सहलजी का है उतना अभी तक कोई भी देखने में नहीं आया है।

लोकोक्तियों की सबसे पहली विशेषता है इनकी समास-शैली। इन कहावतों में इनके रचयिताओं ने गागर में सागर भरने का प्रयास किया है। लोकोक्तियां वैसे आकार में तो छोटी होती हैं परन्तु इनमें विशाल भाव राशि सिमटी पड़ी रहती है। उदाहरण के लिये—

> 'काभा कुत्ता कुमाणसा, तीन्यां एक निकास।
> ज्यां-ज्यां घेरयां नीसरै, त्यां-त्यां करे विनास॥'

को ही लीजिये—इन चार वाक्यों में बहुत-भाव भरा पड़ा है इसका अर्थ यह है कि कौवे, कुत्ते और दुर्जन, तीनों इकसार होते हैं, ये जिस मार्ग से निकला करते हैं उसी का विनाश कर देते हैं। एक छोटी सी उक्ति में कितनी बड़ी बात को बतलाया गया है। एक और दूसरा उदाहरण है—'गवाळ रे हाथ में छैड़ियों'—अर्थात् गवाळा तो केवल नौकर ही होता है वह तो केवल ढोरों को चराने जाता है—ढोरों का मालिक तो कोई और ही होता है। इस छोटी सी लोकोक्ति में समाज के एक बहुत बड़े सत्य को दर्शाया गया है। लोकोक्तियों की यही लघुता उनके प्रचुर प्रभाव का कारण है।

इनकी दूसरी विशेषता अनुभूति और निरीक्षण है। लोकोक्तियों में मानव जीवन के युग-युग की अनुभूतियों का परिणाम और निरीक्षण शक्ति अन्तर्निहित है। उदाहरण प्रस्तुत है 'जमी जोरु जोर की, जोर हट्यो और की।' अर्थात् जब जमीन और स्त्री पर से जोर हट जाता है तो वे किसी अन्य की हो जाती है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि इस उक्ति में बहुत कुछ सत्य का अंश छिपा हुआ है। लोगों ने चिर अनुभव के पश्चात् ही इसका निर्माण किया होगा।

जब विज्ञान की इतनी उन्नति नहीं हुई थी, जब ऋतु सम्बन्धी तथ्यों को जानने के लिये वेधशालाएं नहीं बनी थीं उस समय लोग अपने चिर संचित अनुभव और निरीक्षण शक्ति के द्वारा आगामी दिनों में ऋतु में क्या परिवर्तन होगा इसकी घोषणा किया करते थे। यह परम्परा सम्भवतः बहुत प्राचीन है। और गांवों में तो आज तक भी उसी रूप से विद्यमान है। ग्रामीण लोग आकाश में चमकने वाली बिजली के रंग को देखकर निरीक्षण शक्ति सम्पन्न व्यक्ति अकाल पड़ने की सूचना दे देता है। सर्दी कब तेज पड़ेगी इसके विषय में एक लोकोक्ति प्रसिद्ध है:—

'फागण में सो चौगणो, जे बाजेगी बाल।'

इस कहावत का अर्थ है कि यदि हवा चली तो फाल्गुन माह में चौगुना जाड़ा पड़ने लगेगा। विभिन्न दिशाओं से चलने वाली वायु का प्रभाव भी ये निरीक्षण शक्ति सम्पन्न व्यक्ति अपनी लोकोक्तियां कह कर बतला देते हैं। गांवों में बड़े बूढ़े किसानों की जबान पर इस प्रकार की कहावतें सैंकड़ों की संख्या में मौजूद रहती हैं।

लोकोक्तियों की तीसरी विशेषता है इनकी सरलता। ये लोकोक्तियां बड़ी

सरल भाषा में निबद्ध है जिससे सुनते ही इनका अर्थ हृदयाङ्गम हो जाता है। इनकी यही सरलता इनके अतिशय प्रभाव उत्पन्न करने का कारण है। कहावतें अपनी सरसता और सरलता के कारण हृदय पर सीधी चोट करती हैं। जैसे:—

'अक्कल सरीरां ऊपजै, दीयी न आवै सीख।
मण मांग्या मोती मिलै, मांगी मिलै न भीख।।'

यह बात किसी से छिपी नहीं है कि बुद्धि शरीर के साथ पैदा होती है, समझ बूझ किसी के प्रदान करने से नहीं आती। बिना मांगे मोती तक मिल जाते हैं और मांगने पर भीख भी नहीं मिलती। इस प्रकार की सीधी-सादी भाषा में जो बात कही जाती है उसका प्रभाव ग्रामीणजनों के हृदय पर बहुत अधिक होता है।

पद्यमय कहावतों के अलावा गद्यमय कहावतें भी मिलती हैं। इनका प्रभाव भी जन-हृदय पर सम्भवतः अत्यधिक रूप में पड़ता है।

जितनी भी लोकोक्तियां-कहावतें पायी जाती हैं, उन सबके पीछे एक न एक कहानी निहित रहती है। राजस्थानी कहावतों की व्युत्पत्ति किसी न किसी विशेष घटना से है तभी तो व्याख्याकार अपनी सरल और सीधी भाषा में कहावतों के उदाहरण देकर शिक्षा, नीति आदि का पाठ पढ़ाते हैं। उदाहरण के लिये राजस्थानी की यह कहावत लेते हैं—

'सुण ये माता बावळी, भैंस गई है रावळी।
मैं हूँ खाती सैंसो, बोही कुहाड़ो बोही बैंसो।।'

इसके पीछे जो कथा अन्तर्निहित है वह इस प्रकार है—

'एक गाव म 'बावळी' माता की मोन मानता ही। जिको कोई चोरी करके ल्यातो बींको हाथ माता कै चिपज्यातो। एक दिन सैंसो खाती रावलै की भैंस चोर कर ल्यायो पर हाथ चिपणै कै डर सैं माई को मण्ड फोड़ने लाग्यो। जद माई बोली क तूं मण्ड मतना फोड़, तेरो हाथ नही चिपैगो। दूसरै दिन सारो गांव माई कै हाथ चेपण नै आयो। पिछैईपिछै सैंसो खाती आयो अर बोल्यो— 'सुण ये माता बावळी, भैंस गई है रावळी। मैं हूँ खाती सैंसो, बोही कुहाड़ो बोही बैंसो।।'—जद सैंसो को हाथ चिप्यो नहीं।'[1]

(१) राजस्थानी लोक-कथा कोश'—श्री गोविन्द अग्रवाल। (मरुभारती-अक्टूबर १९६०) पृ० १६।

एक और बड़ी रोचक कहावत देखिये—'तिथ तारे वार दोपारे'—अर्थ-तिथि तारे उदय होने पर बदलती है और वार दोपहर के पश्चात् बदल जाता है।'

इसी प्रकार एक और बड़ी रोचक कहावत की कहानी देखिये--कहावत इस प्रकार है—

'देवी मण्ड में ही बैठी मरड़ का करै है,
बदे बाणिये नैं बेटो कोनी दियो।'

इसके पीछे यह कहानी आती है—

'एक बाणियो भैरूंजी की मानता मानीं क मेरे बेटो हो ज्या तो भैरूंजी, तेरे भैसो चढ़ाद्यूं। बाणिये कै बेटो होग्यो जद बो भैसो लेकर भैरूजी कै थान पर गयो। बाणिये सैं भैंसे की बली क्यां की दी जावै सो थोड़ो सी वार तो तड़फ्यो सोचवोचकरयो फेर भैंसे की नाथ भैरूजी कै बांध दी अर हाथ जोड़कर घरे आग्यो। भैंसो थोड़ी सी वार तो बठै खड़्यो रयो फेर बी कं मड़मड़ी आयी जिको सम्भल करकै भैरूजी नैं उपाड़ लिया अर ठरड़तो ले चाल्यो। कन्नैं ई देवी को थान हो, सो देवी बोली क भैरू आज क्यां ठरड़्यो जावै है? जद भैरूं भल्लभरतो बोल्यो—

'देवी मण्ड में ही बैठी मरड का करै है,
बदे बाणिये नैं बेटो कोनी दियो।'[1]

इस प्रकार इन कहावतों से वार्तों की भाषा में एक सरलता सजगता, रवानगी, शिक्षा एवं नीति प्राप्त होती है। क्योंकि हर कहावत अपनी एक कथा लिये हुए होती है अतएव कहावतों के बहाने हम अपनी बात को ग्रामीणों को अच्छी तरह से समझा सकते हैं।

ये लोकोक्तियां कई रूपों में प्रयुक्त होकर भाषा को सशक्त बनाती है। बहुत सी ऐसी लोकोक्तियां पाई जाती हैं जो देश या स्थान की विशेषताओं को प्रकट करती है। इसके अतिरिक्त विभिन्न जातियों की विशेषताओं को प्रकट करने वाली अनेक लोकोक्तियां भी उपलब्ध होती हैं। ब्राह्मण, नाई, मोची, राजपूत आदि की जातिय-प्रवृत्तियों के विषय में अनेक कहावतें प्रचलित हैं। अनेक

(१) राजस्थानी लोक-कथा-कोश—गोविन्द अग्रवाल (मरुभारती चुरू — १९६०) पृ० १७।

लोकोक्तियां प्रकृति से सम्बन्ध रखने वाली हैं। ऋतु वायु, नक्षत्र आदि विषयों का ज्ञान हमें इन लोकोक्तियों से प्राप्त हो सकता है। कहीं कहीं पशु-पक्षी सम्बन्धी कहावतें भी देखने को आती हैं। इसके अलावा इन राजस्थानी कहावतों में जो विशेषता नीति-सम्बन्धी कहावतों को है वह उपरोक्त चारों को नहीं। कहावतों के माध्यम से किसी न किसी नीति सम्बन्धी बात को कहा जाता है।

लोकोक्तियां-कहावतों—का प्रयोग राजस्थानी भाषा को समृद्धि प्रदान करता है। कथा मे कहावत के आजाने से उसका सौन्दर्य और भी बिखर जाता है। राजस्थानी बात-कहने वालों की बात कहने की जो प्रणाली थी उसमें एक अनूठापन है जो हमे बार-बार उस ओर खींचकर ले जाती है। कहावतों और मुहावरों से युक्त भाषा द्वारा जो मनोरम वर्णन किया जाता है वह देखते ही बनता है।

मुहावरे—

मुहावरा अरबी भाषा का शब्द है। इसका अर्थ है—परस्पर बातचीत और सवाल-जवाब करना।' अंग्रेजी मे इसे 'इडियम' कहते हैं। संस्कृत में इसके यथार्थ अर्थ को बोधित करने वाला कोई शब्द नहीं है। मुहावरा किसी बोली या भाषा में प्रयुक्त होने वाला वह अपूर्ण वाक्य खण्ड है जो अपनी उपस्थिति से समस्त वाक्य को सबल, सतेज, रोचक और चुस्त बना देता है। संसार में मनुष्य ने अपने लोक-व्यवहार में जिन-जिन वस्तुओं और विचारों को बड़े कौतूहल से देखा ओ' समझा और बार-बार उसका अनुभव किया उन्हीं को उसने शब्दों में बांध दिया है। वे ही मुहावरे कहलाते हैं।'[1]

पं० अयोध्यासिंहजी उपाध्याय के शब्दों में 'मनुष्य के कार्यक्षेत्र विस्तृत हैं। उसके मानसिक भाव भी अनन्त हैं। घटना और कार्य-कारण परम्परा से जैसे असख्य वाक्यों की उत्पत्ति होती है उसी प्रकार मुहावरों की भी। अनेक अवसर ऐसे उपस्थित होते हैं जब मनुष्य अपने मन के भावों को कारण विशेष से संकेत अथवा इंगित किंवा व्यंग द्वारा प्रकट करना चाहता है। कभी कई एक ऐसे भावों को थोड़े शब्दों में विवृत करने का उद्योग करता है, जिनके अधिक लम्बे, चौड़े वाक्यों का जाल छिन्न करना उसे अभीष्ट होता है। प्रायः हास, परिहास, घृणा, आवेग, उत्साह आदि के अवसर पर उस प्रवृत्ति के अनुकूल

(१) त्रिपाठी : 'त्रिपथगा' अङ्क ६ (मार्च १९५६) पृ० ३०

वाक्य योजना होती देखी जाती है। सामयिक अवस्था और परिस्थिति का भी शब्द-विन्यास पर बहुत कुछ प्रभाव पड़ता है और इसी प्रकार के साधनों से मुहावरों का आविर्भाव होता है।'[1]

मनुष्य थोड़े में अपने भावों को प्रकट करना चाहता है। यही बात भाषा के प्रयोग में कही जा सकती है। अतएव वह ऐसी शब्दावली का प्रयोग करता है जो संक्षिप्त हो। इसीलिए भाषा में मुहावरों का प्रयोग होता है।

किसी भाषा के मुहावरे उसकी विशेष प्रकार की सम्पत्ति होते हैं। वे भाषा को सजाते हैं और उसमें चमत्कार भरते हैं। मुहावरों का प्रयोग लाक्षणिक होता है। वे विशेष अर्थ प्रकट करते हैं। कहावत की तरह मुहावरों का स्वतन्त्र प्रयोग नहीं होता। वह क्रियापद के समान वाक्य में प्रयुक्त होता है।

राजस्थानी भाषा मुहावरों से भरीपूरी है। इन मुहावरों में एक विशेषता यह है कि ये राजस्थानी वातावरण एवं जन-जीवन में से निकल आए हैं। इनकी जानकारी जन-जीवन के साथ एकरस होने से ही प्राप्त हो सकती है। ये मुहावरे राजस्थानी जीवन की एक झलक प्रस्तुत करते हैं। राजस्थानी भाषा की उन्नति हेतु यहां के जनसाधारण के जीवन को समझना जरूरी है।

राजस्थानी कहावतों पर तो काफी काम हुआ है, परन्तु राजस्थानी मुहावरों पर अभी तक कोई काम प्रकाश में नहीं आया है। कई बार साधारण क्रियापदों का प्रयोग भी विशेष अर्थ प्रकट करता है। बावलो (समाप्त होना), [illegible] (दिवाला निकालना), मोटको (अपनी जबान से हटना) आदि प्रयोग वाक्य में बड़ा चमत्कार भर देते हैं। इसी प्रकार राजस्थानी भाषा के कई धातु प्रयोग भी एक साथ नाना-नाना प्रकार के अर्थ प्रकट करते हैं। उदाहरण के लिए— [illegible] आदि प्रयोग इसी प्रयोग में आते हैं। परन्तु इसके अतिरिक्त ऐसे मुहावरों का विशेष महत्व है जो ठेठ राजस्थानी हैं।[2]

मुहावरे राजस्थानी भाषा के रत्न एवं मनोहारी अंग हैं। इनके द्वारा भाषा में सुन्दरता और पुष्टि दृष्टिगोचर होती है। भाषा में मुहावरों का प्रयोग [illegible]

---

(१) 'बोल चाल'—पृ० ११-१७

(२) 'राजस्थानी मुहावरे'—मनोहर शर्मा पृ० १७,१८,१९,२० 'राजस्थानी' जुलाई '३८

जाने के कारण वाक्यों में एक रोचकता आ गयी है और इसका प्रभाव पाठकों के हृदय पर सीधा पड़ता है । रोचक भाषा भावों की अभिव्यञ्जना में कितनी समर्थ होती है यह कहने की आवश्यकता नहीं। जहां भाषा में मुहावरों के प्रयोग से उसमें रोचकता आगयी है वहां इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि उचित मुहावरों के प्रयोग से शैली में माधुर्य, सौन्दर्य और शक्ति आगयी है। इनके प्रयोग द्वारा ही राजस्थानी-भाषा सुसंस्कृत होकर चमत्कृत हो उठी है।

राजस्थानी वातों में मुहावरों की संख्या बहुत ही अधिक है। सिर से पैर तक शरीर का कोई भी अंग ऐसा नहीं है जिससे सम्बद्ध दर्जनों मुहावरे न हों। हजारों की संख्या में उपलब्ध मुहावरे अपनी मौलिकता रखते हैं। सारी वातों के मुहावरों को उदाहरणस्वरूप देना तो स्थानाभाव के कारण असम्भव है अतएव कुछ वातों के मुहावरे उद्धत किये जाते हैं। इन वातों में मुहावरों की संख्या बहुत अधिक है अतः मुख्य-मुख्य ही उदाहरण के लिये चुने गये हैं।

ढोला मारु री वात[1]

झखमार परार जासी--असफल होकर के चले जाना।
मुरड़ि परी ऊठी--गुस्से में बल खाकर।
काग आंण मोड़ै बोलना--किसी महमान के आने की सूचना होना--(यह एक कहावत भी है)।

जलाल-बूबना री-वात[2]

सुणी अणसुणी करना--इस कान सुनकर उस कान से निकाल देना।
उतावळा पांवड़ा देना--तेज तेज कदम चलना।
आंख्या होज फूटगी--देखता नहीं है।
हियो ही फूटियो--विवेकहीन होगया।
जीव टेकयौ-- धैर्य धरा।
आणंदाण फेरी--अधिकार की सूचना दी।
जमपुरी जावे--मर जावे
धड़धड़ी दीवी--शरीर कम्पित करके
अवांई-वाड़-कीर्ण--युद्धार्थ तैयार हो।

(१) 'राजस्थानी वात संग्रह' सं० नारायणसिंह भाटी (परम्परा, भाग ६-७)
(२) — वही —

राठौड़ अमरसिंह गजसिंहोत री बात[1]

पीठ रखी—मदद रखी ।
आगो मता खांचो—बात को आगे मत बढ़ाओ (यह एक बहुप्रचलित मुहावरा है)

महाराजा श्री पदमसिंहजी री बात[2]

काळी-पीळो हुवै—क्रोधित होना ।
चेहरो-सफेद होय गयो—निष्प्रभ होना ।
चौतड़ी तरवारियां री पड़ना—चारोंओर से तलवारों की मार
आफत के धक्के चढ़ना—विपत्ति के मुंह में पड़ना ।

सांई री पलक में खलक[3];

गद-गद कंठ होय—गद-गद कंठ हो जाना ।
फिस पड़िया—द्रवित हो गया ।
छाती भरीज गई—छाती में करुणा उमड़ पड़ी ।
काठ री पुतळा—निर्जीव ।
मुलाहिजो करि—लिहाज करना ।
सत सोळा होय गया—हताश और भयभीत होना ।

सूरे खींवे कान्धलोत री बात[4]

पाछो वातां घातना—टाल मटोल करना ।
नाणो भांजना—पैसे खर्च करना ।
लाहो भरतो आवै छै—चौकड़ी भरती हुई आना ।
आकास नू ठोकर मारतो आवै छै—पर्याप्त ऊंचा कूदना ।
फराको मारना—छलांग मारना ।
काम आ गया—मर गया ।
ललकारिया—चुनौती दी ।
बात समपणी चारणी री[5]

---

(१) राजस्थानी बात-संग्रह—श्री नारायणसिंह भाटी (परम्परा भाग ९-१०)
(२) – वही –
(३) – वही –
(४) – वही –
(५) राजस्थानी वार्ता सं० श्री नरोत्तमदासजी स्वामी

घरे घूंघट काढ़ो—मुझसे विवाह करो।

हय-गय-मय-गय होना—रौनक मुक्त होना।

बात अमीपाल साह री[1]

टांग हेठो निकळो—हार मानना।

बात ऊदे-उगमणावत री[2]

दुडबड़ियां देण लागो—दबाने लगा।

फाइयां छंटाया—आंखें धुलवायी।

बात ऊमादे भटियाणी री[3]

दिलगीर हुयगयो—खिन्न हो उठा।

देवलोक हुवो—समाप्त हो गया।

बात राजा भोज अर खापरे चोर री[4]

माचे में पड़ियो—बीमार होना।

सास तड़कायो—सांस घबराकर।

पग छूटे मे—पग छूटना—घबराना।

उपर्युक्त बातों के अतिरिक्त सैंकड़ों की संख्या में जो बात-भण्डार भरा पड़ा है, उन बातों के प्रत्येक पृष्ठ पर मुहावरे मौजूद है—यहां पर केवल उदाहरण-स्वरूप चन्द बातों के मुख्य-मुख्य मुहावरे ही चुने गये। इन मुहावरों का प्रयोग बड़ा व्यापक है। जीवन का कोई भी ऐसा अंग नहीं है जिसके वर्णन में मुहावरों का प्रयोग न होता हो। हजारों वर्षों से बोल-चाल में बार-बार आने से मुहावरे मनुष्य जीवन के सच्चे साथी बन गये हैं। अन्त में केवल इतना ही कहूंगा कि स्थावर और जंगम जितनी सृष्टि है उन सभी से इन-मुहावरों का सम्बन्ध है और चूंकि भावों की अभिव्यक्ति भाषा है अतएव इतने व्यापक रूप में बसे हुए मुहावरों का साथ भाषा कैसे छोड़ सकती है।

इन उपर्युक्त मुहावरों के अतिरिक्त नीचे हम वनस्पति, पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़ों

(१) राजस्थानी बातां—सं० श्री नरोत्तमदास जी स्वामी।
(२) —वही—
(३) —वही—
(४) —वही—

से, जातियों से, वस्त्रादि से, लोक-जीवन से, शरीर के विभिन्न अंगों से, पानी से—सम्बन्धित मुहावरों की एक तालिका प्रस्तुत करते हैं जिससे राजस्थान के घर-पचर, प्रकृति का पता सहज में लगा सके —

राजस्थानी वनस्पति की एक झलक प्रस्तुत करने वाले मुहावरे—
आक सींचणो—उपयोगहीन स्थान पर व्यय करना।
खड़े खेजड़ो देश काढणो—उतावली में काम करना।
आंठे ताई चावणो—अन्तिम स्थिति तक अनुभव करना।
केरिया बिखरणो—यौवन का रंग उड़ना।
काकड़ियो काडणो—लाभ प्राप्त करना।
बड़ में बोलणो—बोलसूँ पीपळ में बोलणो—प्रसंग छोड़कर बात करना।

इससे आगे राजस्थानी पशु-पक्षी आदि जीवों से सम्बन्धित मुहावरे देखिए :-
मोर होणो—प्रसन्न होना।
कागला काळा करणो—विशेष काम करना।
भैंसा के सिर कीड़ा गेरणो—उत्पात करना।
कुत्ती के पाग गाडो चालणो—स्वयं ही अपने व्यक्तित्व को महत्व देना।
पथा-खाज करणो—लेने-देने का बदला चुकाना।
खड़े ऊंट पर चढ़णो—कठिन स्थिति में डालना।
भैंस ऊरता दांत होणो—अनिश्चित की स्थिति में होना।
कांटां की झाड़ में फंसणो—किसी वस्तु विकट में फंसना।

घरेलू वस्तुओं से सम्बन्धित मुहावरे प्रस्तुत है :—
सोने का स्हैल दिखाणो—झूठी बातों का विचार करना।
तकियो सिरहाणे धरकर सोणो—दरिद्र होना।
बिन बूंटिए में उतरणो—पागल होना।
गुदड़े में गुड़ फोड़णो—छिप कर काम करना।
काठ देख घड़ो फोड़णो—झूठी बात पर काम करना।
छाज चाल चालणो चालणो—नष्ट करना।
बाढ़ फिरणो—बहुत बड़ी दशा में होना।

पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित मुहावरे राजस्थानी जन-जीवन का एक चित्र उपस्थित करते हैं :—

सासू आगली भू होणो—अधिकारहीन होना।
जेठ कै रहारे बेटी जलमणो—दूसरे की आशा पर कोई काम करना।
बेटे-बेटी को नाव खोलणो—कोई बात स्पष्ट करना।
नानी कै जाणो—आसान काम करना।
सालियां छोड़ सासू सैं मसकरी करणी—वयोवृद्ध लोगों से मजाक करना।

जातियों से सम्बन्धित मुहावरों की रोचकता निराली होती है :—
बाणिए हाळो बावळी पैरणो—झूठा बहाना करना।
सुनार आगै सुई बेचणो—स्थान पर चालाकी करना।
खाती कै बांए हाथ होणो—महत्वहीन होना।
रावळे जीमणो—दूसरों पर मौज करना।

जनसाधारण के वस्त्रादि से सम्बन्धित मुहावरे। :—
दोनूं हाथां लाडू राखणौं—दोनों तरफ लाभ उठाना।
आटै लूण समातो खाणो—साधारण लाभ उठाना।
एक चणो दो दाळ होणो—अलग अलग होना।
एक दांत की रोटी टूटणो—गहरा प्रेम होना।
कढ़ी बिगाड़णो—काम बिगाड़ना।
जूती सीधी करणो—सेवा करना।
पराया गाबा पैरणौं—दूसरे के इसारे पर बढ़-बढ़ कर बोलना।

राजस्थानी लोक जीवन का चित्र उपस्थित करने वाले विशेष मुहावरे बड़ी संख्या में प्रचलित हैं :—
डरता गूगो धोकणो—डर कर कोई काम करना।
हरी डाळो भाणो—खर्चा आ पड़ना।
सांमर सूनी होणो—किसी के बिना काम न चलना।
केड़ के होणो—वंशज होना।
तागो लेणो—स्थिर निश्चय लेना।
बीड़ो चाबणो—किसी काम को अपने ऊपर लेना।
आळो धोरो चालणो—साधारण कमाई होना।
झाड़ बोर्आं कै दारकै फिराणो—स्पष्ट बात प्रकट न करना।

मानव शरीर के विभिन्न अंगों से संबंधित मुहावरे :—
१५. सैं छान उतरणो—बोझ उतरना।

न्याय की कहानी।

ओम्यां पछै चळू होणो—काम पूरा होने पर स्थिति में परिवर्तन हो सकना। भूखे राजपूत की कहानी।

ठगां कै ठग लागणो—चालाक आदमी का ठगा जाना।—ठगों की कहानी।

ढक्या ढकण उघाड़णो—रहस्य प्रकट करना। —शिव-पार्वती की कहानी।

भाव की भाव बेचणो—अपनी तरफ से कुछ न करना। —चोर की कहानी।

सासै हाळो कामां बहणो—समय निकल जाना। —सासंजी की कहानी।

तूं पी—तूं पी करणो—बाहरी बात में समय निकालना। —गीदड़ और उसकी स्त्री की कहानी।

मूंजरै कै मारे मरणो—झूठी बड़ाई में कष्ट सहना।—दो कुत्तों की कहानी।

जात जाणणो—जाति स्वभाव प्रकट करना।— भंगी के लड़के की कहानी।

म्याऊँ को मूंडो पकड़णो—खतरे का सामना करना। बिल्ली और चूहों की कहानी।

इन के अतिरिक्त ऐसे मुहावरे राजस्थान में काफी मात्रा में प्रचलित हैं, जो एक प्रकार की विशिष्टता सूचित करते हैं। इन मुहावरों के पीछे भी कोई न कोई प्रसंग अथवा कहानी रहती है, जिसकी ओर ये इशारा करते हैं। ऐसे मुहावरों का अर्थ भी प्रसंग के बिना प्रकट नहीं हो सकता है ये मुहावरे बड़े महत्वपूर्ण होते हैं। [1]

उपर्युक्त दिये गये मुहावरों के अतिरिक्त सैकड़ों की संख्या में जो बात-भण्डार भरा पड़ा है, उन बातों के प्रत्येक पृष्ठ पर मुहावरे मौजूद हैं। यहाँ पर केवल उदाहरण स्वरूप ही कुछ मुहावरे कतिपय बातों से लिये गये हैं। इन मुहावरों का प्रयोग बड़ा व्यापक है। जीवन का कोई भी ऐसा कार्य नहीं है जिसके वर्णन में मुहावरों का प्रयोग न होता हो। हजारों वर्षों से बोल-चाल में बार-बार आने से मुहावरे मनुष्य जीवन के पक्के साथी बन गये हैं। अन्त में केवल इतना ही कहूँगा कि स्थावर और जंगम जितनी सृष्टि है उन सभी में इन मुहावरों का सम्बन्ध है। और चूंकि भावों की अभिव्यक्ति भाषा है अतः एव इसके व्यापक रूप में समाये हुए मुहावरों का साथ भाषा कैसे छोड़ सकती है।

१— 'राजस्थानी मुहावरे'—श्री मनोहर शर्मा। ('मरु भारती' पूर्णांक १८) पृ० १७, १८, १९, २० से २४।

अध्याय / ७

राजस्थानी वातों में लोक-जीवन

वीर-भूमि राजस्थान और उसकी प्रजा के जीवन की वास्तविक झांकी अगर हमें देखनी हो तो वात-साहित्य की शरण में जाना पड़ेगा। चूंकि साहित्य समाज का दर्पण होता है अतएव राजस्थानी निवासियों की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं धार्मिक स्थिति का दर्पण वात-साहित्य ही है। इस दर्पण में हम यहां के निवासियों के रहन सहन, वेश भूषा, खान पान, उत्सव, त्यौहार आदि का प्रतिबिंब भली-भांति निहार सकते हैं। लोक-साहित्य ही एक ऐसा साहित्य है जिसमें संस्कृति का सच्चा तथा स्वाभाविक चित्रण उपलब्ध होता है। लोक जीवन के वास्तविक स्वरूप को देखने के लिए हमें इसी साहित्य का अनुसन्धान करना होगा। ग्रामीण वात लेखक ने समाज में जिस समता या विषमता का अनुभव किया है उसका उसी रूप में चित्रांकण भी किया है। पारिवारिक जीवन के जो मर्मस्पर्शी दृश्य यहां उपलब्ध हैं, उसके दर्शन अन्यत्र कहां ? ऐसा ज्ञात होता है कि जन-जीवन को चित्रित करने वाले 'चतुर चितेरे' ने बड़े संयम से अपनी तूलिका का प्रयोग किया है। समाज के सुन्दर तथा दिव्य दृश्यों का चित्रांकन करने में उसकी तूली उतनी ही सफलीभूत दिखाई पड़ती है जितनी भौंड़े तथा भद्दे चित्रों के प्रदर्शन में। इस साहित्य में जहां आदर्श पतिव्रता नारियों का उल्लेख है वहां पथभ्रष्ट नारियों का भी जिक्र आया है। जहां प्रजा और राजा का दिव्य प्रेम दिखलाया गया है वहां जागीरदारों के अत्याचारों एवं ग्रामीणों के साथ कटु एवं [illegible] का वर्णन भी है। राजपूत वीरों का अपनी मातृभूमि के [illegible] दिव्य प्रेम

का वर्णन करने के लिए जोभी विशेषण प्रयुक्त किया जाय वह थोड़ा है। जहां इन देश भक्तों का नाम स्मरण करते ही हमारे रोम-रोम खड़े हो जाते हैं वहां ऐसे गद्दार भी हैं जिन्होंने अपने ऐश्वर्य को कायम रखने के लिए खुशी-खुशी विदेशियों और यवनों को अपना राज्य सौंप दिया। कहने का तात्पर्य यही है कि इन वातों में जन-जीवन के उभय पक्षों--सुन्दर तथा असुन्दर--को हमारे सामने प्रस्तुत किया है। इसीलिये यह वात-साहित्य राजस्थानी समाज के सच्चे दृश्य को स्वाभाविक रूप में उपस्थित करने में सफलीभूत हुआ है।

सामाजिक-जीवन के वर्णन के साथ-साथ इन वातों में लोगों के धार्मिक-जीवन का चित्रण भी पाया जाता है। व्रत उपवास आदि धार्मिक वातों में कहीं सूर्य की पूजा उपलब्ध होती है तो कहीं शीतला माता की वात कही जाती है-कहीं तारों की वातें कही जाती हैं तो कहीं देवी-देवताओं से सुखी-जीवन, पुत्र-कामना आदि की प्रार्थना की जाती है। गणेशजी, राम, कृष्ण, शिवजी, गोगाजी, रामदेवजी, शीतलामाता आदि दैवी-देवताओं की वातों की संख्या भी कुछ कम नहीं हैं। मंगल कामना की याचना अपने देवताओं से की गयी है।

जहां इन वातों में यहां के लोगों की सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति का सम्यक् वर्णन आया है वहां इस-साहित्य में सामान्य जनता की आर्थिक परिस्थिति का चित्रण बड़ी सुन्दर रीति से किया गया है। एक ओर बादशाहों, राजाओं, जागीरदारों और सेठ-साहूकारों आदि के ऐश्वर्य का चित्र उपस्थित किया गया है उनके सुन्दर वस्त्र, बढ़िया स्वादिष्ट भोजन, आलीशान भवन आदि वैभव को प्रगट करने वाले तमाम चित्र उपस्थित हैं। वहां दूसरी ओर साधारण किसान की गरीबी, फटी हुई ऊँची-ऊँची धोती—सात टुकड़े लगाये हुए-कमीज, हाथ में हल और बैलों को साथ लेकर खेत की ओर जाते हुए शोषित किसान—का वर्णन पाठकों एवं वात-श्रतीओं के हृदय को अपनी ओर बरबस आकर्षित किये बिना नहीं रहता।

मेरा कहने का तात्पर्य केवल इतना ही है कि वात साहित्य में सामान्य जनता की सामाजिक धार्मिक तथा आर्थिक परिस्थितियों के दोनों पक्षों का रमणीय चित्रण उपलब्ध होता है। उदाहरण के लिए :—

"वात साचो फूलाणी री"[1] में मध्य युग के राजपूत काल की सच्ची तस्वीर

---

१ कँ रे बरसा वात—रानी लक्ष्मी कुमारी चूडावत। पृ० १ से ८।

ले सकते हैं। उस युग में बाप को मारने वाले से बेटे का प्रतिशोध लेना पवित्र कार्य समझा जाता था। और यह भी एक मान्यता थी कि प्रतिशोध लिए बिना न तो इस लोक में कोई स्थान है और न परलोक में। लाखा, अपने बहनोई को मारकर उसका तेज चलने वाला पालीपन्धा अपने अधिकार में कर लेता है। अपने बहनोई के पुत्र राखायच को लाखा अपने पास रखकर पुत्रवत उसका पालन करता है। बड़ा होने पर राखायच अपने पिता का प्रतिशोध लेने के लिए अपने मामा लाखा से कहता है। इस पर उसका मामा उसके उत्साह की प्रशंसा करता है। युद्ध होता है और दोनों ही युद्ध में काम आजाते हैं।

"पंचमारी बात" [१] – में एक निर्धन और साहसहीन राजपूत के चरित्र के मिस भाग्यवादिता और अवसर अनुकूलता पर प्रकाश डाला गया है। मनुष्य का अगर भाग्य साथ देता है तो वह अगर बुरा काम करे तो भी अच्छा हो जाता है–इसी संयोगवश सफलता की यह बात है।

'बंधी बुहारी की बात' [२] —इस बात में थोड़ी सी अश्लीलता अवश्य है किन्तु उस समय की वचन प्रतिबद्धता को निभाने का वर्णन बड़ा सुन्दर बन पड़ा है। पति परदेश चला जाता है, वह एक दीर्घकाल को विदेश में ही बिताता है। वह केवल अपनी पत्नी से इतना कहकर जाता है कि अगर काम की इच्छा जाग्रत हो तो आध कोस दूर टट्टी बैठने को जो जाता हो, उस पुरुष को बुला-लेना। उसकी स्त्री अपने चातुर्य से इस वचन को निभाती है।

'साहूकार री बात' [३] में 'अनमोल विवाह' और 'दूबवर' तथा पूर्व स्त्री के लड़कों की ज्यादती के द्वारा, आये दिन समाज में घटने वाली घटनाओं पर सीधी चोट की गई है। यह बात समाज के चरित्र पर पूर्णतया प्रकाश डालता है।

"राजा रा गुरु रा बेटा री बात" [४] —में त्रिया चरित्र का उल्लेख किया

१ राजस्थानी बातां—स. सौभाग्यसिंह शेखावत। पृ० १ से २१।
२ " " " " " । " २४ से ११।
३ " " " " " । " ३१ से ६७।
४ " " " " " । " ६८ से ८२।

गया है। उस समय धर्म के ठेकेदार पंडित कहलाने वाले एवं समाज सेवी किस प्रकार चरित्रहीन होते थे—प्रबला स्त्रियों को किस प्रकार तंग किया करते थे इसी बात का चित्रण इस बात में हुआ है। अवसर आने पर अबला कहलाने वाली स्त्री ने पंडिताई का बोझ लिये फिरते पंडितों के हाथ सीधे कर दिये।

"वात ग्रात सुभाव री " [1] में एक राजा और रानी की संत-सेवा भावना का महिमा का उपकथाओं के जरिये वर्णन किया गया है और भारतीय दर्शन द्वारा सम्मत पूर्वजन्म के कर्मानुसार फलादेश की व्याख्या की गई है। भारतीय चिन्तनधारा पूर्वजन्म और कर्मफल के सिद्धान्त से अत्यधिक प्रभावित है और यह राजस्थानी वात भी इसी चिन्तन धारा का कथामय रूप है।

"वात कपूत कुंवर री "[2] में राजपूतों में जो शासन की लिप्सा होती है उसी का वर्णन आया है। राजकुंवर राज्य को अपने हाथ में लेने के लिए अपने पिता को मारने की युक्ति सोचता है। वह नाई को अपने पिता की हत्या करने के लिए तैयार कर लेता है किन्तु अन्ततः उसकी पोल खुल जाती है और वह राज्य पाने के बजाय राज्य से निष्कासित कर दिया जाता है।

उस समय में प्रचलित यह विश्वास कि 'आंखांलागण के असर' से ही मनुष्य की प्रकृति वैसी हो जाती है का चित्रण। 'वात आंखां लागण री" में आया है। जिस समय स्त्री गर्भवती होती है और वह जिस मनुष्य का मुंह देख लेती है वैसे ही गुण और प्रकृति उसके पुत्र व पुत्रियां लेकर जन्म ग्रहण करते हैं।

"भले भलो बुरे बुरो री वात"—में यह विश्वास प्रकट किया गया है कि भले का अन्त भले ही में होगा और बुरे का अन्त बुरा ही होगा। चूंकि लोग उस समय धर्म भीरू होते थे अतएव उनका यह विश्वास अन्त भले का भला बुरे का बुरा अत्यन्त मान्यता प्राप्त था।

"चामर नार" में ठगों का जिक्र आता है। उस समय मध्यकालीन अवस्था में

१ „ „ „ भवानी शंकर उपाध्याय। „ २४ से ३२।
२ „ „ „ „ „ । „ ५२ से ५६।

ठगी का बहुत जोर था। समाज में अधिकतर लोग ठग ही होते थे। गांव ही पूरा ठगों का होता था—और आने जाने वाले सम्पन्न यात्रियों को ठगना ही उनका पेशा होता था। चूंकि लोक-साहित्य समाज का दर्पण होता है अतएव इसके अनुसार यह बात किसी समय देश में फैली हुई और बढ़ी हुई ठगी की ओर संकेत करती है।

"अनोखा कंवरजी" इस बात में एक जोगी का जिक्र आता है। उसके अपना डंडा फटकारते ही दो गुलाम भूत हाजिर होते और उनसे वह मन मानी, बुरी भली चाकरी लेता, वे गुलाम भूत दुःखी हुये उसके बुरे भले हुक्म की तामील करते। हमारे समाज में इस प्रकार के अन्धविश्वास सदियों तक प्रचलित थे।

'राजा सिधराज जैसिंघ री बात'—राजा सिद्धराज जैसिंह देव गुजरात के पाटन राज्य के राजा थे। उनके भानजे कुमार पाल ने किस भांति राज्य को प्राप्त किया और जैन जाती और मुसलमान पीर के जन्त्रों-मन्त्रों का वर्णन इस बात में आया है। यह राजा १२वें सदी के मध्यवरी के राजों में से हुआ है—उस समय ग्राम समाज को मंत्र-जादू-टोटकों पर कितना विश्वास था, जैन जातियों का कैसा असर था—इन सब बातों का वर्णन इस बात में मिलता है।

"लालमण कुंवर री बात"—गोरखनाथ जी के श्राप और इन्द्र के आशीर्वाद के साथ बात शुरू होती है। कहानी में उस समय के लोगों के रहन-सहन राज दरबार, कुवे-बावड़ियां, चौपड़-पास खेलने की प्रवृति आदि का पता लगता है। कहानी का अन्त सुखमय ही होता है और प्रारम्भ भी सुखमय होता है।

इस प्रकार उस समय में प्रचलित अन्ध विश्वास का पता सहज ही में लग जाता है। ये अन्धविश्वासी लोग भूत-प्रेत, शकुन, स्वप्न, आकाशवाणी, जादू-टोना आदि कितनी ही अलौकिक बातों पर विश्वास किया करते थे।

जहां इन बातों में समाज के सारे अंगों का चित्रण करते हैं वहां हम प्रेम के रूप को नहीं भूलते। आधुनिक वासनामय प्रेम का रूप उस समय नहीं था—एक सात्विक प्रेम का रूप उस समय का हमें मिलता है। 'ढोला-मारू री बात'

और मंगत जन भार चारण सारा मुंहड़ा आगै बैठे जीमै और रांधियो कोरो सरर वटै। उण बखत भुजाई में छप्पन भोग. छत्तीस व्यंजन सगळो साथ अेक सरीखो भोजन हुवै। जिण नूं कठै ही मिळै नहीं सो उण बखत भुजाई में बनाल री रहवास आवै सो मनमानियां भोजन जीमैंय जीमियां पछै पान सुपारी सारां नू देवे। इण भांत आरोगै, वळै पाछो चौकीखानै आय वेसै।

एक और गोठ का अन्य वर्णन निहारिये :—

'दर राव फुरमायो—आज अठै गोठ हुवै सो सगलां रो शोक आजै। आदमी जिनस रै पर्गां सहूर–मेलिया। आटे, चावल, बेसण, खांड, घिरत, दारू रा घट, बाकरा बीजो ही सारी वस्तु वासण देगचा परवा सगला ही मंगाया।"

सामन्ती जीवन के विपरीत राजस्थानी किसान का जीवन बड़ा सीधा-साधा और सरल होता है। वह थोड़े में ही सन्तोष कर लेता है। किसान का संसार न्यूनतम आवश्यकताओं से बना हुआ है। वह अपने समाज के नियमों का पालन करता हुआ उसे अन्ध विश्वासों में जीवन को खोता हुआ मर जाता है उन विश्वासों क उनके पुरखों ने जन्म दिया था।

जहां किसान अपनी सामाजिक स्थिति में इतना घिरा रहता है वहां वह धर्म-भीरू भी होता है। क्या गरीब, क्या धनवान, क्या जागीरदार, क्या राजा, क्या साधारण पुरुष–सभी धार्मिक प्रवृत्त के होते हैं। इन बातों में उस समय की सामान्य जनता की धार्मिक परिस्थिति का चित्रण उपलब्ध होता है। यद्यपि नयी सभ्यता के कारण प्राचीन धारणाओं और विश्वासों में परिवर्तन होने लगा है परन्तु लोक-जीवन की संस्कृति की सरिता आज भी अपनी अबाध गति से प्रवाहित हो रही है। ग्रामीण स्त्रियां आज भी उसी प्रकार से व्रत रखती हैं। और अपनी अभिष्ट कामनाओं की सिद्धि के लिए देवताओं की पूजा करती हैं जिस प्रकार से प्राचीन काल में की जाती थी। पुरुष समाज भी अपनी धार्मिक भावनाओं को संजोकर थाती के समान सुरक्षित रखे हुए है। यही कारण है कि भारत में क्या क्या राजस्थान में अनेक राजनीतिक उथल-पुथल हुए किन्तु हमारी धार्मिक भावना वैसी की वैसी बनी रही उसमें किंचित परिवर्तन नहीं हुआ। फलस्वरूप इन बातों जनता के धार्मिक जीवन का सजीव चित्रण अंकित किया गया है।

लोक-वार्तों में विभिन्न देवी-देवताओं की पूजा का वर्णन आया है। जिनप्रधान देवताओं की पूजा का वर्णन या उल्लेख पाया जाता है उनमें शिवजी सबसे अधिक प्रचलित हैं स्त्रियां षष्ठी माता की पूजा कार्तिक मास में किया करती हैं। यह वास्तव में सूर्य की ही उपासना है। पुत्र अभिलाषिणी स्त्रियां प्रत्येक सवेरे भगवान सूर्य को अर्घ्य दिया करती हैं। राजस्थान में अधिकतर हनुमान और भैरव (भैरूंजी) अधिक प्रसिद्ध है। इन धार्मिक कथाओं में पुत्र की प्राप्ती, धन का लाभ तथा बच्चे के स्वास्थ्य की कामना के निमित्त माताजी, हनुमान जी, गणेश जी, भैरूं जी, सत्यनारायण जी आदि देवताओं की अनेक मनौतियां मनाई जाती हैं। भूत-प्रेत की पूजा का उल्लेख भी अनेक स्थानों पर मिलता है।

व्रत कथाओं में धर्म के अनेक गूढ़ रहस्य छिपे पड़े हैं। समाज में मनु के वचनों एवं आदर्शों का प्रभाव भले ही न पड़े परन्तु इन व्रत कथाओं का प्रभाव अवश्य पड़ता है। इन व्रत कथाओं में —तिलक महाराज री का'णी, मास माजारी वात, गणेश भगवान रो वात, शरद पूर्णिमा का व्रत, चौर छट की वात, ऋषिपंचमी व्रत, एकादसी व्रत, नोरातरी व्रत, महालक्ष्मी जी का व्रत—आदि अनेक वार्तें आती है।

इन व्रत कथाओं के अलावा सात वारों की—सोमवार, मंगलवार, बुधवार ब्रहस्पतिवार, शुक्रवार, शनिवार और रविवार—वार्तें भी कही गयी हैं। ग्रामीण समाज हर एक आदमी एवं औरत अधिकतर इनमें से किसी न किसी वार का दिन व्रत अवश्य ही रखते हैं। इन सब कथाओं का मूल रूप एक ही होता है। प्रत्येक वात के अन्त में कल्याण की कामना प्रकट की गयी है। शीतला-माता चेचक की अधिष्ठातृ देवी मानी जाती है। अतः इसका आह्वान इस रोग से पीड़ित बालक को निरोग करने के लिए किया जाता है।

देवी देवताओं की वार्तों के अतिरिक्त अवतारों एव इनके भक्तों की वार्तें भी प्राप्य हैं जिनकी पूजा प्रत्येक घरों में होती है। ध्रुव प्रह्लाद आदि की जो वार्तों आयी है वे इसी बात की ओर संकेत करती हैं कि उस समय समाज में इन भगवान के भक्तों की मान्यता थी। इसके अलावा गोगाजी, वीरमदेजी, पाबूजी, रामदेवजी, करणीजी आदि लोक-जीवन के देवी देवता हैं। इनकी मान्यता भी

शिव, पार्वती, राम, कृष्ण, गणेश, लक्ष्मी, भैरूजी हनुमान जी आदि धार्मिक देवताओं से कम नहीं है। सर्प, बिच्छू, बांडी आदि विषैले प्रकृति के पशु के काट जाने पर या घरों में निकलने पर इन लोकदेवताओं के प्रसाद चढ़ाया जाता है और ऐसी दृढ़ मान्यता भी है कि इनके प्रसाद चढ़ाने पर सर्प, बांडी, बिच्छू आदि जहरीले जानवर फिर नहीं निकलते है। रामदेवजी के लिए तो यहाँ तक दृढ़ मान्यता है कि वे अंधे आदमी को आँखें प्रदान करते हैं। इसी प्रकार के अन्य धार्मिक विश्वास भी इस लोक-जीवन में समाये हुए हैं। इस धार्मिक जीवन की झाँकी से पता लगता है कि उस समय के लोक-जीवन में धर्म कितना व्याप्त हो गया था। धार्मिक-भावना बहुत ही दृढ़ थी। लोक-जीवन धर्म से ओत-प्रोत है जिसका दर्शन इन वातों में सर्वत्र पाया जाता है। धार्मिक वातों के अतिरिक्त भी प्रत्येक वात में किसी न किसी रूप में धर्म का अंश अवश्य ही प्राप्त होता है। इन वातों से हमें पता लगता है कि जन जीवन किन-किन देवी-देवताओं की पूजा करता है, उनकी प्रसन्नता के लिए कौन-कौन से उपाय करता है तथा पूजा में जो जो विधि-विधान सम्पादित किये जाते हैं उन सबका वर्णन यहां पाया जाता है।

वातों में साधारण जनता के सामाजिक एवं धार्मिक जीवन के चित्रण के साथ साथ ही आर्थिक पक्ष का चित्रांकन भी उपलब्ध होता है। जहाँ ग्रामीण जीवन में सुख और समृद्धि का सागर हिलोरें मार रहा है वहां घोर निर्धनता, हीनता और दीनता का बीभत्स कंकाल सामने दिखाई पड़ता है। जहां देहात की दुनियां में धन-धान्य और वैभव का साम्राज्य दिखाई पड़ता है वहां दुःख, गरीबी, और भूख का भैरव नाद भी सुनाई पड़ता है। जहां राजाओं के आलीशान महलों उनके सोने के बने जेवरातों हाथियों घोड़ों आदि प्रकार के वैभव का पता मिलता है वहां टूटी हुई खाट और टपकते हुए छप्पर एवं टूटी फूटी थालों का मर्मस्पर्शी चित्रण भी हमारे हृदय को आन्दोलित कर देता है। मेरा कहने का तात्पर्य केवल इतना ही है कि सुख-दुःख, आशा-निराशा, विलास-वैभव और दैन्यदीनता के उभय पक्षों का वर्णन इन लौकिक-वातों में पाया जाता है जो लोक-जीवन के आर्थिक पक्ष की ओर संकेत करता है। एक निर्धन का चित्रण निहारिये :—

"ऊँचो तो एरंड, खाटरो तो हि नाग, घणो मानो सांडु, बहु बोल तो लबोल। पशु जीमे तो भूखो, थोड़ो जीमे तो धमोसियो। भला वस्त्र पहिरे तो इतर, सामान्य पहिरे तो दरिद्री। गोरो तो पांडु रोगियो, कालो तो कवाड़ो। उतारो

तो महङ्ग बोलै तो सर्वधन बाह्य, विषय होन तो नपुंसक ।"
यहीं पर एक धनी का वर्णन भी आया है :—

"ऊँचो तो अर्जुन बाहु, वामनो तो वासुदेव, गोरो तो कंदर्प, कालो तो कृष्ण, घणो जीमे तो अहारी, थोड़ो जीमे तो पुण्यवंत, ऊँचा वस्त्र पहिरे तो राजेश्वर, सामान्य पहिरे तो सूमो, दाता तो कर्णावतार, जो न दे तो छता पुण्य करइ, घणो बोले तो मोमो, न बोले तो मितभाषी ओ लंगट तो भोगी, जो नपुंसक तो परनारी सहोदर ।"

कहने का तात्पर्य यह है कि समाज में कितना भेद-भाव है कि एक गरीब जिस काम को करता है तो वह बुरी नजर से देखा जाता है-अगर वह ठीक कपड़े भी पहिनता है तो आलोचना का पात्र बन जाता है और अगर एक धनवान जो कुछ भी करे इज्जत की दृष्टि से देखा जाता है—अगर वह कंजूस है तो उसकी महानता को दर्शाया जाता है । इस प्रकार के अन्य बहुत से उदाहरण हैं जिससे समाज की पैसे के कारण हुई विषम स्थिति का पता सहज ही में लग जाता है।

गरीबी के कारण, अकाल पड़ जाने पर या अन्य निर्धनता के कारण हुई स्थिति से तंग आकर गरीब जन अपना गांव छोड़ कर अन्यत्र कमाने के लिए जाते हैं। पीछे उस गरीब की बीबी-बच्चे रह जाते हैं उनको कौन संभाले यह समस्या उन विचारों के साथ हर समय उपस्थित रहती है फिर भी वह इन बातों की परवाह न करते हुए उजड़े हुए घर को फिर से बसाने के लिए सुखी सम्पन्न परिवार का स्वप्न देखते हुए ग्रामीण कमाने के लिए शहर जाते हैं। एक राज-पूत स्त्री अपने पति से अपनी घर की गरीबी का वर्णन करती हुई अपने पति से कमाने के लिए परदेश जाने का कहती है :—

"एक राजपूत कामिए देस में रहै । म्हे घरां रै मढ़ा मांई । जठै राजपूताणी रजपूत है ज्यों । राज पारै तो घरवो पावै । पर थे कठै चाकर हो तो था नै चाकरी रो जावणो नहिं । चाकरी जावा रै तो घोड़ो चाहै । काठा चाहै । हथियार चाहै । चाकर चाहै । इनरो पावणो म्हन नहिं । थारी घरावी पाणी [illegible] नहीं । पर आज [illegible] छै । [illegible] । ओ [illegible] घोड़ो [illegible] । काड़ा लेवा । हथियार [illegible] । [illegible] चाकरी करजो ।"

इसी प्रकार के अन्य और भी विवरण हैं जो उस समय की आर्थिक स्थिति का चित्र हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं। आर्थिक वर्णन के अतिरिक्त एक साधारण

किसान की हालत बहुत गिरी हुई होती है। गांवों में गरीबों के लिए न रहने को झोंपड़ी है और न पहनने को कपड़े। ग्रामीण लोग थोड़ी-थोड़ी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तड़प-तड़प कर रह जाते हैं। उनके अरमान दिल में ही रह जाते हैं। जन-जीवन से सम्बन्धित सामाजिक वार्तों में आर्थिक स्थिति का वर्णन दर्पण की तरह है जिसे जब चाहे उठाकर देख सकते हैं।

इस प्रकार ऊपर हमने लोक-जीवन से सम्बन्धित समाज की प्रत्येक स्थिति का वर्णन किया है। जहां इस समाज में साधारण नर-नारी का वर्णन आया है वहां ऐतिहासिक वीर पुरुषों का चित्रण भी कैसा होता था–इसका पता हमें ये वार्ते ही देती हैं। उनका रहन-सहन, उनका युद्ध करने का तरीका, उनके उस समय में काम आने वाले अस्त्र-शस्त्र आदि का वर्णन इन वातों में मिलता है।

उस समय के वीर राजपूत कसूमल और केसरिया, हरी, सबज, सपतालू, सोसनिया, नारंगिया और सफेद आदि रंग की पोशाकें धारण किया करते थे।

उनके तरवार, कटारी, छुरी, तरकश, बंदूक, बरछी, गिलोल, गोफण चूकमार और भी अन्य अन्य प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों को वे अपने युद्ध के समय काम में लेते थे। एक जगह ढाल का वर्णन आया है–कितना सजीव है यह वर्णन :—

"इठा उपरांति करि नै राजान सिलावति भनरा मांहे ढाला घलीबंध छूटे छै। सु किसा भांतरी ढालां सुध गैंडो धणांरी मारी बधै. सुहरतीलो रंग लागै, तीर, तरवार, कटारी, बरछी, दावो नहीं. सूमररी दातरड़ो लागै तो खरड़ कनै ऊतरै। गोली लागै तो उछल नैं पाछी पड़े. सोनहीरी फूलां नरमोफूलां मुसमलरी गादी कांतियां, सोबरा हयवासां. कुलगांरी डाबी सहित ऊपांम राजानांरा हाथांरी ब्यांहोज बड़ा नैं पीवसांरीमा सालां मूं नामसियां।

वहां इन हथियारों का वर्णन मिलता है वहां गोली, बन्दूक, तोपों आदि का वर्णन भी मिलता है। अधिकांशतः जहां पर मुसलमानों और राजपूतों में युद्ध हुआ है वहीं पर ही तोप, भालों, एवं बन्दूकों का काम में लिये जाने का पता लगता है। इनका सारा जीवन ही युद्धक्षेत्र में ही समाप्त होता था। एक राज्य को जीतने के पश्चात् दूसरे राज्य पर अधिकार करने की कामना लिए वे वीर जीवन-भर युद्ध में ही व्यस्त रहते थे। रणक्षेत्र में वर्णन देखिये :—

"परमसिंहजी रणखेत में बैठा छै। इनरै दरबार री दीवी,

ही लप–झड़प मारी सो वागे रा दोर हाथ में आया, सो खांच लियौ। तीसूं मुंहडे आडे आण पड़ियो। जद आप एक दोय कटार मारी सो काम सारो सीझ गयो। आप पण उणरे ऊपर ढह पड़िया। दिखणीं दोडियां सो जादूराय नूं खींच, काढ़ हाथी रै होदे मांहीं नूं थान परा लेय गया।"

इसी भांति राजपूत वीरों का जीवन ऐतिहासिक वातों में चित्रित किया गया है। मध्यकालीन युद्ध स्थिति का अगर सच्चा राजस्थानी चित्रण हमें देखना हो तो इन वातों को खोलकर देखना होगा।

जहां इन वीरों के शौर्य के दर्शन हमें होते हैं वहां सतीत्व की रक्षा करती हुई पतिव्रत धर्म का पालन करती हुई स्त्रियों के चरित्र भी हमारे सामने आते हैं। सतीत्व की रक्षा के लिए स्त्रियों ने किन किन कष्टों को नहीं उठाया। इन्होंने अपनी कञ्चन काया को धधकती हुई आग में जलाकर जौहरव्रत के द्वारा अपने सतीत्व का जौहर दिखलाया, प्रत्यक्ष जल समाधि को लेकर अपने कुल को कलंकित होने से बचाया, दुराचारी आततायियों को छलकर अपने पतिव्रत धर्म की रक्षा की और अनेक कष्टों तथा यातनाओं को भोगते हुए भी अपने पवित्र पथ से विचलित नहीं हुई। 'राजा रा गुरु रा बेटा री वात" एक ऐसा ही उदाहरण है जिसमें समाज के ठेकेदार एवं पंडित लोग जो समाज में देवताओं की तरह पूजे जाते हैं उन्हीं के द्वारा एक अबला पर अत्याचार करने और उसके द्वारा अपने सतीत्व की रक्षा करने का वर्णन मिलता है। ऐसी स्त्रियों ने संसार की सम्पदा को अपने पैरों से ठुकरा दिया तथा संसार की कोई भी शक्ति इनको अपने चांदी सोने के चुंगल में नहीं फंसा सकी। 'साहूकार री वात, 'जसमा ओडणी री वात' आदि ऐसी वातें हैं जिनमें प्रलोभन देने पर भी नारी ने अपने को पर पुरुष के हाथ समर्पित नहीं किया। रानी पद्मिनि के चरित्र से कौन परिचित नहीं है जिन्होंने अपने आततायी मुगल बादशाह से अपना पिण्ड छुड़ाकर, अपने प्राणों को निछावर कर, दिव्य चरित्र का परिचय दिया। राजपूत स्त्रियां जौहरव्रत धारण करने को कितनी लालायित रहती थी। अपने पतियों को हँसते-हँसते युद्ध क्षेत्र में भेज देती थी। उनकी कामना यही रहती थी कि मेरा पति युद्ध में च हे भले ही काम आ जावे परन्तु हार कर न लौटे। जौहर–व्रत धारण करने का एक उदाहरण देखिये :—

"तद पताई रावळ नूं—खबर हुयी-जुगद पलटयो-तद पताई रावळ भीतर राणियां नूं घर बीजें ही जनाने नूं कहयो नूं थे जूहर करो।

तर राणियां कह्यो-म्हेमी: राजपूताणियां छां, म्हे ऊँचियां चढ़स्यां, ग्रर नीचे लकड़ियां-रो भूगो करो, ज्यूं-ज्यूं थे काम ग्रास्यो त्यूं-त्यूं म्हे कूद-कूद पड़स्या।

पछे ग्रर गढ़ मिळियो ग्रर काम ग्रावण लागा तदै राजपूताणियां ग्राग माहै पड़ी।"

वात-साहित्य में लोक-जीवन की वास्तविक भांकी :—

वात-साहित्य में जन-जीवन-का जितना सच्चा ग्रौर स्वाभाविक वर्णन मिलता है उतना ग्रन्यत्र नहीं। सच तो यह है कि यदि किसी समाज का वास्तविक चित्र देखना हो तो उसके लोक-साहित्य का ग्रध्ययन करना चाहिए। ग्रौर चूंकि वातें लोक-साहित्य का ही एक ग्रंग हैं ग्रतएव इनमें उस समय के समाज की प्रत्येक दशा का वर्णन हमें प्राप्त होता है। इसी कारण इन में जो वर्णन ग्राये हैं वे सत्य से दूर नहीं हैं। इतिहास, ख्याति ग्रादि बड़ी-बड़ी पोथियों में लड़ाई, झगड़ों ग्रौर संघर्षों का विस्तृत वर्णन भले ही मिल जाये परन्तु समाज के यथा तथ्य चित्रण के लिए लोक साहित्य का ग्रनुसंधान वाछनीय ही नहीं ग्रानवार्य भी है। इन वातों में मनुष्य के रहन-सहन, ग्राचार-विचार, खान-पान ग्रौर रीतिरिवाज का सच्चा चित्र देखने को मिलता है। समाज का जो भी चित्रण इनमें ग्राया है वह उच्च एवं शिष्ट है।

ग्रन्त में श्री कोमल कोठारी ने ग्रपने निबन्ध 'कथा की बात' में वात साहित्य में उपलब्ध लोक-जीवन के विषय में जो कहा है उसे देकर ग्रध्याय समाप्त करते हैं :—

"यदि हम इन कथाग्रों के द्वारा उस समय के समाज को परखना चाहें तो पर्याप्त सामग्री मिल सकती है। उनका रहन-सहन खान-पान, खेल कूद, वेश-भूषा, मकान, महल, यात्रा के तरीके व रास्ते, युद्ध की सामग्री, राजाग्रों के पारस्परिक एवं बादशाहों के संबंध, ग्राम ग्रादमी का साधारण जीवन, सुकाल ग्रौर दुष्काल की समस्यायें देश वर्णन, पुरुष का स्वामित्व ग्रौर स्त्री का समर्पण, सामाजिक सबंध, पति-पत्नी, सास बहू, पिता-पुत्र के संबंध, मुगल राज्य की हकीकत, राजपूतों का मुसलमानों से सबंध, राजनीतिक चक्रव्यूह ग्रादि-ग्रादि जीवन के ग्रनेक प्रसंगों का विवरण इन कथाग्रों में मिलता है। परन्तु वे सभी प्रसंग तो मनुष्य के बाह्य-जीवन से सम्बन्धित हैं। उसका ग्रन्तर ग्रात्मा 'मन' तो उसकी ग्रनुभूतियों, विचारों, ग्राकांक्षाग्रों ग्रौर कार्यकलापों से ही जाना जा सकता है। राजस्थान का उत्तर-मध्यकालीन ग्रौसत मनुष्य सहज

ही वीरत्व और गौरव की उद्दीप्त भावना पर मर मिटने वाला सहज व्यक्ति था। वह अपने देश पर, अपनी मातृभूमि पर न्यौछावर होना जानता था, अपने मित्रों के लिए सभी कुछ करने को तत्पर था। अपनी बात का पक्का था, दृढ़ निश्चयी था, अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में जीवन की बाजी लगाना उसके बांए हाथ का काम था, धर्मभीरू था, अंध-विश्वासों का भार उसके कंधे पर था, ईश्वर और समाज के विधान को ज्यों का त्यों स्वीकार करता था। स्वामिभक्त रहना जानता था, नीतिवान था, समय पड़ने पर अपनी शक्ति और बुद्धि का निश्चित ही प्रयोग करता था, जीवन को जीना जानता था, कोई न कोई लक्ष्य उसके सामने था—जीवन के कार्यक्रम की मोटी रेखा उसके सामने स्पष्ट थी। अपने व्रत, उत्सव, त्यौहारों में वह मस्त रहता था और अन्त में वह मनुष्य के अविरल विकास का सहायक बनना चाहता था। यह सभी तथ्य इन्हीं कथाओं से उद्घाटित होते हैं। × × × × × हम उस समय से बहुत आगे निकल चुके हैं। इसलिए उस सामाजिक मनुष्य से हम कहीं अधिक उमर वाले हो चुके हैं, अतः बहुत हद तक उनकी कलापूर्ण क्रीड़ाओं को 'वात्सल्य भाव' से भी देखना आवश्यक है।[1]

१ "राजस्थानी वार्ता" सं श्री नारायण सिंह भाटी (परम्परा—भाग १-७) पृ० २६५-२६६।

अध्याय / 8

राजस्थानी वातों में अभिप्राय

मानव के परम्परागत मौखिक साहित्य में हमारी लोक कथाओं का स्थान बड़ा ही महत्वपूर्ण एवं सम्माननीय है। प्रत्येक देश की लोक-कथाएँ उस देश विशेष की सामाजिक और आर्थिक दशाओं, उनकी विचारधारा तथा वहां के सांस्कृतिक ढांचे का प्रतिबिंब है। ये कथाएँ जहां की भी होती हैं, हमें वहां के लोगों को समझने में हमारी सहायता करती हैं।

पाश्चात्य विद्वानों ने लोक कथाओं का वैज्ञानिक अध्ययन करके उनके अभिप्रायों का स्पष्टीकरण किया है। फलस्वरूप नृतत्व शास्त्र (arthropology) का सुन्दर रूप में विशदीकरण हुआ और मनुष्य तथा समाज के प्रति प्राचीन इतिहास पर काफी प्रकाश पड़ा। इससे लोक साहित्य की महिमा स्थिर हुई एवं अनुसन्धानकर्ताओं को प्रबल प्रेरणा प्राप्त हुई। सभी देशों में इस क्षेत्र में काफी काम हुआ और मानव जाति की एकता के कल्याणकारी मंत्र को प्रबल समर्थन मिला। यह लोक साहित्य का गौरव है।

अभिप्राय से तात्पर्य :—

लोक-कथाएं चूंकि हमारे जन-जीवन से सम्बन्धित होती हैं अतएव उनमें लोक सम्बन्धित स्थितियां, वातावरण, रीतिरिवाजों, परम्पराओं, धारणाओं आदि का वर्णन मिलता है। लोक कथाएं चाहे वह राजस्थान के लोक जीवन से सम्बन्धित हो, चाहे भारत के किसी भी प्रान्त के लोक जीवन से सम्बद्ध हो या विदेशी लोक जीवन से सम्बन्धित हो उनमें रीति, परम्पराएं और धारणायें अधिकतर मूल रूप में समान पायी जाती हैं—और इन रीतियों, परम्पराओं

और धारणाओं को कथा में सामने लाने वाला शब्द जब बार-बार प्रयुक्त होता है तो वह रूढ़ि बन जाता है और फिर कथाकार अपनी कथा को बढ़ाने के लिए अथवा उसमें चमत्कार उत्पन्न करने के लिए इन रूढ़ियों—अभिप्रायों—को प्रयुक्त करता रहता है ।

अस्तु, "अभिप्राय उस शब्द अथवा एक सांचे में ढले हुए उस विचार को कहते हैं जो समान परिस्थितियों में अथवा समान मनःस्थिति और प्रभाव उत्पन्न करने के लिए किसी एक कृति अथवा एक ही जाति की विभिन्न कृतियों में बार-बार आता है। [1]

स्टिथ टामसन के अनुसार 'अभिप्राय' अथवा 'मोटिफ' वह अंश है जिसमें फोक-लोर के किसी भाग (Item) का विश्लेषण किया जा सके। लोक कथा में डिजाइन के मोटिफ़ होते हैं। लोक संगीत में भी मोटिफ पाये जाते हैं। परन्तु लोक-कथा के क्षेत्र में ही इनका साङ्गोपांग अध्ययन किया गया है।

डा० वासुदेव शरण अग्रवाल के कथनानुसार—"ईंट गारे की सहायता से जैसे भवन बनते हैं, वैसे ही भिन्न-अभिप्रायों की सहायता से कहानियों का रूप सम्पादित होता है।" [2]

कथा में परम्परा-प्राप्त अधिक व्यापक विचारों की प्रायः होने वाली आवृति ने अभिप्रायों को जन्म दिया। बहुत अधिक प्रचलित और अत्यधिक प्रयुक्त होने के कारण ये अभिप्राय रूढ़ि बन गये और उनका प्रयोग यान्त्रिक ढ़ंग से साहित्य में होने लगा।

कथानक रूढ़ि शब्द का प्रयोग हिन्दी में सबसे पहले डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'हिन्दी-साहित्य का आदिकाल' में किया है। ऐतिहासिक चरित काव्यों पर विचार करते हुए उन्होंने लिखा है कि "ऐतिहासिक चरित के लेखक द्वारा सम्भावनाओं पर बल देने का परिणाम यह हुआ है कि हमारे देश के साहित्य में कथानक को गति और घुमाव देने के लिए कुछ ऐसे अभिप्राय दीर्घकाल से,

---

1 Motif :— A word or a pattern of thought which recurs in a similar situation or to evoke a similar mood with in a work or in various works of a genre.

Shiple— Dictionary of World Literature.

२. द्रष्टव्य —"पाषाण नगरी" की भूमिका — डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल।

प्रचलित होते आ रहे हैं जो बहुत थोड़ी दूर तक यथार्थ होते हैं और ... चलकर कथानक रूढ़ि में बदल गये हैं।" [1]

"किसी भी देश की साहित्यिक रूढ़ियों के अध्ययन के लिए उस देश के साहित्य में प्रचलित साहित्य-सम्बन्धी अभिप्रायों (मोटिव्स) का अध्ययन आवश्यक होता है। × × × × × विभिन्न कला रूपों में इसका विभिन्न अर्थों में प्रयोग होता है और प्रत्येक के अपने अलग-अलग अभिप्राय भी होते हैं। कला में अभिप्राय का अर्थ होता है ' कोई चल व अचल, सजीव या निर्जीव, प्राकृतिक अथवा काल्पनिक वस्तु, जिसकी अलकृत एवं अतिरंजित आकृति मुख्यतः सजावट के लिए किसी कला-कृति मे बनाई जाय " संगीत में बार-बार दुहराये जाने वाले शब्दों को भी "अभिप्राय" कहते हैं। उदाहरण के लिए भारतीय लोक गीतों में बार बार आने वाले 'सोने का गडुआ और गंगा जल पानी' एक प्रकार का अभिप्राय है।" [2]

काव्य सम्बन्धी अभिप्राय :—

साहित्य के क्षेत्र में अनुकरण तथा अत्यधिक प्रयोग के कारण प्रत्येक देश के साहित्य में कुछ साहित्य सम्बन्धी रूढ़ियाँ बन जाती हैं और उनका यान्त्रिक ढंग से साहित्य में प्रयोग होने लगता है। इन सभी रूढ़ियों को विद्वानों ने साहित्यिक अभिप्राय (लिटरेरी-मोटिव्स) के नाम से अभिहित किया है। कला में अभिप्राय कोई काल्पनिक अथवा वास्तविक वस्तु होती है जिसका यों ही अलङ्कृति मात्रा के लिए प्रयोग होता है, उदाहरणार्थ किसी स्त्री का चित्र बनाकर उसके हाथ में एक कमल दे देना भारतीय चित्रकला का एक प्रचलित अभिप्राय है, किन्तु काव्य में अभिप्राय मुख्य रूप से उस परम्परागत विचार को कहते हैं जो अलौकिक अशास्त्रीय होते हुए भी उपयोगिता और अनुकरण के कारण कवियों द्वारा गृहीत होता है और बाद में चलकर रूढ़ि बन जाता है। इसके साथ-ही-साथ एक दूसरे प्रकार के 'अभिप्राय' भी प्रत्येक देश के साहित्य में प्रचलित होते हैं, इन्हें विद्वानों ने वर्णनात्मक अभिप्राय कहा है।

कथा सम्बन्धी अभिप्राय :—

शोध के मतानुसार जिस प्रकार परम्परा प्राप्त अलौकिक विचारों ने अनेक काव्य-सम्बन्धी अभिप्रायों को उत्पन्न किया, उसी प्रकार कथाओं में इनसे कुछ

---

१ हिन्दी साहित्य का आदिकाल—डॉ॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ॰ ७४।
२ पृथ्वीराज रासो की कथानक रूढ़ियाँ—ब्रजविलास श्रीवास्तव, पृ॰ ११,१०।

अधिक व्यापक विचारों की प्रायः होने वाली आवृत्ति ने भारतीय काल्पनिक कहानियों ने अनेक अभिप्रायों को जन्म दिया। 'परकाय प्रवेश' 'पशु पक्षियों की बातचीत' 'किसी बाह्य वस्तु में प्राणका बसना' आदि ऐसे ही अभिप्राय हैं"।[1] इनका उपयोग मुख्य रूप से कथा को आगे बढ़ाने तथा दूसरी दशा में मोड़ने के लिए ही किया जाता है। बहुत अधिक प्रचलित और रूढ़ हो जाने पर अलंकृति मात्र के लिए भी इनका प्रयोग होने लगा है। उदाहरण के लिए स्त्री की दोहद कामना अर्थात् गर्भवती स्त्री की इच्छा–स्त्री के जीवन की साधारण और परिचित घटना है, किन्तु कहानी कहने वाले के हाथ में पड़कर यही घटना अद्भुत रूप धारण कर लेती है। पति इस विषय में बहुत सतर्क रहता है और वह पत्नी की दोहद कामना को पूर्ण करना अपना कर्तव्य समझता है। इसी 'दोहद' का कहानीकारों ने 'अभिप्राय' के रूप में उपयोग किया है जिससे उन्हें अतिरंजित घटनाओं को लाने तथा कहानी को आगे बढ़ाने और चमत्कार उत्पन्न करने का मौका मिल जाता है। जैन कथाकारों का तो यह एक अत्यन्त प्रिय अभिप्राय' है। शायद ही कोई ऐसा जैन कहानीकार हो जिसने किसी अर्हत अथवा चक्रवर्तिन की उत्पत्ति के पूर्व उनकी माता द्वारा उत्तम और पवित्र कार्य करने की दोहद-कामना न व्यक्त करवाई हो।

टाइप और अभिप्राय :—

सभी देशों की लोक कथाओं के अध्ययन के उपरान्त विद्वानों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि इस (टाइप) प्रकार की कहानियां कुछ निश्चित अभिप्रायों के आधार पर निर्मित होती हैं और उन्हें सरलता से कुछ प्रकारों (टाइप्स) में बांटा जा सकता है। शिप्ले के शब्दों में 'मोटिफ' और 'टाइप' की धारणा ने इस दिशा में किये जाने वाले खोज-कार्य को बहुत आगे बढ़ाया है। 'अभिप्राय' छोटे से छोटा और पहचानने में आने वाला तत्व होता है और उसके उपयोग से अपने आप में पूर्ण एक कहानी तैयार हो जाती है। तुलनात्मक अध्ययन के लिए अभिप्रायों का महत्व इस बात का पता लगाने में है कि किसी विशेष प्रकार की कहानी के कौन-कौन से उपकरण दूसरे प्रकार की कहानियों में प्रयुक्त हुए हैं। 'टाइप' के अध्ययन से यह पता चलता है कि किस प्रकार कथा-सम्बन्धी अभिप्राय रूढ़ि बन जाते हैं और एक ही साथ अनेक अभिप्राय

१ 'ए हिस्टरी ऑव संस्कृत लिटरेचर'—कीथ-पृ० ३४३।

रूढ़ि के रूप में प्रयुक्त होने लगते हैं।"[1]

अभिप्रायों की श्रेणियां :—

कथा-सम्बन्धी अभिप्रायों को मुख्यतया दो रूप में बांटा जा सकता है :—

१. कुछ 'अभिप्राय' ऐसे लोक-विश्वास एवं जन-मान्य विचार पर आधारित होते हैं जिन को वैज्ञानिक दृष्टि से सत्य नहीं कहा जा सकता। 'परकाय प्रवेश' 'सत्य क्रिया' 'लिंग परिवर्तन' आदि ऐसे ही अभिप्राय हैं। लोक-कथाओं में ही अधिकतर इनका प्रयोग हुआ है और इन्हीं के कारण साहित्य में भी इनका प्रयोग किया गया है।

२. इनके अलावा कुछ ऐसे अभिप्राय होते हैं जिन्हें बिल्कुल सच्चा नहीं कहा जा सकता किन्तु उन्हें झूठा भी नहीं कहा जा सकता—अस्तु यथार्थ से थोड़ा बहुत सम्बन्ध इनका अवश्य होता है। 'किसी विशाल पक्षी की पूंछ पर बैठ कर सैर करना' 'देवदूत श्वेत केश' 'भाई बहिन का ब्याह' 'स्वप्न में भावी नायिका के दर्शन' आदि ऐसे ही अभिप्राय हैं। कल्पना किये गये ऐसे अभिप्राय अनुकरण तथा अत्यधिक प्रयोग के कारण रूढ़ि बन गये हैं।

कथानक और अभिप्राय :—

उपरोक्त विवेचन स्पष्ट कर देता है कि कथानक रूढ़ि के अध्ययन का अर्थ कथा में बार बार प्रयुक्त होने वाले ऐसे अभिप्रायों का अध्ययन करना है जो किसी छोटी घटना अथवा विचार के रूप में कथा के निर्माण और उसे आगे बढ़ाने में योग देने वाले तत्व होते हैं।[2] श्री पेन्ज़र के शब्दों में, "As I have already stated in the introduction, it is the incident in a story which forms the real guide to its history and migration. The plot is

---

1. Research has been fostered by recognition of two complementry concepts 'type' and 'Motif'. The 'Motif' is the smallest recognisable element that goes to make up a complete story. Its importance for comparative study is to show what material of a particular type is common to other types. The importance of the type is to show the way in [illegible] otifs form into conventional clusters.
Shiple—Dictionary of W[illegible] पृ०, २१

२. 'पृथ्वीराज रासो में कथानक [illegible]

of little consequenc being abbreviated or embroidered according to the environment of its fresh surroundings." 1

अभिप्रायों के विभिन्न प्रकार :—

कथानक रूढ़ियों अथवा अभिप्रायों का अध्ययन प्रत्यक्ष रूप से प्राचीन पौराणिक और लोक-प्रचलित कथाओं से है, जिनका अध्ययन तुलनात्मक पुराणशास्त्र और नृतत्त्वशास्त्र के अंतर्गत किया जाता है। जितनी भी कथानक रूढ़ियां एवं जितने अभिप्राय प्रयुक्त हुए हैं वे प्रधानतया दो प्रकार के हैं— (१) लोक-विश्वास पर आधारित (२) कवि-कल्पित। प्रथम प्रकार के अभिप्राय शिष्ट समाज में भी गृहीत किये गये हैं किन्तु मुख्य रूप से पौराणिक कथाओं, लोक-कथाओं आदि में ही होते हैं। दूसरे प्रकार के अभिप्राय केवल कवि या लेखक द्वारा रचित कथाओं में उनकी कल्पना से उद्भूत होते हैं। अधिक प्रचलित हो जाने पर इन अभिप्रायों को लेखक अपनी रचना में बार-बार प्रयुक्त करता रहता है। लोक-विश्वास पर आधारित अभिप्रायों को हम निम्न प्रकार में प्रयुक्त हुए देखते हैं :—

१. सम्भावना अथवा कल्पना पर आधारित।
२. अलौकिक या अमानवीय शक्तियों से सम्बन्धित।
३. अतिमानवीय और अतिरंजनायुक्त मानवीय शक्ति से सम्बन्धित।
४ आध्यात्मिक और मनोवैज्ञानिक।
५. संयोग और भाग्य से सम्बन्धित।
६. शरीर वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित।
७. विवेक और बुद्धि से सम्बन्धित।
८. सामाजिक संगठन और रीति-रिवाजों से सम्बन्धित।

१. सम्भावना या कल्पना पर आधारित रूढ़ियां—

मानव पैदा हुआ—उसमें सोचने समझने की शक्ति भी धीरे धीरे उत्पन्न हुई। उसने प्रकृति से संघर्ष किया और यथार्थ एवं वास्तविकता छोड़ कर कल्पना लोक में विहार करना सीखा। अतः इस कल्पना की भूमि की पृष्ठभूमि भी वास्तविकता ही थी। उसने जड़-वस्तुओं में चेतना की, पशु-पक्षियों में मानवीय प्रवृत्तियों की और प्राकृतिक शक्तियों में देवत्व की कल्पना की। इसके साथ उसने अपना ईश्वर से सम्बन्ध स्थापित कर लिया इसके कारण उसके पौराणिक विश्वास

1. Ocean of Story, vol. I.—Penzer—Page, No 21

धन या राज्य प्राप्ति का सुचक शकुन है, किसी दुर्घटना के सूचक अपशकुन जैसे अपने आप सिर का हिलना, नाखून का उखड़ना आदि। दैवी दुर्घटना सूचक अपशकुन-आकाश से खून की वर्षा, पृथ्वी का हिलना आदि, कक्ष-विशेष में प्रवेश का निषेध, दिशा या स्थान-विशेष में जाने का निषेध, राक्षस, भूत द्वारा पीछा किये जाने पर पीछे देखने का निषेध, किसी वरद-वस्तु को छूने का निषेध, आदि ।

८. सामाजिक सगठन और रीतिरिवाजों से संबधित अभिप्राय:—किसी देश या जाति के सामाजिक विकास के इतिहास के साथ मिलकर वहाँ के साहित्य मे प्रचलित कथानक–रूढ़ियों का अध्ययन करने पर उनके विकास काल का अथवा दूसरी जातियों में उनके ग्रहण किये जाने के काल का पता चल सकता है और साथ ही इससे समाज के विकास के इतिहास की सामग्री भी मिल सकती है। सांकेतिक भाषा या गूढ़ सकेत का अभिप्राय इसी समय अवश्य ही प्रयुक्त होता था जब एक राजा कई रानियां रखता था तथा परिचारिकाओं, ऋषि-कन्याओं से ब्याह कर लेता था। ये अभिप्राय हैं :–व्याघ्रकारी, मनादी फेरना और किसी के द्वारा ढ़ोल पकड़ लेना और राजा के पास पहुंचाया जाना, शिवि-अभिप्राय अर्थात् परिहितार्थ बलिदान, स्वामिभक्त सेवक या सम्बन्धी जैसे पुत्र आदि मानव बलिदान, किसी नीच जाति की स्त्री से प्रेम, सभोग और विवाह, गूढ़ विज्ञान या सांकेतिक भाषा, परनारी-सहोदर नाई और कुम्हार सम्बन्धी अनुश्रुतियां, कुलटा स्त्री का पति को धोखा देना, मिर्च और कुतिया (परीक्षा), नायक का औदार्य, गणिका द्वारा दरिद्र नायक को स्वीकार करना और अपनी मां का तिरस्कार करना, दुष्ट साधु या रोगी का वर्णन और अन्त में उनका पराभाव, घास खाकर दीनता प्रकट करना और प्राण रक्षा करना। आदि।

इस प्रकार उपरोक्त जो मनुष्य जीवन से सम्बन्धित सामाजिक, धार्मिक, राज-नीतिक, आर्थिक, लौकिक, अलौकिक, शकुन, अपशकुन, वैज्ञानिक शरीर सम्बन्धी जिन अभिप्रायों का प्रकार बताया गया है वह कोई अन्तिम रूप से ही अभिप्रायों का प्रकार नहीं है। जिस प्रकार से उपरोक्त विभाजन किया गया है वैसे अन्य दूसरे प्रकार से भी विषयों के अनुसार अथवा किसी अन्य प्रणाली द्वारा अभिप्राय के प्रकारों को निश्चित किया जा सकता है। सभी प्रकारों का लिखना है भी असम्भव क्योंकि एक एक अभिप्राय [illegible] ओं का सम्बन्ध होता है। उपरोक्त जो अभिप्रायों के प्रकार का [illegible] श्री बदरिदास

यौवास्तव के वर्गीकरण के

३. किसी वाह्य-वस्तु में प्राण का बसना (हमारी अनेकों भूत प्रेत, डाकनी, शाकनी की कथाओं में इसका प्रयोग हुआ है,) ४. किसी विशाल पक्षी की पूँछ पर बैठकर यात्रा करना, ५. स्वप्न में भावी नायिका का दर्शन, उजाड नगर का मिलना, ७. समुद्र यात्रा के समय जलपोत का टूटना या डूबना और काष्ठफलक के सहारे नायक-नायिका की जीवन रक्षा। ८. असम्भव (Impossible Motif) ९. करके दिखाओ (Show me how ?) १० प्रति ध्वनि शब्द ११. उपश्रवण १२. जानवरों की बोली समझना १३. ऐसे जानवर जो जमीन में गड़ा धन बतादे १४. नटो तो कहो मत (The danger of keeping a secret and Danger of revealing it) १५. नायक का नर देह छोड कर पत्थर का बन जाना १६. नायक का शरीर त्याग कर सांप बन जाना, १७. कुत्ते की स्वामी भक्ति १८. एक ही साथ हंसना और रोना १९. बोलने वाली गुफा या चट्टान २०. स्त्री की दोहद कामना २१. प्रस्तर-मूर्तियो का जीवित हो जाना २२. राजा द्वारा असम्भव एव कठिन कार्य की सिद्धि के उपहार-स्वरूप आधा राज्य और राजकुमारी देने की घोषणा २३. उलटी शिक्षा का घोड़ा जब रुकना चाहिए तो भाग खड़ा होगा और जब भागने की कोशिश की जाती है तो रुक जाता है— जैन कथाओं मे इस 'अभिप्राय' का अधिक व्यवहार देखने को मिलता है २४. यज्ञ, तपस्या अथवा फलादि से सन्तानोत्पत्ति। २५. शिव अभिप्राय (अर्थात्-दूसरे की रक्षा के लिए अपने शरीर का मांस देना) २६. शुभ अथवा अशुभ शकुन २७. आत्म-हत्या करने की धमकी (प्राय: चिता मे जलकर या खाना पीना छोड़कर) २८. संसार में ऐसा कोई स्थान नहीं जो न दीखता हो २९. अमृत फल लाने वाला शुक ३०. भाग्य-परिवर्तन आदि आदि।

ऊपर तो थोड़े ही 'अभिप्रायों' पर प्रकाश डाला गया है। आज अभिप्रायों का तुलनात्मक अध्ययन एक मोटे तौर पर हो रहा है। वैसे प्रत्येक अभिप्राय को व्यक्त करना तो स्थानाभाव के कारण मुश्किल है यहाँ केवल दो अभिप्रायों को ही खुलासा रूप में बताया जाता है—

लोक-कथाओं में 'प्रेमियों की दुर्गति'—एक अभिप्राय —

किसी भी स्त्री को उसकी इच्छा के विरुद्ध-प्राप्त करने की इच्छा के विरुद्ध रखने वाले प्रेमियों को उस स्त्री द्वारा दुर्गति—इस प्रकार के अभिप्राय या मोटिफ का उपयोग हमें भारतीय कथा-साहित्य एवं विदेशी कथा- में

भोर वही चियड़ा पहनने के लिए दिया भौर उसके शरीर पर वही तेल भौर कस्तुरी मिश्रित काजळ भौर तेल यह कहकर लगाया कि यह अत्यन्त सुन्दर लेप है। इसी बीच रात्रि के दूसरे प्रहर में राजपुरोहित भी पधारे। पुरोहित के भाने पर कुमार-सचिव से कहा गया कि उपाकोशा के पति के मित्र भाये हैं, भतः भाप सन्दूक के भन्दर छिप जाईये। तदनुसार कुमार सचिव सन्दूक में बैठ गए भौर बाहर ताला लगा दिया गया। यही चाल भन्य दो प्रेमियों के साथ की गयी। प्रातःकाल सन्दूक राजा के पास ले जाया गया - उसे वहीं राजदरबार में खोला गया। राजा ने उपाकोशा के सतीत्व की प्रशंसा की भौर उन सभी व्यक्तियों को राज्य से निष्कासित कर दिया।

इसी प्रकार के 'अभिप्राय' की एक लोक कथा हम यहां प्रस्तुत कर रहे हैं। इस लोक कथा का नाम है 'खालसो' --

"कहीं एक साहूकार रहता था। उसके एक ही पुत्र था। वह बड़ा ही धर्मात्मा था। गरीबों को दान देना, गौ-ब्राह्मणों की सेवा करना, भनाथ-लूले-लगड़ों की सहायता करना-बस यही दिन भर का उसका कार्यक्रम था। साहूकार को यह सब कुछ अच्छा नहीं लगता था। यह मेरा लड़का व्यर्थ मे ही मेरी गाढ़े पसीने की कमाई को खराब कर रहा है। एक दिन साहूकार ने भपने लड़के को काफी कुध डांटा-फटकारा भौर भन्त में उसे घर से बाहर निकाल दिया।

भपने पिता की भाज्ञा शिरोधार्य किये, उसे भंतिम नमस्कार करते हुए-उसके पैर छू कर भपनी पत्नी सहित साहूकार का पुत्र भपने नगर से हमेशा के लिए निकल पड़ा। चलते-चलते कई दिनों के बाद वह एक राजा की नगरी में भान पहुंचा। राजा ने बात-चीत द्वारा ईमानदार एवं योग्य व्यक्ति समझकर इसे भपनी सेवा में रख लिया। इस प्रकार यह साहूकार का पुत्र भपने बिछे के दिन राजा के यहां रह कर काटने लगा।

इस साहूकार की पत्नी बड़ी ही सुन्दर थी—[illegible] वह इन्द्र की भप्सरा रंभा को भी लज्जित करने वाली [illegible] खवासण (नाईन) थोक [illegible] थी। उसने जो साहू- [illegible] भौर जा कहा भपने पति [illegible] भत करने के लिए आज्ञा समय पाकर एक दिन उसने [illegible] पत्नी तो बहुत ही सुन्दर है-

साहूकार की स्त्री को कौन सा स्नान करना था—उसे तो राजा को चकमा देना था। वह एक बालटी का पानी दूसरी में, दूसरी का पहली में उडेलने लगी-इस प्रकार स्नान का बहाना बनाये वह घन्टों स्नानघर में बैठी रही—तब तक साहूकार भी वापिस लौट आया ।

अभी साहूकार ने घर में पैर रखा ही था कि साहूकार की स्त्री राजा के पास भागती हुई आयी। उसने जाते ही राजा से डरे हुए स्वर में कहा, सरकार मैं तो अवश्य ही आपकी इच्छा पूर्ण करती किन्तु खेद है कि मेरे पतिदेव घर लौट आये हैं। अब तो आपको कहीं छिपकर ही बैठना होगा नहीं तो आप की इज्जत सुरक्षित न रह सकेगी। यह कहकर उसने राजा को एक पीतल की नांद में छिप जाने का इशारा किया और स्वयं अपने पति के पास भाग चली। राजा फौरन अपने बचाव के लिए उसमें कूद पड़ा।

राजा को यह देखकर बड़ी हैरानी हुई कि उसके सारे शरीर से खांड की चाशनी चिपक गयी है। यह नांद खांड की चाशनी से लबालब भरा हुआ था। राजा अब अपने कृत कार्य पर पश्चाताप कर रहा था। इसी बीच दासी वहां आन उपस्थित हुई। उसने आते ही एक श्वांस में कहा, सरकार-जल्दी करें, इस पासवाले उनके कमरे में आप छिप जायें। हमारे सेठ यहां इस ओर [illegible] हैं। बेचारा राजा करता भी तो क्या—वह बड़ी कठिनाई से भागकर [illegible] ऊन के गोदाम में जा छिपा। उसके चारों तरफ अब ऊन चिपक गयी, [illegible] वनमानुष की तरह लगने लगा। अभी राजा अपनी इस दशा पर [illegible] ही रहा था कि वह निगोड़ी दासी फिर [illegible] दुःख के [illegible] रहे हैं—[illegible]
हमारे मालिक अब इस ऊन के [illegible] के [illegible]
अच्छा रहेगा कि आप इस [illegible]
पिंजरे में बैठ गया। दासी ने [illegible]
मोटा सा ताला लगा [illegible]
को खालसा पकड़ कर [illegible]
फेंका। रातभर [illegible]

सुबह होते [illegible]

विचित्र जानवर को देखने आयी। सभी आश्चर्य में पड़ गये ऐसे विचित्र जानवर को देखकर बच्चों ने कौतूहलवश होकर उस पर ढेले कंकर-पत्थर मारने शुरू किये—राजा घायल हो गया। अन्त में वह रो पड़ा और फिर जब मालूम हुआ की ये राजा साहब हैं तो उन्हें अन्दर लेजाया गया। वे नहाये कपड़े पहिने और राजदरबार में उपस्थित हुए। आम दरबार में उन्होंने साहूकार और उसकी पत्नी से क्षमा याचना की और साहूकार की स्त्री को अपनी धर्म की पुत्री कहकर उसे खूब धन-दौलत दी।

उपर्युक्त उदाहरण से 'प्रेमियों की दुर्गति' नामक अभिप्राय स्पष्ट हो गया है। इस अभिप्राय से सम्बन्ध रखने वाली कथाएं विश्व भर के सभी देशों में उपलब्ध हैं। हिन्दू कथाओं में इस अभिप्राय को लेकर अनेक कथाओं का निर्माण हुआ है।

इसी प्रकार का एक और राजस्थानी लोक कथाओं का अभिप्राय 'भाई बहिन का ब्याह' को उदाहरण स्वरूप यहा देते हैं—

ससार में सर्वप्रथम प्रकृति ने स्त्री और पुरुष ही पैदा किये थे। प्रकृति की ओर से रिश्ते-नाते, सम्बन्ध स्थापित नहीं किये गये थे। उस समय का समाज भी इतना विकसित नही था। अतएव भाई बहिन का ब्याह होता था। बाद में जब परम्पराएं, रीति-रिवाज आदि का निर्माण हुआ तब शादी दूसरे की लड़की से होने लगी। किन्तु अभी कुछ ऐसी जातियां एवं समाज है जहां सगे बहन-भाई का तो नहीं पर मासी, चाचा आदि की लड़की बहिन से शादी हो सकती है। मुसलमान समाज में सगी बहिन को छोड़कर किसी से भी शादी कर सकते हैं।

इसी प्रकार का अभिप्राय या मोटिफ का उपयोग जहां हम भारतीय साहित्य में देखते हैं वहा विदेशी लोक-कथाओं में इसी अभिप्राय की अनेक कथाएं पाती हैं। इसे अंग्रेजी में 'ब्रदरम् एण्ड सिस्टर्स' नामक अभिप्राय की संज्ञा दी गयी है। वेरियर इलविन ने इसी अभिप्राय' पर आधारित अपने Folk tales of Maha bo shal: संग्रह में दी है। इस कहानी का नाम The Tale of Balo Sundri. है।

'In a certain village, there lived an old man and his wife. They had seven sons and one daughter. When they grew up, all seven boys got wives and married but the girl remained

unmarried. Her name was Balo Sundri One day, the eldest brother said, 'I am going to marry Balo Sundri myself'. But when she heard this, she was angry and ran away from the house

Balo Sundri went and lived on the shore of the greatocean, and made herself a boat. When it was ready she set in it and went out to the middle of the ocean Soon the family heard that she had gone into the middle of the sea, and the old parents with their seven sons hurried down to the shore. Standing there, on the edge of the water, the old man and his wife sang.

'Come back, come back, O Balo Sundri !
The-has come for your marriage.
Even now they are calling it.
Even now they are making the crown for your head
Soon it will wither if you do not come.
Even now they are building the booth for your marriages
Soon it will fall if you do not come.
Even now the marriage pa'ty is on the way.
Soon it will return if you do not come
Come back, come back, O Balo Sundri
'But from her boat in the middle of the ocean the girl sang in reply'
'Once you were my true father and mother.
But now you are my father-in-law and mother-in-law.
O boat sink into the sea, sink quickly, boat !'
Then came the six brothers with their wives. Two and two they stood by the shore of the green ocean and sang.

'Come back, come back, O 'Balo Sundri !'
Just as their parents had sang, so they sang also. But the girl Balosundri replied,

O Brothers and sisters-in-law !
Once you were my true brothers.
Once you were my true sister-in-law.

Now you are my husband's younger brothers.
Now you are my husband's younger brother's wives.
May Jaora-baora see your faces !
O 'boat sink down into the sea, O boat sink quickly.' Last of all, the eldest brother came with his wife and standing on the shore, he sang,

Come back, come back, O Balo Sundri !'
But the girl sang
O my eldest brother,
Once you were my true eldest brother.
Now you are my true husband.
My Jaora baora see your face !
O boat sink quickly in the sea.

As she sang these words, and they stood on the sea shore watching, they saw the boat sink slowly. So Balo Sundri was drowned. And the old parents, with the eldest brother and his wife and the other six sons and their wives went weeping from the shore back to their home '?

इसी प्रकार की एक राजस्थानी लोक-कथा हम यहां नीचे प्रस्तुत

"चंवरा रा रूंख ऊंचोई चढ़ जावे"

कथा बहुत पुरानी है। किसी गांव में एक बनिया रहता था।
थे। एक लड़का और एक लड़की। लड़के का नाम था रामू
नाम था रामी। रामू के सिर के बाल चांदी के थे और रामी के
सोने के। समय पाकर लड़की रामी बड़ी हुई। सयानी हुई तो
उसकी शादी की सूझी। और जब इधर-उधर, चारों ओर घूम
उपरान्त कहीं भी योग्य वर रामी के लिए न मिला, तो बनिये को
सूझी पड़ी। अपनी पत्नी को अकेले में धीरे से समझाते हुए बनिये ने
कितना सुन्दर हो यदि हम रामी का विवाह रामू के साथ ही करदें।
अपने लड़के का विवाह अपनी ही—लड़की के साथ। भाई बहन का भी
विवाह हो सकता है। विस्मय के साथ उसकी पत्नी ने अपने पति से
बनिये ने कहा, देख पगली, तुम समझ नहीं सकी मुझे। यह मैं भी
हूं-भाई और बहिन का ब्याह एक साथ नहीं हो सकता पर तुम्हें

ही ज्ञात नहीं यदि यह लड़की किसी गैर के घर चली गई तो यह सोने के बाल, फिर हाथ नहीं आयेंगे ।

माया अभिभूत हो बनिये की पत्नी इस सुझाव पर राजी हो गया । और यथा शीघ्र ही बहिन भाई की शादी की तैयारी होने लगी ।

अपने ही भाई के साथ अपनी शादी की बात को सुनकर वह दुःखी हो जंगल में चली गई । अपने साथ रामी एक पानी से भरा लोटा और चूरमा ले चली । चलते-चलते उसे एक चन्दन का पेड़ मिला उस पर वह चढ़ बैठी ।

विवाह की बेला निकट देखकर और घर मे रामी को न पाकर माँ-बाप को चिंता हो चली । उसके पिता उसको ढूंढ़ते उसी जंगल में आ पहुँचे. देखा रामी ऊँची पेड़ पर बैठी हुई है । पिता ने कहा बेटी नीचे उत्तर आओ-विवाह का शुभ मुहूर्त टला जा रहा है—रामी ने उत्तर दिया—

पैला कैवतो काको जी, अब सुसरों कोंकर केऊँरे ।
चदन रा रूख ऊँचो ही चढ़ जावैं ।

और उन्हीं शब्दों के साथ चन्दन का पेड़ ऊपर आकाश की ओर और बढ़ चला—वह पहले से भी अधिक ऊंचा हो चला । उसके उपरान्त रामी को ढूंढ़ते ढूंढ़ते जंगल में ठीक उसी स्थान पर उसकी मां भी आ पहुंची । देखा रामी को पेड़ पर चढ़ी हुई तो उन्हीं शब्दों के साथ नीचे उत्तर आने को कहने लगी ।

बाई जी, बाई जी ढोल ढमाका बाजै है, फैरों वेळा टलै रही—

रामी ने कहा—पैला कैवती माताजी,
अबे सासू कोंकर कऊरे,
चन्दण रा रूख ऊंचो हो चढ़ जावै,

उसी प्रकार घर भर के सारे व्यक्ति रामी को घर में न पाकर उसे ढूंढ़ते चले और यहां पहुंचे । रामी ने सभी को इसी प्रकार से उत्तर दिया । हर उत्तर के बाद चदन का पेड़ ऊंचा हो चढ़ता गया ।

सबसे अन्त में रामू अपनी बहिन को ढूंढते-ढूंढते इसी जंगल में इसी स्थान पर आ पहुँचा और देखा सारे घर के व्यक्ति रामी को पेड़ से उतरने के लिए कह रहे हैं । पर रामी नीचे नहीं उत्तर रही है । फिर रामू ने अपनी बहिन को जोर की आवाज में उसी प्रकार कहा—इस पर रामी ने उत्तर दिया—

पैसा कँवरी बोरोजी,
मरतार कॉकर मऊरे,
चंदण रा कंस ऊंचोई चढ जायें।

राघू को यह सुनकर बड़ा ही दुःख हुआ कहीं भारतीय संस्कृति में ऐसा भी हो पाया है। उसने अपनी बहिन से कहा मुझे भी ऊपर बुला लो। और दोनों बहिन-भाई आकाश मार्ग द्वारा स्वर्ग की ओर चले गए।

इस प्रकार उपरोक्त दोनों कथाओं का 'अभिप्राय' यही है कि पहले भाई-बहिन की शादी हुआ करती थी किन्तु धीरे धीरे मनुष्य समाज विकसित होता गया—यह प्रथा समाप्त होती गयी। आज भी यह प्रथा उस रूप में न रहकर एक दूसरे रूप में कि सगी बहिन-से शादी न हो—रह गयी है। मुसलमान समाज इसका जीता-जागता उदाहरण है।

ब्लूमफील्ड, बेनिफी, रानी, डब्लूनामंन ब्राउन पेंजर, वेरियर आदि के अतिरिक्त अन्य यूरोपीय तथा भारतीय विद्वानों ने भी इस दिशा में कार्य किया है। कीथ ने अपने।' संस्कृत साहित्य का इतिहास' में यूरोपीय तथा भारतीय कहानियों में प्रयुक्त होने वाले कुछ अभिप्रायों पर तुलनात्मक दृष्टि से विचार किया है।

हिन्दी में सबसे पहले डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'हिन्दी साहित्यकार आदि-काल' में इस ओर भारतीय विद्वानों का ध्यान आकर्षित किया। इन दिनों राजस्थान में डॉ० श्री कन्हैयालाल सहल एवं श्रीमनोहर शर्मा एम० ए० लोक कथाओं में अभिप्रायों से लेकर उनका तुलनात्मक अध्ययन कर रहे हैं। डॉ० श्री कन्हैया लाल सहल की इसी विषय की एक पुस्तक 'नटो तो कहो मत' सः अभिप्रायों को लेकर अभी प्रकाशित हुई है। अभिप्रायों के तुलनात्मक अध्ययन पर यह पुस्तक बड़ा अच्छा प्रकाश डालती है। इसके अतिरिक्त डा० साहब के समय-समय पर पत्रिकाओं में प्रकाशित होने वाले लोक कथाओं में प्रयुक्त 'अभिप्राय' भी अभिप्रायों के तुलनात्मक अध्ययन पर अच्छा प्रकाश डालते हैं।

अध्याय/९

उपसंहार

राजस्थानी वात-साहित्य पर एक दृष्टि

राजस्थानी वात-साहित्य के विभिन्न पहलुओं पर गत पृष्ठों में संक्षिप्त रूप से विवेचन करने का प्रयास किया गया है। वात-साहित्य के उद्भव, विकास एवं विभिन्न अंगों—(कथातत्व, चरित्र-चित्रण, वातावरण, भाषा, शैली आदि) की विशेषताओं, भाषा निर्माण में उसका महत्वपूर्ण योग एवं उसकी सामाजिक उपादेयता पर सविस्तार विचार करने की मेरी आकांक्षा रही है। राजस्थानी जीवन और उसकी संस्कृति की झांकी वात-साहित्य में सुस्पष्ट-तौर से देखने को मिलती है। जो भी व्यक्ति राजस्थान की संस्कृति और सामाजिक जीवन से परिचित है उसे यह बात समझने में तनिक भी कठिनाई नहीं होगी कि राजस्थान का वात-साहित्य यहां की संस्कृति से कितना निकट सम्बन्ध स्थापित किये हुए है। सूर्य की रोशनी समाज और व्यक्ति के मन के गहरे अंधेरे में पहुंची या नहीं पहुंची यह कह नहीं सकते; किन्तु वातों की उज्ज्वल किरणों ने अवश्य समाज और व्यक्ति के अन्तर को प्रकाशवान बनाया है।

राजस्थान में वातों का विपुल भंडार है। विभिन्न भाषाओं के हस्तलिखित ग्रन्थालयों में वातों के अनेक संग्रह विद्यमान हैं। इनमें से अधिकांश अप्रकाशित ही हैं और इन्हें प्रकाश में लाना अत्यन्त आवश्यक है। अब तक वातों की जो सामग्री प्रकाशित हो गई है वह इतनी कम है कि उसे नहीं के बराबर ही गिना

जा सकता है। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में राजस्थानी-विद्वानों द्वारा ये वातें समय-समय पर प्रकाशित हुई हैं और होती जा रही हैं। इसके अतिरिक्त 'राजस्थान विश्व विद्यापीठ, उदयपुर की साहित्य-संस्थान' और रानी लक्ष्मी कुमारी चूडावत ने जो वातों के सग्रह प्रकाशित करवाये हैं वे निम्नलिखित हैं:—

१. राजस्थानी वातां भाग —१ संपादक श्री नरोत्तमदास स्वामी
२ राजस्थानी वातां भाग -२ सपादक श्री भवानी शंकर उपाध्याय
३ ,, ,, ,, ,, —३ ,, श्री सौभाग्यसिंह शेखावत
४. ,, ,, ,, ,, —४ ,, श्री सौभाग्यसिंह शेखावत
५. ,, ,, ,, ,, -५ ,, श्री सौभाग्यसिंह शेखावत एवं श्री मोहनलाल व्यास
६. कै रे चकवा वात रानी लक्ष्मीकुमारी चूडावत
७. गिर ऊंचा-ऊंचा गढ़ां रानी लक्ष्मीकुमारी चूडावत
८ राजस्थानी साहित्य संग्रह भाग—१ सं० श्री नरोत्तमदास स्वामी
९ राजस्थानी वातां— स्व० श्री सूर्यकरण पारीक

इन सग्रहों के अलावा 'भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान, बीकानेर' और 'शार्दूल रिसर्च इन्स्टीट्यूट' भी वातों के सग्रह प्रकाशित करवा रही है।

इन सग्रहों के अलावा जिन राजस्थानी लेखकों ने विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में राजस्थानी वातों को अपनी भाषा में लिखकर प्रकाशित करवाया है उसमें सम्भव है उसकी (वात की) आत्मा रही हो पर उसका शरीर बदल गया है उसकी भाषा बदल डाली है। इतना सब होते हुए भी यह प्रकाशित सामग्री सूर्य के समक्ष दीपक जलाने के बराबर है।

राजस्थान का वात साहित्य आज भी जन-साधारण के कंठों में ही जीवित है—अतः उसके मूल्यांकन की दिशा में मेरा वात साहित्य पर लिखा गया यह निबन्ध केवल भूमिका के रूप में ही देखा जा सकता है। सम्पूर्ण साहित्य के मूल्यांकन का तो प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता उसके विस्तार को छू पाना भी अब तक संभव नहीं हो पाया है। इस क्षेत्र में यदि कोई वस्तु परमावश्यक हो सकती है तो वह है लोक-मुख पर बहती हुई वात-साहित्य की इस धारा को लिपिबद्ध करने का कार्य। यह कार्य जितना शीघ्र सम्पन्न हो उतना ही श्रेष्ठ होगा क्योंकि मेरी यह मान्यता है कि समय के साथ 'वातों' की इस मौखिक-परम्परा के नष्ट हो जाने का भय है। आज युग बदल गया है युग के साथ-साथ

समस्यायें भी बदल गयी हैं, जीवन का स्वरूप बदल गया है, मनोरंजन के साधन भी बदल गये हैं किन्तु राजस्थानी वार्तों की मनोरंजकता ग्राज भी उसी रूप में विद्यमान है। ग्राज जिन विषम परिस्थितियों में से व्यक्ति गुजर रहा है उसके लिए यह संभव नहीं कि वह फुर्सत के साथ बैठकर इस परम्परा को जीवित रख सके। यह अतिशयोक्ति न होगी यदि कहा जाय कि जीवन-यापन ग्रौर सामाजिक-ग्रसुरक्षा ने मनुष्य को ग्राज इतना झकझोर दिया है कि इन्हें सुलझाने में वह स्पूतनिक की तरह घूम रहा है। उसकी रागात्मक प्रवृतियां यदि समाप्त नहीं हुई है तो वे इतनी दब गई हैं ग्रौर उसके कार्य-कलापों से इतनी दूर चली गई हैं कि यदि इस दिशा में ठोस प्रयास नहीं किये गये तो उसमें छिपे हुए साहित्य-स्रष्टा ग्रौर सहृदय पाठक को क्षति ग्रवश्यभावी है। यह प्रश्न मूल रूप से स्वतन्त्र एवं स्वतन्त्र समस्या प्रस्तुत करता है किन्तु जहां तक प्रस्तुत विषय से इसका संबंध है इतना मानना पड़ेगा कि यदि इस दिशा में सतत प्रयत्न नहीं किये गये तो मौखिक-साहित्य के—जिसमें वात-साहित्य प्रमुख है, नष्ट होने की पूरी सम्भावना है ग्रौर हो सकता है कि वह एक दिन मोहेन्जोदाड़ो की ईंट बन जाए कि जिसे पुनः खोदकर निकाल लाना बहुत महंगा पड़ेगा। ग्रतः साहित्य सेवियों ग्रौर रसिक पाठकों के सम्मिलित प्रयास द्वारा वात साहित्य को लिपिबद्ध करने की दिशा में ग्रविलंब प्रयत्न किए जाने चाहिए।

वात साहित्य के महत्व के सम्बन्ध में यहां एक बात ग्रौर भी उल्लेखनीय है कि यहां का वात-साहित्य केवल जन जीवन की झांकी मात्र ही नहीं है ग्रपितु वार्तों ने इतिहास की टूटी हुई लड़ियों को जोड़ने ग्रौर उनके ग्रज्ञात व्यक्तियों ग्रौर घटनाग्रों से परिचय पाने में महान योगदान दिया है। राजस्थान के इतिहास के रिक्त स्थानों की पूर्ति की सामग्री यदि कहीं प्रचुर मात्रा में मिल सकती है तो वह वात-साहित्य में। ऐतिहासिक वार्तों के सम्बन्ध में पिछले पृष्ठों में विवेचन किया जा चुका है फिर भी इस सन्दर्भ में यह कहना उचित होगा कि ऐतिहासिक वार्तों में जहां राजा-महाराजा, जागीरदार–वीर, सेनापति, युद्ध, हार जीत, ग्रादि के वर्णन मिलते हैं वहां इन्हीं वार्तों में धरती की कहानी कही गयी है; जन-जीवन से सम्बन्ध रखने वाली ग्रन्यान्य घटनाग्रों का उल्लेख इन में मिलता है। यदि इतिहास राजा-रानी की कहानी के ग्रतिरिक्त ग्रौर भी कुछ हो सकता है तो इतिहास के उस ग्रंश की सामग्री इन वार्तों में मिलेगी। ग्राज जब भारत ग्रपना स्वतन्त्र इतिहास लिख रहा है—वह इतिहास जिसमें

राजा और शहंशाहों की कहानी न होकर जनता और समाज की कहानी होगी वहां इन वातों का महत्व और भी बढ़ जाता है। राजस्थानी "वातों के विभिन्न प्रकार और अनेक विषय हैं। कथा साहित्य की भिन्न-भिन्न शैलियों के उत्तम नमूने वे प्रस्तुत करते हैं। और लोक जीवन की झांकी के दिग्दर्शन तो कराती ही हैं।" १

आज हम अपनी प्राचीन संस्कृति और साहित्य को फिर से जांचने लगे हैं। यह युग का प्रभाव है और यह एक शुभ लक्षण है। अपने सांस्कृतिक और साहित्यिक गौरव को समझने के लिए राजस्थान का वात-साहित्य भी कम महत्वपूर्ण नहीं। इसमें जिस समाज का चित्रण है वह स्वस्थ एवं सदाचारी है; जिस नीति की प्रतिष्ठा की गई है वह कल्याण मार्ग की ओर ले जाने वाली है, वह मंगलमय पथ की प्रदर्शिका है, जिस धर्म का वर्णन किया गया है वह संसार में शान्ति तथा प्रेम का उपदेश देता है, जिस आर्थिक संगठन का उल्लेख हुआ है वह पीड़ित तथा दलित मानवता के शोषण पर अवलम्बित नहीं है, जिस राजनीति का दिग्दर्शन कराया गया है वह दलीय-संघर्ष और विषाक्त वातावरण से कोसों दूर है। धर्म, समाज और नीति का यह मनोरम चित्रण इस साहित्य की महत्ता में चार चांद लगा देता है। जनता के द्वारा रचा गया जनता के जीवन से सम्बन्ध रखने वाला यह राजस्थानी वात-साहित्य जनता की ही सम्पत्ति है।

इस निबन्ध को समाप्त करते हुए मैं पुनः यही निवेदन करूंगा कि इन वातों के प्रकाशन और अध्ययन की ओर किया गया हर प्रयत्न इन्हें जीवित रखने की दिशा में एक ठोस कदम होगा और उसका समुचित स्वागत होगा ऐसी मेरी धारणा है।

---

१. राजस्थानी भाषा और साहित्य—डा० हीरा लाल—पृष्ठ—१६६.

परिशिष्ट / १

सहायक-पुस्तकें

मुद्रित

१. कहानी दर्शन .... भालचन्द्र गोस्वामी

२. हिन्दी कहानियों की शिल्प-विधि का विकास .... डा० लक्ष्मीनारायण लाल

३. कहानी और कहानीकार .... मोहनलाल जिज्ञासु

४. मांझल रात .... लक्ष्मीकुमारी चूंडावत

५. कह न चकवा बात .... लक्ष्मीकुमारी चूंडावत

. ऊंचा ऊंचा गढ़ां .... लक्ष्मीकुमारी चूंडावत

७. राजस्थानी के गद्य साहित्य का इतिहास और विकास ....डा० शिवस्वरूप शर्मा 'अचल'

८. राजस्थानी कहावतें एक अध्ययन .... डा० कन्हैयालाल सहल

९. राजस्थानी साहित्य की रूपरेखा ... . मोतीलाल मेनारिया

१०. राजस्थानी भाषा और साहित्य .... मोतीलाल मेनारिया

११. राजस्थान साहित्य परम्परा और प्रगति डा० नरनारसिंह 'मनुज'

१२. राजस्थान के सांस्कृतिक उपाख्यान .... डा० कन्हैयालाल सहल

१३. राजस्थान के ऐतिहासिक प्रवाद .. .... डा० कन्हैयालाल सहल

१४. चोबोली सं० कन्हैयालाल सहल एवं पतराम गौड़

१५. कहो तो नटो मन .... डा० कन्हैयालाल सहल
१६. राजस्थानी वार्ता-भाग १ ....नरोत्तमदास स्वामी एम० ए०
१७. ,, ,, ,, -२ .... भवानी शंकर उपाध्याय
१८. ,, ,, ,, -३ . .... सौभाग्यसिंह शेखावत
१९. , ,, , -४ ... .. सौभाग्यसिंह शेखावत
२०. ,, ,, ,, -५ सौभाग्यसिंह शेखावत एवं मोहनलाल व्यास
२१. लोक-साहित्य की भूमिका ... .. डा० कृष्णदेव उपाध्याय
२२. राजस्थानी साहित्य-संग्रह-भाग-१ .... सं०कर्ता-पं० नरोत्तमदास स्वामी एम० ए०
२३. हिन्दी कहानी और कहानीकार .. .. डा० वासुदेव एम० ए०
२४. हिन्दी कहानी और कहानीकार ... ... वासुदेव शरण अग्रवाल
२५. संस्कृत साहित्य .... ---- बलदेव प्रसाद उपाध्याय
२६. राजस्थानी भाषा और साहित्य ... . डा० हीरालाल
२७. राजस्थानी वार्ता .... सूर्यकरण पारीक

हस्तलिखित

अनूप संस्कृत पुस्तकालय, राजस्थानी-विभाग

फुटकर वार्ता-प्रति संख्या—२०५, २०६, २०७, २०८, २०९, २१०, २११, २१२, २१३, २१४, २१५, २१६, २१७, २१८, २१९, २२०, २२१, २२२, २२३, २२४.

परिशिष्ट / २

वातों की सूची

ऐतिहासिक वातें

१ राव अमरसिंघ री
२ नापै सांखलै री
३ लाखै जाम री
४ कुंवर रामदेव जी री
५ गोगै जी री
६ गोगै जी री जनम री विगत
७ नागोर रै मामलै री
८ करणीसिंघ जी रै कवरा री
९ सेखावा रा धणी राव सूजा री
१० वीदोजी री
११ मुरताण देवड़े री
१२ जैसे सरवहिये री
१३ कैंवाट री
१४ बीहल चरजग हमीर री
१५ पहुकरण पाउन सांखली
१६ राव मंडलीक री
१७ काले बारे रा
१८ पतायतन देवड़े री

१९ हरदास मोकळोतरी
२० वीरमदे दूदावत री
२१ गगेव नींबावत खीचो री बे-पोहरो
२२ खींवं वोजं धाड़वी री
२३ रायधण भाट री
२४ रामसिंह खीवावत री
२५ ठाकुर सो जैत सो होतरी
२६ जैतं हमीराय री
२७ रावळ मालणमेण री
२८ राणगदे लखणसीपोत री
२९ नाराइणदास मीड़ाखो री
३० सोनगरं मालदे री
३१ राजा मोम री
३२ मयणो चारणी री
३३ पीरोज साह पतिसाह री
३४ रण हमीर सखे जाम री
३५ रिणधीर चूंडावत री
३६ हाहुल हमीर री
३७ रायसिंह खीवावत री
३८ कुंवर सी सांखले री
३९ गोड़ गोपाळदास री
४० सागण वाहड़ री
४१ राघव दे सोळंकी री
४२ नाथिम छावड़ा री
४३ धवळ खीची री
४४ सोळंकी राज वीज री
४५ धुधियार दे री
४६ रावल मालु सेन बीरमदे सोनगरैरी
४७ रिणमल वाहड़िये री
४८ धांधल पवार री
४९ रिणमल महमद री

५० रिणधवळ री
५१ वीसळदे मेहवचै री
५२ कुंवरियै जंपाळरी
५३ दूदै जोधावत री
५४ वडै राव री वात
५५ मलावदी री उतपत री
५६ पृथ्वीराज री
५७ पृथ्वीराज सूहवदे री
५८ जगदेव पंवार री
५९ रामदास वैरावत री बातड़ियां
६० राव रिणमल री
६१ रिणमल चूंडावत मखै सोळंकी री
६२ रिणमल मखै सांखलै री वैर लियो जै री
६३ जैतमल सलखावत कोढ़िया री
६४ जै तोहै छांड़ावत री
६५ रावचूंडावत री
६६ रिणधीर चूंडावत री
६७ जगमाल मालावत री
६८ कांधळोत खेतसी री
६९ मलीनाथ री
७० राणी रतनसी राव सुरिजमल री
७१ रावै खेतै री
७२ सूरिजमल कुंवर पृथ्वीराज री
७३ बीकै जी री
७४ राव लूणकरण री
७५ ऊमादे भटियाणी री
७६ गुंदपा री
७७ कछवाहां री
७८ मोहिलां री
७९ भाटियां री
८० हाडां री

८१ खीचियां री
८२ वघड़ावतां री
८३ सोनिगरां री
८४ बूंदी री
८५ जेसळमेर री
८६ मारवाड़ री
८७ वीरमजी री
८८ राव चूंडे जी री
८९ गोगादे जी री
९० अरड़ कमल चूंडावत री
९१ राव रिणमल जी री
९२ रावळ जगमाल जी री
९३ राव जोधै जी री
९४ राव बीकै जी री
९५ भटनेर री
९६ राव बीकै जी री बात बीकानेर बसायो तै समय
९७ कांधळ जी री बात
९८ राव नीडै री बात
९९ पताई रावळ री
१०० राव सलखै री
१०१ गढ़ मंडिया तै री
१०२ गोगादे वीरमदेवोत री
१०३ खेतसी रतनसीयोत री
१०४ पाबूजी री
१०५ राव गोगै वीरमदे री
१०६ हरदास ऊहड़ री
१०७ नरै सूजावत सींधे पोकरणै री
१०८ जैमल वीरमदेवयोत राव मालदे री
१०९ सोढ़ै सींधळ री
११० नरबद सतावत री
१११ मेतराम वरदाई सेनोत री

१२ चन्द्रावतां री
१३ ऊदै उगवणावत री
१४ दूदै भोज री
१५ खामखान्यां री
१६ दोलताबाद रै उमरावां री
१७ संगमराव राठोड़ री
१८ दहियां री
१९ देवड़ां री
१२० भायलां री
१२१ चहुवाणां री
१२२ खीचियां री
१२३ पणहलवाड़ा पाटण री
१२४ सोळंकियां पाटण पायां री
१२५ जाड़ेचा लाखा सोळंकी मूलराज री
१२६ रुद्रमाळो प्रासाद करायां तिण री
१२७ राव सोहारी
१२८ कान्हड़दे री
१२९ मगुणा समुसल्ल री
१३० महमद गजनी री
१३१ प्रतापसिंघ मोहणकमसिंघ री
१३२ जैतसी उदावत री

धार्मिक, नैतिक, श्रृंगारिक, तथा काल्पनिक वातें

१. राजा भोज, माघ पंडित नै डोकरी री बात
२. दिन मानवै जन री
३. पन्ना दरियावरी
४. सुगन बावनी री
५. नाई कर रह्या है री
६. राजा भोज माघवै डोकरी

३८. महिंदर गीसळोत री
३९. ढोला मारू री
४०. क्वार मूग्लां री
४१. खींवै बीजै री
४२. देवरै नायक री
४३. रतना हमीर री
४४. बींझै सोरठ री
४५. रावळदे सांवलैरी
४६. चंदण मळयागिर री
४७. चंदकुंवर री
४८. रिसालू राजा री
४९. जलाल गाहुणी री
५०. राजा रै कवर री
५१. जोगराज चारण री
५२. बींझै पहीर री
५३. पाहुवा री
५४. तमाइची पतसाह री
५५. दत्तात्रेय चौईस गुरु करया तैरी
५६. बीजड़ विजोगण री
५७. फोफाणंद री
५८. सातै फुनाणी री
५९ साहूकार री
६०. असमा ओढणी री
६१. कबीर री बैर री
६२. बिणजारै बिणजारी री
६३. सोमदनो री
६४. राजान राउत री बात वणाव (१६२) दुहा
६५. कुमार मदर री बात
६६. बींमा बोमो री
६७. मायदो मांगदसो री
६८. घमा हाबो री

६९. पातसाह मोजदीन महताब री
७०. ससिपना पातिसाहजादी री
७१. मामगङ्कै री
७२. कंवर फूलवन्ती री
७३. दरजी मयारामरी
७४. मधुमालती वारता
७५. माटी जसडा मुसहारी
७६. मेनळगिड बराह डावळ री

(सूची अपूर्ण)

फुटकर वातां[1]

१. राजन्दे सांवलं री वात
२ बींझै सोरठ री वात
३. रतना हमीर री बात
४. साईं कर रह्यो तैरी वात
५. सुराय बावली री
६. हिनमान रै फत री
७. तुंवरां री वात
८. राठौड़ मोहैजी ने मात यान बीरी
९ राव सुरताण देवड़ै री
१०. ×
११. पद्मवाडी री
१२ पोंढिया री
१३ ×
१४. मङ्गण्य मातन सोमरी
१५. राव मण्डलीक री

१ प्राचीन राजस्थानी वातां (भाग १) सं. नरोत्तमदास स्वामी एम० ए० भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान बीकानेर

६५. ×
९६. कूंगरै बलोच री वात
९७. ×
९८ मूर घर सतवादियाँ री वात
९९. से १२२ ×
१२३. जगदे पवार री वात
१२४ से १३६ ×
१३७. राजा भोज खाफरै चोर री वात
१३८ से १४६ ×
१४७ गोरे बादळ री वात
१४८ से

राणी चौबोली री वात
मासा री वात
मोणा री वात
ऊमादे भटियाणी री वात
पाबूजी री वात
ढोला मारु री वात
डोकरी री वात
राजा भोज री चार वातां
ब्रह्मचरित्र री वात
पंच सहेली री वात
सूरजमल हाडै री वात

वात खेत सी कांधलोत री गोगादे वीरमोत री वैरसन मीमोत री. नरवर री, बीकाजी री, खेतसी कामलोत री कछवाहां १. कघवाहां री २. कवस खांखले ने मरमल री जेसळमेर री, पर्म घोरंधार री, राव केल्हण राव मलीनाथ पंथ में आयो ते री, पाहू भाटियाँ री, लाखे फूलाणी री छाहड़ पावर री, राजा बीज री, प्रिथीराज चौहाण और मूहव री, सिगे री, डूंगर जसकोत री, तमाइयो पातिसाह री ।